इग्नू
जन–जन का
विश्वविद्यालय

BSOC-131

समाजशास्त्र का परिचय

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इग्नू
जन–जन का
विश्वविद्यालय

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

विशेषज्ञ समिति

प्रो. जे . के. पुंडीर
समाजशास्त्र विभाग
सी. सी. एस विश्वविद्यालय, मेरठ

प्रो. शरत भौमिक
टीआईएसएस, मुंबई

प्रो. एस. रॉय
एनबीयू,दार्जिलिंग, पश्चिम बंगाल

प्रो. रोमा चटर्जी
समाजशास्त्र विभाग
दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स
न्यू दिल्ली

प्रो. सव्यसाची
समाजशास्त्र विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया
न्यू दिल्ली

डॉ. अभिजीत कुंडु
श्री वेंकटेश्वर कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रो. देबल के. सिंहरॉय
समाजशास्त्र संकाय
इग्नू , नई दिल्ली

प्रो. नीता माथुर
समाजशास्त्र संकाय, इग्नू, न्यू दिल्ली

डॉ अर्चना सिंह
समाजशास्त्र संकाय, इग्नू, न्यू दिल्ली

डॉ किरणमयी भुशी
समाजशास्त्र संकाय, इग्नू, दिल्ली

डॉ रबीन्द्र कुमार
समाजशास्त्र संकाय, इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. आर. वाशुम
समाजशास्त्र संकाय, न्यू दिल्ली

पाठ्यक्रम तैयार करने वाली टीम

खंड और इकाई		इकाई लेखक	अनुवादक
खंड 1	**समाजशास्त्र की प्रकृति और क्षेत्र**		
इकाई 1	समाजशास्त्र और समाजिक मानव विज्ञान का उद्भव	डॉ. आर. वाशुम, इग्नू और अनुशा बत्रा, शोध छात्रा, इग्नू	आरती अनुपम
खंड 2	**समाजशास्त्र का अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंध**		
इकाई 2	समाजशास्त्र का मानव विज्ञान के साथ संबंध	डॉ. आर.वाशुम, इग्नू	डॉ. राजेश कुमार माँझी
इकाई 3	समाजशास्त्र का मनोविज्ञान से संबंध	डॉ. राजश्री चंचल सहा. प्रो.एयूडी, दिल्ली	एम.पी. कमल
इकाई 4	समाजशास्त्र और इतिहास से संबंध	डॉ. शाहीद, मानू, हैदराबाद	आरती अनुपम
इकाई 5	समाजशास्त्र का अर्थशास्त्र से संबंध	अहमेदुल कबीर, केंद्रीय विश्वविद्यालय, दक्षिण बिहार, गया	एम.पी. कमल
इकाई 6	समाजशास्त्र का राजनीति विज्ञान से संबंध	डॉ. शाहिद, मानू, हैदराबाद	डॉ राजेश कुमार मॉझी
खंड 3	**बुनियादी अवधारणाएँ**		
इकाई 7	संस्कृति और समाज	रोमा रानू दाश शोधार्थी,जे.एन.यू	एम.पी. कमल
इकाई 8	सामाजिक समूह और समुदाय	रुक्मिणी दत्ता शोधार्थी, इग्नू	राजेन्द्र पांडे
इकाई 9	संगठन और संस्थाएँ	स्मृति सिंह, स्वतंत्र विदुषी	राजेन्द्र पांडे
इकाई 10	प्रस्थिति और भूमिका	श्रीति गांगुली शोधार्थी, जे. एन. यू	शर्मिष्ठा घोषल
इकाई 11	सामाजीकरण	बियंका डाव शोधार्थी ,जे.एन.यू	एम.पी.कमल
इकाई 12	संरचना और प्रकार्य	प्रो. (से.नि) विनय कुमार श्रीवास्तव,दि.वि	राजेन्द्र पांडे
इकाई 13	सामाजिक नियंत्रण और परिवर्तन	डॉ. आर वाशुम, इग्नू और शुस्वी के, परामर्शदाता,न्यूपा	राजेन्द्र पांडे

पाठ्यक्रम संयोजक : डॉ. आर. वाशुम, समाजशास्त्र संकाय, इग्नू

प्रधान संपादक : प्रोफेसर (से.नि.) शुभद्रा चन्ना, मानव विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय और डॉ. आर. वाशुम, समाजशास्त्र संकाय, इग्नू, नई दिल्ली

संपादक (विषयवस्तु, प्रारूप और भाषा) : डॉ. आर. वाशुम, समाजशास्त्र संकाय, इग्नू

अकादमिक परामर्शदाता : डॉ. विनोद कुमार यादव

कवर डिजाइन : डॉ. जुचामो यॉथान और ए.डी.ए. ग्राफिक्स

सामग्री निर्माण

श्री तिलक राज
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)
एमपीडीडी, इग्नू, नई दिल्ली

श्री यशपाल
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)
एमपीडीडी, इग्नू, नई दिल्ली

अगस्त, 2019

ISBN : 978-93-89499-10-0

© इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2019

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कृति का कोई भी अंश, मिमियोग्राफ या किसी भी अन्य रूप में, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी अन्य व्यक्ति द्वारा पुनरुत्पादित नहीं किया जा सकता है।

इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से कुलसचिव, एमपीडीडी, इग्नू द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेजर टाइप सेटिंग : टेसा मीडिया एण्ड कम्प्यूटर, C-206, A.F.Enclave-II, नई दिल्ली

मुद्रक : एस० जी० प्रिण्ट पैक्स प्रा० लि०, एफ-478, सेक्टर-63, नोएडा 201301, उ०प्र०

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

विषय सूची

			पृष्ठ संख्या
खंड	**1**	**समाजशास्त्र : अनुशासन और परिप्रेक्ष्य**	**7**
इकाई	1	समाजशास्त्र और सामाजिक मानव विज्ञान का उद्‌भव	9
खंड	**2**	**समाजशास्त्र का अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंध**	**23**
इकाई	2	समाजशास्त्र का मानव विज्ञान के साथ संबंध	25
इकाई	3	समाजशास्त्र का मनोविज्ञान से संबंध	38
इकाई	4	समाजशास्त्र और इतिहास का संबंध	52
इकाई	5	समाजशास्त्र का अर्थशास्त्र से संबंध	64
इकाई	6	समाजशास्त्र का राजनीति विज्ञान से संबंध	77
खंड	**3**	**बुनियादी अवधारणाएँ**	**89**
इकाई	7	संस्कृति और समाज	91
इकाई	8	सामाजिक समूह और समुदाय	109
इकाई	9	संगठन और संस्थाएँ	124
इकाई	10	प्रस्थिति और भूमिका	138
इकाई	11	सामाजीकरण	152
इकाई	12	संरचना और प्रकार्य	165
इकाई	13	सामाजिक नियंत्रण और परिवर्तन	178
सहायक पुस्तकें			**192**
शब्दकोष			**195**

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड 1

समाजशास्त्र की प्रकृति और क्षेत्र

पाठ्यक्रम परिचय

पाठ्यक्रम का जोर विविध प्रशिक्षण और क्षमताओं से छात्रों को अनुशासन का परिचय देना है। इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य छात्रों को समाजशास्त्रीय तरीके से सोचने से परिचित कराना है। यह समाज विज्ञान के अन्य संबंधित विषयों के साथ समाजशास्त्र के संबंध, और समाजशास्त्र की मूल अवधारणाओं और सरोकार से परिचित कराने का आधार प्रदान करता है।

इस पाठ्यक्रम में तीन खंड और तेरह इकाइयाँ (अध्याय) हैं। सबसे पहला "समाजशास्त्रः अनुशासन और परिप्रेक्ष्य" शीर्षक खंड समाजशास्त्र और सामाजिक मानव विज्ञान के रूप में अन्तः संबंधित अनुशासन के उद्भव को भी अवस्थित करता है लेकिन उन्हें विशिष्ट अनुशासन के रूप मे भी स्थापित करता है।

खंड 2 जिसका शीर्षक है "समाजशास्त्र और अन्य सामाजिक विज्ञान"समाजशास्त्र के अन्य संबंधित विषयों के साथ समाजशास्त्र के संबंधों पर चर्चा करता है,विशेष रूप से, मानव विज्ञान, मनोविज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र औरराजनीति विज्ञान के साथ। इसकी पाँच इकाइयाँ हैं। "बुनियादी अवधारणाओं" शीर्षक के तहत खंड 3 समाजशास्त्र में प्रयुक्त कुछ मूल अवधारणाओं की व्याख्या करता है। उनमें शामिल है "संस्कृति और समाज "," सामाजिक समूह और समुदाय "," संघ और संस्थाएँ ","प्रस्थिति और भूमिका", "समाजीकरण", "संरचना और कार्य", और "सामाजिक नियंत्रण और परिवर्तन "।

पाठ को समझने और सीखने की मदद के लिए, इकाइयों की व्यवस्था क्रमिक खंड के तहत विषयवार की गई है। प्रत्येक खंड के अंतर्गत इकाइयाँ भी हैं जो शिक्षार्थी की सहायता के लिए संरचित की गई हैं । हर इकाई "संरचना" से शुरू होती है और उसके बाद "उद्देश्य", "परिचय", मुख्य सामग्री,सारांश और "संदर्भ" आता है । इसे आकर्षक बनाने के लिए, अभ्यास को जहाँ भी आवश्यक हो "अपनी प्रगति की जाँच करें" के रूप मे डाला गया है। यह अभ्यास परीक्षा के दृष्टिकोण से प्रतिदर्श प्रश्नों के रूप में भी उपयोगी हो सकता है। इकाइयों की बेहतर समझ के लिए अन्य महत्वपूर्ण घटक "सहायक पुस्तकें" और "शब्दावली" हैं जो पाठ्यक्रम के अंत में संलग्न हैं ।

इकाई 1 समाजशास्त्र और सामाजिक मानवविज्ञान का उद्‌भव*

संरचना

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 समाजशास्त्र का उद्‌भव

1.2.1 ज्ञानोदय काल

1.2.2 वैज्ञानिक क्रांति

1.3 सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों ने 19वीं शताब्दी के यूरोपीय समाज को प्रभावित किया

1.3.1 फ्रांस की क्रांति

1.3.2 औद्योगिक क्रांति

1.4 समाजशास्त्र के सिद्धांत का उदय

1.5 सामाजिक मानव विज्ञान का उद्‌भव

1.5.1 विकास का पहला चरण

1.5.2 विकास का दूसरा चरण

1.6 आधुनिक सामाजिक मानवशास्त्र का उद्‌भव

1.7 सामाजिक मानव विज्ञान के प्रणेता

1.8 सारांश

1.9 संदर्भ

1.0 उद्देश्य

यह इकाई विद्धार्थी को निम्न समझाने मे सहायता करेगी :

- समाजशास्त्र का उद्‌भव;
- समाजशास्त्र के उद्‌भव के कारक;
- सामाजिक सिद्धांतों का उदय;
- सामाजिक मानवविज्ञान का उद्‌भव;
- सामाजिक मानवविज्ञान के विकास के चरण;
- सामाजिक मानवविज्ञान के प्रणेता; तथा
- आधुनिक सामाजिक मानव विज्ञान का उद्‌भव।

*डॉ. आर. वाशुम, समाजशास्त्र संकाय, एस.ओ.एस.एस., इग्नू और अनुशा बत्रा, शोध छात्रा, इग्नू

1.1 प्रस्तावना

समाजशास्त्र और सामाजिक मानव विज्ञान कई पहलुओं से आपस में गहरा संबंध रखते है। वास्तव में सामाजिक मानव विज्ञान समाज शास्त्र का सबसे निकटवर्ती विषय है। कभी कभी अन्वेषण और पद्धति के कुछ क्षेत्रों में सामाजिक मानव विज्ञान को समाजशास्त्र से पृथक कर पाना कठिन होता है। यहाँ तक के सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत दोनों ही विषय अपेक्षाकृत नवीन है समानताएं होने के बावजूद भी समाजशास्त्र और सामाजिक मानव विज्ञान के उद्‌भव के विविध ऐतिहासिक आधार है। हालांकि ऐसा कहा जाता है कि सामाजिक मानव विज्ञान समाजशास्त्र से कुछ ही समय पहले प्रकाश में आया, प्रारंभ में इन दो अनुशासनों के विषयगत मामलों के बीच अंतर करना बहुत ही कठिन था। सामाजिक मानव विज्ञान का उद्‌भव (या जहाँ तक इस विषय का संबंध है। भौतिक मानव विज्ञान सहित 'एकीकृत मानव विज्ञान') अधिक जटिल है, जबकि समाजशास्त्र के उद्‌भव को खोजना अपेक्षाकृत सरल है। दोनों ही अनुशासन कई शताब्दियों पुराने हैं; हालांकि, दोनों ही 19वीं शताब्दी में शैक्षिक विषय के रूप में उभरे। जैसे जैसे हम इस इकाई में आगे बढ़ेंगे तो हम दोनों विषयों के उद्‌भव के विभिन्न ऐतिहासिक विकास को जान सकेंगे।

1.2 समाज शास्त्र का उद्‌भव

सामाजिक विज्ञान के शैक्षणिक विषय के एक रूप में समाजशास्त्र के उद्‌भव को समझने के लिए सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक और वैज्ञानिक कारकों को समझना अनिवार्य है। पश्चिमी यूरोप 18वीं और 19वीं सदी में तीव्र और गंभीर परिवर्तनों का साक्षी रहा है। इसने समाज के प्रति समझ और इसमें व्यक्ति के स्थान के प्रति भी प्रतिमान के परिवर्तन की ओर अग्रसर किया। वैज्ञानिक खोज और वैज्ञानिक पद्धति के संदर्भ में पर्याप्त प्रगति हो रही थी। हालांकि प्राकृतिक विज्ञान अभी भी अपनी आरंभिक स्थिति में है तथापि भौतिक दुनिया के अध्ययन के लिए 'व्यवस्थित' पद्धति का विकास करना प्रारंभ कर चुका है। कोम्ट और दुर्खाइम जैसे शुरुआती समाजशास्त्रियों के मस्तिष्क पर हावी रहने वाला प्रश्न यह था कि मानव सामाजिक दुनिया के अध्ययन के लिए एक समान वैज्ञानिक और व्यवस्थित दृष्टिकोण लागू किया जा सकता है?

वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय प्रगतियों ने पारंपरिक ग्रामीण कृषक समाज को आधुनिक शहरी औद्योगिक समाज में परिवर्तित करने की और अग्रसर किया। जैसा की हम इस इकाई में आगे पढेंगे कि नए आविष्कारों के कारण उत्पादन का स्तर छोटे घरेलु उद्योगों से बड़े पैमाने के कारखाने जैसे उद्धमों में परिवर्तित हो गया है। इस प्रकार के विकास के साथ ही व्यापक सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक परिवर्तन भी हुए जिसका गहरा असर प्रमुख राजनैतिक क्रांतियों सहित पश्चिमी यूरोपीय समाजों पर पड़ा। हालांकि ये व्यापक परिवर्तन ना केवल औद्योगीकरण और आधुनिकीकरण के केंद्र रहे अपितु इन्होंने एक विरोधाभासी स्थिति भी उत्पन्न की। विरोधाभासी इसलिए क्योंकि इसे आशावादी और निराशावादी दोनों ही रूपों में चिन्हित किया गया। भूतपूर्व पारंपरिक समाजों से जीवन के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक पहलुओं के परिवर्तन के कारण इसे आशावादी कहा गया जिसे तर्कसंगत और प्रबुद्ध दर्शन के रूप में देखा गया, विशेष रूप से अंधकार युग में चर्च के शासन के संदर्भ में। फिर भी यह 'आधुनिक' समाज जिसने मानवीय सर्जनशीलता और तर्कसंगतता को बढ़ावा दिया वह अव्यवस्था और अराजकता की सतत स्थिति में था क्योंकि पहले के स्थिर क्रमों को नए द्वारा प्रतिस्थापित किया जा रहा था। समाजशास्त्र, 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हो रहे इन बौधिक और भौतिक/सामाजिक परिवर्तनों की पृष्ठभूमि

में एक विशिष्ट अनुशासन के रूप में उभरा। हम कुछ एक कारकों की चर्चा करेंगे जिसने समाजशास्त्र को एक शैक्षणिक विषय के रूप में उभरने में योगदान दिया।

1.2.1 ज्ञानोदय काल

ज्ञानोदय या 'तर्क का काल' बौधिक विकास का काल था, जो 18वीं शताब्दी में यूरोप में दार्शनिक विचारों में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाया। सामाजिक जीवन से संबंधित कई मौजूदा विचारों और मान्यताओं को परास्त किया और इस अवधि के दौरान विचार की नई धाराओं को प्रतिस्थपित किया। फ्रांसीसी दार्शनिक चार्ल्स मोंटेस्क्यु और जीन जैक्वेस रूसो नई ज्ञानोदय से जुड़े इस दौर के प्रसिद्ध विचारक थे। यह अवधि सामंती यूरोप के तत्कालीन दर्शनों से अलग एक मौलिक परिवर्तन को चिंहित करती है। सामाजिक और नैतिक मान्यताओं को अब पवित्र रूप में धर्म वैधानिक और पुण्य नहीं माना जाता था। व्यक्ति विवेकशील और आलोचनात्मक बनता जा रहा था। शासक के युगों, पुराने पवित्र अधिकार सिद्धांतों को छोड़ दें तो, अब कुछ भी पवित्र नहीं माना जाता था- चर्च से लेकर राज्य और राज्य से लेकर शासक के प्राधिकरण तक, अब कुछ भी त्रुटिरहित नहीं माना जाता था। इस प्रकार के विचारों की जड़ें, इस धारणा के रूप में थी कि प्रकृति और समाज दोनों का अध्ययन अनुभव द्वारा भी किया जा सकता है, कि मनुष्य अनिवार्य रूप से तर्कसंगत है और इस तरह का समाज जो तर्कसंगत सिद्धांतों पर बना है। मनुष्य को उसकी अनंत क्षमताओं का एहसास दिलाएगा, जिसे औद्योगिक और वैज्ञानिक क्रांति के रूप में देखा गया था जो उस अवधि के दौरान दृढ़ता से स्थापित हुई और जो फ्रांस और अमरीकी क्रांति की साक्षी रही।

1.2.2 वैज्ञानिक क्रांति

चोदहवीं से सोलहवीं शताब्दी के नवजागरण काल में यूरोप ने 'वैज्ञानिक क्रांति' को उत्पन्न किया जिसे व्यक्ति और प्रकृति के प्रति एक नए दृष्टिकोण के रूप में चिंहित किया गया। प्राकृतिक वस्तुएं गहन अवलोकन और प्रयोग का विषय बन गईं। इस क्रांति का प्रभाव ना केवल भौतिक जीवन को परिवर्तित करने अपितु प्रकृति और समाज के बारे मे लोगों द्वारा रखे जाने वाले विचारों को भी परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण था। कोपर्निकन क्रांति और पिछले भूकेंद्रित सिद्धांत से सुर्यकेंद्रित सिद्धांत के प्रति आन्दोलन इस वैज्ञानिक क्रांति के कुछ महत्वपूर्ण विकास थे; प्रयोगों के काल के पथप्रदर्शक वैज्ञानिकों जैसे गेलीलियो गैलीलि, जोहांस केप्लर और आइज़ैक न्यूटन जिन्होंने विज्ञान के क्षेत्र में क्रांति का सूत्रपात किया और वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित समाज के विज्ञान का निर्माण करने की समाजशास्त्रियों की बढ़ती इच्छा को बढ़ावा दिया। इसके अलावा, डार्विन के उद्व विकासवादी सिद्धांत ने जन्माधारित बाईबल के सिद्धांत के प्रति एक कट्टरपंथी आलोचना को जन्म दिया। हर्बर्ट स्पेंसर ने डार्विन से पहले विकास की धारणा का सूत्रपात किया था और कॉम्ट जैसे फ्रांसीसी दार्शनिकों ने समाज के विकास का वर्णन किया, लेकिन डार्विन ने मानव के जैविक विकास के वैध प्रमाण प्रदान किये। इन सिद्धांतों ने समाज के विकासवादी सिद्धांत की उन्नति का नेतृत्व किया, जिसमें ना केवल जैविक अपितु समाजों को भी निरंतर निम्न अवस्था से उच्च अवस्था में पनपते और विकसित होते देखा गया। मानव शरीर का विच्छेदन जो कि पुनर्जागरण के बाद किया जाना प्रारंभ हुआ, मानव शरीर की कार्यप्रणाली को बेहतर समझने में लोगों की मदद की। इन सभी बातों ने विकल्पों के पुराने विचारों और सुझावों को चुनौती देने में मुख्य भूमिका निभाई। हालांकि, इन विकल्पों को केवल तभी स्वीकार किया गया जब इन्हें साबित और बार बार सत्यापित किया जा सके, अन्यथा नए समाधान खोजे गए। अतः वैज्ञानिक विधि एक सटीक और उद्देश्यपूर्ण विधि के रूप में मानी जाने लगी।

1.3 सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन जिसने 19वीं शताब्दी के यूरोपीय समाज को प्रभावित किया

1.3.1 फ्रांस की क्रांति

1798 की फ्रांसीसी क्रांति 'स्वतंत्रता, बंधुता और समानता' के लिए मानव संघर्ष के इतिहास में एक निर्णायक मोड़ साबित हुई। इसने सामंतवादी युग को समाप्त कर दिया और समाज के एक नए क्रम मे पदार्पण किया। इस क्रांति का एक महत्वपूर्ण योगदान न केवल फ्रांसीसी समाज बल्कि पूरे यूरोपीय समाजों में इसके द्वारा लाए गए दूरगामी परिवर्तन थे। यहाँ तक की अन्य महाद्वीपों में सुदूर देशों जैसे भारत इस क्रांति के दौरान उत्पन्न विचारों से प्रभावित था। स्वतंत्रता, बंधुता और समानता जैसे विचार, जो अब भारत के संविधान की प्रस्तावना का एक हिस्सा हैं, उनकी उत्पत्ति फ्रांसीसी क्रांति के कारण ही हुई।

अठारहवीं शताब्दी के दौरान फ्रांस भी, अन्य यूरोपीय देशों की तरह, कारण और तर्कवाद के युग में प्रवेश कर चुका था। प्रमुख दार्शनिकों जिनके विचारों ने फ्रांसीसी लोगों को प्रभावित किया, वे तर्कवादी थे, जो इस बात पर विश्वास करते थे कि 'सभी वास्तविक वस्तुएं कारण द्वारा साबित हो सकती हैं'। इनमें से कुछ विचारक, मोंटेस्क्यू (1689-1755), लॉक (1632-1704), वॉल्टेयर (16 94-1778), और रूसो (1712-1778) थे। फ्रांसीसी समाज में विद्यमान सामाजिक परिस्थितियों के साथ-साथ इन विचारों द्वारा निर्मित उत्तेजना ने फ्रांसीसी क्रांति का नेतृत्व किया जिसने निरंकुष राजतन्त्र का अंत किया। इसने यूरोपीय समाज की राजनीतिक संरचना को बदल दिया और उदार लोकतंत्र के आगमन की घोषणा करके सामंतीवाद के युग को प्रतिस्थापित किया। 1789 में फ्रांसीसी क्रांति के द्वारा राजनीतिक क्रांतियों की लम्बी श्रृंखलाओं का सूत्रपात हुआ और उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक चला जो समाज विज्ञान संबंधी सिद्धांतों के निर्माण के उदय में सबसे तात्कालिक कारक था। इन क्रांतियों का कुछ समाजों पर बहुत गहरा असर पड़ा और कई सकारात्मक परिवर्तनों का नेतृत्व किया। हालांकि, कई प्रारंभिक सिद्धान्तकारों का ध्यान जिन बातों ने अपनी और आकर्षित किया वे सकारात्मक परिणाम नहीं थे अपितु इस तरह के कट्टरपंथी परिवर्तनों के नकारात्मक प्रभाव थे। ये लेखक इन गतिविधियों के परिणामस्वरूप अराजकता और अव्यवस्था से मुख्य रूप से विक्षुब्ध थे, विशेषकर फ्रांस में और समाज में व्यवस्था फिर से बहाल करना चाहते थे। इस अवधि के कुछ चोटी के विचारक वास्तव में मध्य युग के शांतिपूर्ण और अपेक्षाकृत व्यवस्थित दिनों की वापसी चाहते थे। अधिक तर्कसंगत विचारकों ने स्वीकार किया कि सामाजिक परिवर्तन ने इस तरह की वापसी असंभव कर दी है। अतः उन्होंने समाज में व्यवस्था के नए आधार खोजने का प्रयास किया जिन्हें अट्ठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी की राजनैतिक क्रांति द्वारा पलट दिया गया। सामाजिक व्यवस्था के मुद्दों में इस प्रकार की रूचि शास्त्रीय समाजशास्त्रीय सिद्धांतकारों, विशेष रूप से कॉम्ट, दुर्खाइम और पार्सन्स की प्रमुख चिंताओं में से एक थी।

18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और 19वीं शताब्दी की शुरुआत में एक अन्य विकास हुआ, जिसने समाजशास्त्र के उद्‌भव को महत्वपूर्ण आकार दिया वह औद्योगीकरण क्रांति थी। प्रारंभिक समाजशास्त्री औद्योगीकरण के प्रारंभ होने के साथ ही समाज में घटित हो रहे परिवर्तनों से बहुत विक्षुब्ध थे, जिसने अपने ग्रामीण से शहरी विशाल प्रवास के साथ ही जीवन की शैली को बदल दिया और शोषक वर्ग संरचना को कठोर बनाया- ऐसे सभी विषयों ने जिसने कार्ल मार्क्स की पूंजीवाद की आलोचना जैसे कई सामाजिक सिद्धांतों के विकास पर मौलिक प्रश्न उठाए।

1.3.2 औद्योगिक क्रांति

औद्योगिक क्रांति एक मात्र घटना नहीं थी, अपितु अंतर-संबंधित विकास के एक समूह से संबंध रखती थी जिसने पश्चिमी देशों को एक विशाल कृषक प्रणाली से एक दमनकारी औद्योगिक प्रणाली में परिवर्तित होने का मार्ग प्रशस्त्र किया। यह इंग्लैंड में लगभग 1760 ईस्वी के आसपास प्रारंभ हुआ और इसने लोगों के सामाजिक और आर्थिक जीवन में बड़े परिवर्तन किये, प्रारंभ में इंग्लैंड में और यूरोप के अन्य देशों में फैला। यूरोप में विशेष रूप से इंग्लैंड में नए क्षेत्रों, अन्वेक्षणों, वाणिज्य और व्यापार की खोज और शहरों का निरंतर विकास, माल की मांग में वृद्धि लाया। इस प्रणाली के भीतर, कुछ लोगों ने काफी लाभ कमाया, जबकि अधिकांश लोग लंबे समय तक काम करते थे और वो भी कम पैसे के लिए काम करते थे।

औद्योगिक क्रांति के दौरान, नए उपकरण और तकनीकों का आविष्कार किया गया था, जो बड़े पैमाने पर माल का उत्पादन कर सकते थे। जेम्स हर्ग्रीव्स द्वारा 1767 में स्पिनिंग जेनी का आविष्कार किया गया, जिससे उत्पादन गतिविधि में तेजी आई। 1769 में आर्कराईट ने आर्कराईट्स वाटर फेम नामक एक और उपकरण का आविष्कार किया जो इतना बड़ा था कि इसे किसी व्यक्ति के घर में नहीं रखा जा सकता था और इसे लगाने के लिए एक विशेष इमारत की आवश्यकता थी। अक्सर यह कहा जाता है की कारखाना प्रणाली की शुरुआत इसी कारण से हुई। इसने अर्थव्यवस्था में उत्पादन की सामंतवादी प्रणाली को पूंजीवादी प्रणाली में परिवर्तित किया। इसके उपरांत, पूंजीपतियों की एक नई श्रेणी उभरी जिसने उत्पादन की इस नई प्रणाली को नियंत्रित किया। इस क्रांति के कारण समाज हाथ द्वारा निर्मित वस्तुओं के पुराने युग से निकल कर मशीन द्वारा निर्मित वस्तुओं के नए युग में स्थानांतरित हो गया। इस बदलाव ने औद्योगिक क्रांति के उद्‌भव का उद्‌घोष किया।

अर्थव्यवस्था में बदलाव के साथ, समाज में कई बदलावों के अनुसरण हुए। जैसे जैसे पूंजीवाद अधिक जटिल होता गया बैंकों, बीमा कंपनियों और वित्त निगमों का विकास हुआ। इस कारण औद्योगिक श्रमिकों, प्रबंधकों और पूंजीपतियों की एक नई श्रेणी उभरी। नए औद्योगिक समाज में कृषकों ने अपने जैसे ही अन्य हज़ारों लोगों के साथ स्वयं को कपड़ा मिल में कपास धुनते पाया। खुले और रौशनी से भरपूर ग्रामीण क्षेत्रों की बजाय, अब वे धूल और गंदगी में रह रहे थे। उत्पादन में वृद्धि के साथ ही शहरी जनसँख्या भी बढ़ने लगी। आबादी बढ़ने के साथ साथ बड़ी संख्या में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों में प्रवास ने शहरीकरण को बढ़ावा दिया। औद्योगिक शहर तेजी से बढ़े। इन औद्योगिक शहरों को विशाल सामाजिक-आर्थिक असमानताओं द्वारा अंकित किया गया था।

ये परिवर्तन रूढ़िवादी और कट्टरपंथी दोनों ही विचारकों से संबंधित हैं। रुढ़िवादी इस बात से डरते थे की ऐसी परिस्थितियां अराजकता और अव्यवस्था को बढ़ावा दे सकतीं हैं, जबकि फ्रेडरिक एंगल्स जैसे कट्टरपंथियों को लगा कि श्रमिक वर्ग की क्रांति कारखानें के श्रमिकों द्वारा प्रारंभ की जा सकती है जो सामाजिक परिवर्तन को बढ़ावा देगा। हालांकि, चिंताएं एक दूसरे से बहुत भिन्न थी, फिर भी उस समय के सामाजिक विचारक औद्योगिक क्रांति के संभावित कारणों के प्रभाव में एकजुट थे। वे नए श्रमिक वर्ग के महत्व पर भी सहमत थे। अतः औद्योगिक क्रांति के महत्वपूर्ण विषयों जिसने प्रारंभिक समाजशास्त्रियों को चिंतित किया वह श्रमिकों की स्थिति, संपत्ति का हस्तांतरण, शहरीकरण और प्रौद्योगिकी था।

1.4 समाजशास्त्र के सिद्धांत का उदय

जैसा कि हमने प्रारंभ में देखा, जिस समय समाजशास्त्र एक विषय के रूप में आकार ले रहा था, बौद्धिक उत्तेजना ज्ञानोदय के रूप में यूरोप में देखी गई। यह उल्लेखनीय बौद्धिक विकास और दार्शनिक विचारों के बदलाव का काल था। समाज में हो रहे परिवर्तनों के बारे में ज्ञानोदय के विचारकों तक जो आम राय पहुँची जिसने समाजशास्त्र के उद्‌भव में मुख्य बौद्धिक प्रणेता की भूमिका निभाई वे थे, पहला, इतिहास का दर्शन जो की इस तथ्य को मानता है की समाज चरणों (ढांचे) में प्रगति करता है और इन योजनाओं की उपस्थिति के कारण समाज को समझने के नियम भी प्रकृतिक विज्ञान की तर्ज पर वैज्ञानिक और व्यवस्थित तरीके से तैयार किए जा सकते हैं। दूसरा, सामाजिक सर्वेक्षण की मात्रात्मक पद्धति के रूप में सामाजिक सर्वेक्षण एक उपकरण के रूप में माना गया जिसे समाज में विद्यमान सामाजिक समस्याओं को समझने में उपयोग किया जा सकता है और इस प्रकार सामाजिक सुधार के लिए समाधान खोजें।

हालांकि, सामाजिक सिद्धांत पर ज्ञान का प्रभाव इतना प्रत्यक्ष और सकारात्मक नहीं था, क्योंकि यह अप्रत्यक्ष और नकारात्मक था। वास्तव में, ज्ञानोदय के प्रति लुईस डी बोनाल्ड (1754-1840) और जोज़फ डी मेस्ट्रे (1753-1821) जैसे रुढ़िवादी प्रतिक्रियावादियों ने समाजशास्त्र के विकास के लिए उतना योगदान दिया जितना उन विद्वानों ने जो ज्ञानोदय से प्रभावित थे। डी बोनाल्ड व्यापक और क्रांतिकारी परिवर्तनों से बहुत व्याकुल थे इन्हीं परिवर्तनों के कारण एक अत्यधिक अव्यक्तिक शहरीय नगर जीवन की स्थापना हुई, जो पूरी तरह से किसी भी प्रकार के सामुदायिक बंधन से विहीन थी और उन्होंने बीते समय की शांति और स्थिरता की वकालत की। इस तरह, समाजशास्त्र व्यक्ति की बजाय एक विश्लेषण की इकाई के रूप में समाज पर ज़ोर देता है; अंतर-संबंधित और अंतर-निर्भर के रूप में समाज के विभिन्न भागों की मान्यता है; और; समाज में परम सामंजस्य और स्थिरता पर ज़ोर देता है- अतः कहा जा सकता है कि यह रुढ़िवादी प्रतिक्रियाओं द्वारा प्रभावित हो सकता है।

वास्तव में, यह कहना उचित होगा कि 'जब समाजशास्त्र के लक्ष्य रुढ़िवादी विचारों (सामंजस्य, स्थिरता और एकता) से प्रभावित हो रहे थे, तो पद्धतियां ज्ञानोदय के विचारकों से प्रभावित हो रही थीं जिन्होंने ये महसूस किया ही कोई अतीत में वापस नहीं जा सकता, परन्तु समाज की एक नई सोच (वैज्ञानिक पद्धति) का प्रयोग कर एक बेहतर समाज का निर्माण किया जा सकता है। अतः ज्ञानोदय और रुढ़िवादी विचार समाजशास्त्र के विज्ञान का निर्माण करने के लिए संयुक्त हुए। इसके अलावा, ये बौद्धिक हलचलें 18वीं-19वीं शताब्दी के पश्चिमी यूरोप में प्रचलित सामाजिक परिवेश से अलग नहीं थी।

1.5 सामाजिक मानवविज्ञान का उद्‌भव

जहाँ तक मानवविज्ञान और उसके शैक्षणिक उपयोगिता का संबंध है यह प्राकृतिक विज्ञान और मानविकी के एक मिलान बिंदु के रूप में शुरू हुई है। सामाजिक मानवविज्ञान, मानव विज्ञान का एक हिस्सा है, इसकी उत्पत्ति ऐतिहासिक रूप से मानव विज्ञान के अन्य घटकों के विकास से जुड़ा हुआ है। सामाजिक मानव विज्ञान का उद्‌भव समाजशास्त्र, दर्शन, जातीय-इतिहास, इतिहास, मनोविज्ञान (सामाजिक मनोविज्ञान), राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र जैसे सामाजिक विज्ञान के अन्य विषयों से निकटता से जुड़ा हुआ है। किंतु सामाजिक मानवविज्ञान का सबसे निकटतम विषय समाजशास्त्र है। मानवविज्ञान के अत्यधिक विस्तृत विषय वस्तु को ध्यान में रखते हुए, इस अनुशासन के बौद्धिक विकास और उद्‌भव का व्यापक रूप से पता लगाना मुश्किल है।

समाजशास्त्र की तरह, मानवविज्ञान के उद्भव और विकास को पश्चिमी दुनिया में सीधे वैज्ञानिक विकास से जोड़ा जाता है। यदि कोई सदियों पहले 'मानव विज्ञान' शब्द के अस्तित्व को मानता है, तो "मानवविज्ञान एक बहुत पुराना विषय है। मानव विज्ञान एक शब्द है जो प्राचीन यूनानियों ने भी उपयोग किया था। उनके लिए *एन्थ्रोपोलॉजिया* 1595 में उत्पन्न हुआ था। इमानुएल कांत ने 1798 में *एन्थ्रोपोलॉजिया इन प्रैग्मैटिस्चर हिंसिकट* नाम की एक पुस्तक प्रकाशित की थी (सराना 1983:3)। 15वीं और 16वीं शताब्दी में पुर्तगाली और स्पेनियों ने अफ्रीका के हिस्सों और नई दुनिया के अपने विजय के इतिहास के बारे में लिखा था। ये सब मानवविज्ञान की महत्वपूर्ण स्रोत सामग्री हैं। इनके अलावा, यात्रियों और अन्य लोगों के लेखन, और रूसो का महान असभ्यता के बारे में अटकलें, बौद्धिक विचारधारा में परिवर्तन का संकेत देती हैं।(वही)

मानवविज्ञान के बुनियाद को ग्रीको-रोमन पुनर्जागरण काल में भी रेखांकित किया गया है, यह विशेष रूप से हेलिकर्नासस (484-425 बीसी) के हेरोडोटस के लेखन से शुरू हुआ। वोगेट के अनुसार (1975:7), हेरोडोटस को नृवंशविज्ञान के "पिता" के रूप में नहीं तो संभावित रूप से अग्रदूत के रूप में उद्धृत किया गया है। वास्तव में, हेरोडोटस को मुख्य रूप से फारसी युद्धों के इतिहास और पश्चिमी एशिया और मिस्र के विभिन्न हिस्सों, काले सागर के उत्तरी तट पर के सिथियन, इथियोपियाई और सिंधु घाटी की विस्तृत यात्रा कथाओं के लेखन के लिए याद किया जाता है (सीएफ. एरिक्सन 2001:2)। उस समय के ग्रीक दार्शनिक, विशेष रूप से सुकरात, प्लेटो और अरस्तु ने भी मनुष्य और समाज के अध्ययन पर प्रभाव डाला। बाद में, रोमन दार्शनिक मार्कस तुलियस सीसेरो ने भी मानव समाज को समझने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। कई शताब्दियों के अंतराल के बाद खासकर 16वीं शताब्दी एडी में कुछ दार्शनिकों ने समाज और राज्य के अध्ययन में रुचि लिया। इन कुछ विद्वानों में थॉमस हॉब्स और मैकियावेली भी शामिल है। इससे पहले, 14वीं शताब्दी एडी में नैतिक-ऐतिहासिक दर्शन और सामाजिक प्रतिमान के संरचनात्मक-कार्यात्मक विश्लेषण पर इब्न खलदुन के महत्वपूर्ण योगदान का उल्लेख किया जा सकता है।

1.5.1 विकास का पहला चरण

18वीं शताब्दी तक यूरोप में पुनर्जागरण के अनुभव और प्रभाव के बाद रूसो, विको, बैरन डी मॉन्टेक्विउ और जॉन लॉक जैसे कई प्रतिष्ठित दार्शनिक हुए जिन्होंने समाज को समझने में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया और उस समय की सामाजिक घटनाओं को श्रेणीबद्ध किया। पूर्व के इन कार्यों ने निश्चित रूप से सामाजिक विज्ञान के विकास और समाजशास्त्र और मानव विज्ञान सहित मानव समाज के विज्ञान के लिए दार्शनिक आधार रखा। पहले के दार्शनिकों और विद्वानों के योगदान ने निश्चित रूप से मानव विज्ञान के उद्भव और विकास में योगदान दिया है, हालांकि उन्हें वास्तव में मानव विज्ञान कहा नहीं जा सकता है। मानव विज्ञान और सामाजिक विज्ञान का विकास जो पहले के दार्शनिक और ऐतिहासिक अध्ययनों को प्रारंभ किया था, यह दो चरणों में आया था। पहले चरण (1725- 1840) में "दार्शनिक वैज्ञानिक इतिहास से मनुष्य, समाज और सभ्यता के अध्ययन को सफलतापूर्वक अलग किया और उसके द्वारा एक सामान्य सामाजिक विज्ञान तैयार किया" (वोगेट, 1975:41)। हालांकि, होबेल (1958) का मानना है कि "मानव विज्ञान मुख्य रूप से प्राकृतिक विज्ञान से उपजी है और प्राकृतिक विज्ञान परंपरा के एक बड़े परिमाण का वहन करती है" (पृ. 9) और ना कि इतिहास या दर्शन के। इसके पहले के संगठन और मानव विज्ञान की प्रकृति की समस्या ऐसी थी कि 20वीं शताब्दी के मध्य में भी ई.ई. इवांस-प्रिचर्ड को ब्रिटिश मानव विज्ञान (विशेष रूप से सामाजिक मानव विज्ञान) में समस्या का सामना करना पड़ा। सामाजिक मानव विज्ञान की प्रकृति के बारे में उनका कहना था कि "सामाजिक मानव

विज्ञान को प्राकृतिक विज्ञान के रूप में देखने वाले और जो खुद (इवांस-प्रिचर्ड) इसे मानविकी में से मानते हैं उन लोगों के बीच विचारों का व्यापक अंतर है। आज जब मानव विज्ञान और इतिहास के बीच संबंधों पर चर्चा की जा रही है तब यह विभाजन शायद सबसे तेज है" (इवांस-प्रिचर्ड, 1951:7)।

1.5.2 विकास का दूसरा चरण

दूसरे चरण (1840-1890) में "प्राकृतिक विज्ञान में एक स्थिर संतुलन मॉडल से एक गतिशील मॉडल में परिवर्तन था। इसकी पराकाष्ठा उष्मागतिकी और डार्विनियन विकासवादी सिद्धांत के परिचय के साथ आई "(वोगेट, 1975: 42)। मानव विज्ञान जैसे विविधता वाले क्षेत्र को 1860 के दशक में एक सामान्य मानव विज्ञान विषय में एकीकृत करने के लिए एक प्रयास किया गया था जो मनुष्य के प्रारंभिक इतिहास में संलग्न होगा। 1870 तक, भौतिक मानव विज्ञान, प्रागैतिहासिक और नृवंशविज्ञान को एकीकृत करके "मानव विज्ञान का एक विशिष्ट चरित्र स्वयं प्रकट होना शुरू हुआ" (सीएफ। वही।)। इस अवधि में मानव विज्ञान के उद्भव को शैक्षणिक विषय में शामिल किया गया है। यह भौतिक और जैविक क्षेत्र में वैज्ञानिक पद्धति की जीत की प्रेरणा के माध्यम से, उन्नीसवीं शताब्दी के मानवविज्ञानी मानते थे कि सामाजिक-सांस्कृतिक घटनाएं खोजने योग्य शास्त्र युक्त सिद्धांत थे। यह दृढ़ विश्वास अतीत की अवधि की आकांक्षा के साथ अपने हितों में शामिल हो गया, अठारहवीं शताब्दी के ज्ञान और मानव जाति के सार्वभौमिक इतिहास की दृष्टि के लिए सामाजिक विज्ञान का नाम दिया गया था (हैरिस 1979:1)। हालांकि, यह केवल उन्नीसवीं शताब्दी में शैक्षणिक विषय के रूप में उभरा। हालांकि, 18वीं और 19वीं सदी में यूरोप में होने वाले विभिन्न बौद्धिक और सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तन अनुशासन के उद्भव का महत्वपूर्ण कारक रहा है। कुछ महत्वपूर्ण प्रभावों में यूरोप में फ्रांसीसी क्रांति और औद्योगिक क्रांति शामिल है।

फ्रेड डब्ल्यू वोगेट, सामाजिक विज्ञान के उद्भव को सामाजिक/सांस्कृतिक मानव विज्ञान के उद्भव के मार्ग के रूप में देखते है। उसका कहना है:

> "यहां एक संदेह हो सकता है कि अठारहवीं सदी के प्रगतिविदों ने एक नए विषय के लिए नींव रखी- एक सामान्यीकृत सामाजिक विज्ञान। यह तथ्य कि उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान मानव जाति के प्राकृतिक इतिहास की सामान्य रूपरेखा का विस्तार और परिष्करण किया गया था, और इसने संस्कृति के मानव वैज्ञानिक विज्ञान के लिए एक मॉडल के रूप में कार्य किया, प्रगतिशील सामाजिक दार्शनिक-वैज्ञानिकों और इतिहासकारों द्वारा प्राप्त उल्लेखनीय सफलता को प्रमाणित करता है"(1975:88)।

हालांकि, वोगेट ने अठारहवीं शताब्दी के प्रगतिविदों को मानव विज्ञान (सामाजिक/सांस्कृतिक मानव विज्ञान) के अग्रदूतों के रूप में महानता बताने के साथ विरोध जताते हुए कहा है कि प्रगतिविदों ने खुद ही "विशेष तथ्यों के संग्रह" को नजरअंदाज कर दिया, किन्तु "खुद को सामाजिक और सांस्कृतिक सिद्धांतवादी रैंक तक बढ़ा दिया। फलतः इनका विकास के साथ कोई सीधा संबंध नहीं था जो प्रागैतिहासिक, भौतिक मानव विज्ञान, भाषाविज्ञान, और अन्य मानवविज्ञान विशिष्टताओं का नेतृत्व करेगा। फिर भी यह उन विशेषज्ञताओं का अभिसरण था जो सामान्य सामाजिक विज्ञान के आधार पर मानव विज्ञान की भिन्नता को उत्पन्न करता था। ऐतिहासिक और उद्ववविकासवादी प्रक्रियाएं मानव विज्ञान वैज्ञानिक संस्थान के उद्भव में काम कर रही थीं"(वोगेट 1975:89)। मार्विन हैरिस, मानव

विज्ञान के विकास के इतिहासकार थे जिन्होंने भी मानव विज्ञान को "इतिहास के विज्ञान की शुरूआत" के रूप में देखा(1979:1)।

1.6 आधुनिक सामाजिक मानव विज्ञान का उद्भव

आधुनिक सामाजिक मानव विज्ञान का उदय मुख्य रूप से ब्रोंनिस्लो मालिनोव्स्की और ए. आर. रेडक्लिफ़-ब्राउन के योगदान के साथ हुआ है। मार्सेल मास को आम तौर पर फ्रांस में आधुनिक सामाजिक मानव विज्ञान के अग्रणी के रूप में भी जाना जाता है। ब्रोंनिस्लो मालिनोव्स्की सबसे प्रसिद्ध सामाजिक मानव विज्ञानी में से एक है। वास्तव में, उन्हें आम तौर पर आधुनिक सामाजिक मानव विज्ञान के संस्थापक के रूप में जाना जाता है। आधुनिक सामाजिक मानव विज्ञान में उनका मुख्य योगदान प्रतिभागी विधि या तकनीक के साथ नृवंशविज्ञान विधि का परिचय था और विशेष रूप से पहले के दृष्टिकोण, विकासवादी और ऐतिहासिक दृष्टिकोण से हटकर कार्यात्मकता के सिद्धांत की स्थापना की। पश्चिमी प्रशांत के अर्गोनॉट्स ऑफ दी वेस्टर्न पैसिफिक क्राइम (1944) एंड कस्टम इन सेवेज सोसाइटी, ए साइंटिफिक थ्योरी आफ कल्चर एण्ड अदर *एसेज* उनके महत्वपूर्ण कार्य हैं। ब्रोंस्लालो मालिनोव्स्की के साथ ए.आर. रैडक्लिफ-ब्राउन आधुनिक मानव विज्ञान के संस्थापकों में से एक है। वह अपने सैद्धांतिक दृष्टिकोण के लिए जाने जाते हैं, जिन्हें आमतौर पर संरचनात्मक-कार्यात्मकता कहा जाता है। उनका सिद्धांत ऐमाइल दुर्खीम और उनके नृवंशविज्ञान क्षेत्र के डेटा और अनुभव के वैचारिक विचारों के साथ विकसित किया गया था। *दी अंडमान आइस्लैंडरः ए स्टडी इन सोशल एंथ्रोपोलॉजी (1922)*,और *स्ट्रक्चर एंड फंक्शन इनप्रिमिटिव सोसाइटी (1952)* उनके महत्वपूर्ण कार्य है। वह विनिमय और सामाजिक संरचना के रूपों के बीच संबंध के तुलनात्मक अध्ययन के लिए जाने जाते हैं। इस तरह उन्हें फ्रांस में आधुनिक सामाजिक मानव विज्ञान के संस्थापक के रूप में भी माना जाता है। उनका सबसे महत्वपूर्ण काम *दी गिफ्ट* (1922) है। विभिन्न क्षेत्रों में सामाजिक मानवविज्ञान में इन अग्रदूतों के साथ, संरचनात्मकता और संरचनात्मक मानव विज्ञान के सिद्धांत को स्थापित करने के लिए लेवी स्ट्रॉस को सूची में शामिल किया जा सकता है। उन्हें मिथक, संस्कृति, धर्म और सामाजिक संगठन के विषयों पर 20 वीं शताब्दी के सबसे प्रभावशाली विचारकों में से एक माना जाता है।*दी एलिमेंटरी स्ट्रक्चर ऑफ किन्शिप* (1949), *त्रिस्ट्स ट्रॉपिक्विज* (1955), और स्ट्रक्चरल एन्थ्रोपोलॉजी (1963) उनके महत्वपूर्ण कार्य हैं। ऐसे भी कई मानवविज्ञानी हैं जिन्होंने आधुनिक सामाजिक मानव विज्ञान के विकास में योगदान दिया, किंतु वे या तो बाद में या निचले क्रम में गिने जाते हैं।

एक विषय के रूप में मानव विज्ञान (सामाजिक मानवविज्ञान) का उदय पेशेवर संघों के गठन के रूप में भी माना जा सकता है। 1837 में गठित ऐबरिजनीज़ प्रोटेक्शन सोसायटी एक रूप में स्थापित होने वाला पहला मानव विज्ञान संगठन था (सीएफ सराना 1983:4)। अमेरिकी मानव विज्ञान संघ की स्थापना 1902 में हुई थी (वही: 4)। अमेरिकन एसोसिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ साइंस ने 1851 में मानवविज्ञान को मान्यता दी और 1882 में मानव विज्ञान के लिए एक अलग सेक्शन दिया। 1846 में ब्रिटिश एसोसिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ साइंस द्वारा मानवविज्ञान को मान्यता मिली और 1884 में एक अलग विभाग दिया गया। लंदन की मानवविज्ञान सोसाइटी 1863 में आया था। 1871 में इस और अन्य एथ्नोलॉजिकल सोसाइटी ऑफ लंदन को ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड के मानव विज्ञान संस्थान बनाने के लिए विलय कर दिया गया था। भारत में, 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बंगाल की एशियाटिक सोसायटी की स्थापना की गई थी (1774)। बॉम्बे की मानवविज्ञान सोसाइटी की स्थापना 1886 में हुई थी(वही: 5)। भारतीय संदर्भ में, इस बात की कोई सहमति नहीं है कि मानवविज्ञान का उदय (सामाजिक मानव विज्ञान सहित) बंगाल की

एशियाटिक सोसाइटी के गठन के साथ मेल खाता है क्योंकि कुछ दावा करेंगे। सराना का मानना है कि 18वीं शताब्दी में भारतीय मानव विज्ञान नहीं उभरा। उन्होंने कहा कि 19वीं शताब्दी के मध्य तक संघों और लेखों की स्थापना "केवल भटकने के प्रयास था। भारत में सामान्यतः मान्यता प्राप्त मानवविज्ञान कार्यों को ब्रिटिश प्रशासकों जैसे ब्लंट, क्रूक, डाल्टन, ग्रिर्सन, इब्बेटसन, मिल्स, नेस्फील्ड, ओ'मलेली, रिस्ले, रसेल, सीनार्ट और थुरस्टन और प्रशासक से बने अकादमिक, जे एच हटन, द्वारा लिखे गए थे। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में। इस शताब्दी में (20वीं शताब्दी), सरत चंद्र रॉय ने छोटानागपुर की जनजातियों पर उनके मोनोग्राफ के साथ मानव विज्ञान सामग्री के इस समूह में शामिल किया "(सराना 1983: 6-7; ब्रैकेट मेरा हैं)। फिर भी, इन संगठनों का गठन विभिन्न देशों में और विभिन्न अवधियों में मानव विज्ञान (सामाजिक मानव विज्ञान सहित) की उभरती स्थिति को इंगित करता है।

1.7 सामाजिक मानव विज्ञान के प्रणेता

लुईस हेनरी मॉर्गन (1818-1881), जॉन फर्ग्यूसन मैकलेनैन (1827-1881), एडॉल्फ बस्टियन (1826-1905), और सर एडवर्ड बर्नेट टायलर (1832-1917) को सामाजिक मानव विज्ञान के अग्रदूतों में शामिल किया जाता है। वहीं फ्रांज बोस (1858-1942), सर जेम्स जॉर्ज फ्रैज़र (1854-1941) और डब्ल्यू एच आर रिवर्स (1864-1922) जैसे मानवविज्ञानी को उनके अनुगामी के रूप में देखा जाता है। कई और ऐसे मानवविज्ञानी हैं जिन्होंने मानव विज्ञान की स्थापना और विकास, खासकर सामाजिक मानव विज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया था।

संबंध प्रणाली पर हेनरी लुईस मॉर्गन का अध्ययन सामाजिक मानव विज्ञान के विकास के लिए महत्वपूर्ण योगदान है, जिसमें उन्होंने समाज के विकासवादी चरणों को विकसित किया। उनके महत्वपूर्ण कार्यों में *सिस्टम्स ऑफ कान्सैंगविनिटी एंड एफिनिटी ऑफ दी ह्यूमैन फैमिली* (1871) और *एनसिएंट सोसाइटी* (1877) शामिल किया जाता है। इन दोनों कार्यों ने कार्ल मार्क्स को वर्ग के ऐतिहासिक सिद्धांत और ऐतिहासिक भौतिकवाद को विकसित करने के लिए भी बहुत प्रभावित किया। स्कॉटिश नृवंशविज्ञानी जॉन फर्ग्यूसन मैकलेनान और दूसरों ने 'आदिम' विवाह प्रणाली, कानून, टोटेमिस और रिश्ते की समझ में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनका मुख्य मानवविज्ञान कार्य *प्रिमिटिव मैरिजः एन इन्क्वारी इनटू दी ऑरिजिन ऑफ दी फॉर्म ऑफ कैप्चर इन मैरिज सेरेमनिज* (1865) है, जिसमें उन्होंने 'एक्सोगोगी' और 'एंडोगामी' जैसे नए पारिभाषिक शब्द को *दी पैट्रिआर्कल थ्योरी* (1885), और स्टडीज इन एनसिएंट हिस्ट्री (1896) में पेश किया। एक चिकित्सक से मानवविज्ञानी बने एडॉल्फ बस्टियन को "जर्मन मानवविज्ञान के पिता" के रूप में जाना जाता है। उनकी जाने-माने पुस्तक "तीन-वॉल्यूम ग्रंथ, *डेर मेन्शेक इन डेर गेशिचटे* (1860 मैनिन हिस्ट्री) के रूप में सामने आया, जिसने मानव मनोविज्ञान और सांस्कृतिक इतिहास पर विचारों को बढ़ावा दिया, और सार्वभौमिक आंदोलन का अध्ययन करने वाले और सांस्कृतिक इतिहास की ठोस घटनाओं को नजर अंदाज करने वाले विकासवादी लोगों के साथ आम विचार साझा किया (एरिक्सन एट अल 2001: 27-28; सीएफ। कोपिंग 1983)। उन्होंने जैविक रूप से भिन्न जाति के विचार का विरोध किया और *मानव जाति की मानसिक एकता के सिद्धांत* को सूत्रबद्ध किया (वहीः 28)।

सर एडवर्ड बर्नेट टायलर जिसे आम तौर पर "संस्थापक" या 'सांस्कृतिक मानवविज्ञान के पिता' के रूप में जाना जाता है वे मुख्यतः सांस्कृतिक विकास और प्रसार, धर्म और जादू की उत्पत्ति के सिद्धांतों से संबद्ध है। 'संस्कृति' और 'सांस्कृतिक अस्तित्व' की उनकी वैचारिक परिभाषा अभी भी आज तक मानी जाती है। वह सामाजिक/सांस्कृतिक मानव

विज्ञान के अग्रदूतों के बीच सबसे प्रतिष्ठित मानवविज्ञानी के रूप में खड़े हैं। *रिसर्च इनटू दी अर्ली हिस्ट्री ऑफ मैनकाइंड एंड दी डेवलपमेंट ऑफ सिविलाइज़ेशन* (1865), *प्रिमिटिव कल्चर* (1871),और *एंथ्रोपोलॉजीः एन इंट्रोडक्शन टू दी स्टडी ऑफ मैन एंड सिविलाइज़ेशन* (1881) उनके कुछ मुख्य कार्य हैं।

फ्रांज बोस जिन्हें "अमेरिकी मानव विज्ञान के पिता" (विशेष रूप से सांस्कृतिक मानव विज्ञान) और "आधुनिक अमेरिकी मानव विज्ञान" के संस्थापक के रूप में भी जाना जाता है। मानव विज्ञान में उनका महत्वपूर्ण योगदान था- उस समय के बहुत लोकप्रिय संस्कृति की समझ के लिए विकासवादी दृष्टिकोण को अस्वीकार करना, "सांस्कृतिक सापेक्षता" की अवधारणा का आधार तत्व तैयार करना और डेटा और विश्लेषण एकत्र करने के लिए अनुभवजन्य तरीकों का प्रयोग करना। *दी माइंड ऑफ प्रिमिटिव मैन* (1911) और *रेस, लैंग्वेज, एंड कल्चर* (1940), उनके महत्वपूर्ण कार्य हैं। जेम्स जॉर्ज फ्रैज़र ने जादू और धर्म की समझ में बहुत योगदान दिया। उनका सबसे महत्वपूर्ण काम *दी गोल्डन बाउः ए स्टडी इन कम्पेरटिव रिलिजन* (1891) था। डब्ल्यूएचआर रिवर्स ने भी उभरते सामाजिक मानव विज्ञान के विकास में योगदान दिया। उनका योगदान मुख्य रूप से संबंध और सामाजिक संगठन के अध्ययन से संबंधित है। उनका सबसे महत्वपूर्ण काम *दी टोडास (1906) और हिस्ट्री ऑफ मेलेनेशिअन सोसाइटी (1914)* था।

1.8 सारांश

ऐतिहासिक विकास जिसमें उन्हें विकसित किया गया था, इसके अनुसंधान के अपने महत्वपूर्ण क्षेत्रों विशेष रूप से कार्य क्षेत्र, प्रभाव क्षेत्र, सिद्धांतों, पद्धतियों और अभ्यास में सम्मिलन और विरोध भी था। यह इस कारण से है कि समाजशास्त्र और सामाजिक मानव विज्ञान दोनों मानव समाज का अध्ययन करते हैं और बड़े पैमाने पर अपनी सैद्धांतिक समस्याओं और हितों को साझा करते हैं। यही कारण है कि कई विद्वानों द्वारा सामाजिक मानव विज्ञान को समाजशास्त्र का एक भाग या समाजशास्त्र का एक शाखा माना जाता है। मानव विज्ञान और समाजशास्त्र को प्राकृतिक विज्ञान के महत्वपूर्ण तत्वों के साथ स्थापित किया गया था या मानव विज्ञान (एकीकृत मानव विज्ञान) के विषय वस्तु के साथ स्थापित किया गया था, विशेष रूप से भौतिक मानव विज्ञान और पुरातात्विक मानव विज्ञान के घटकों के संदर्भ में भौतिक विज्ञान के साथ इसका संबंध समाजशास्त्र से अधिक है। जहाँ तक उत्पत्ति का सन्दर्भ है सामाजिक मानव विज्ञान की उत्पत्ति समाजशास्त्र से कुछ पहले की ही मानी जाती है। जबकि समाजशास्त्र के उभरने के लिए तत्कालीन यूरोप में विभिन्न कारकों को उत्तरदायी बताया गया है, विशेष रूप से औद्योगिक, सामाजिक-राजनीतिक और बौद्धिक आंदोलनों के लिए जिम्मेदार हैं, यूरोप और अन्य विकसित समाजों के बाहर सामाजिक मानव विज्ञान का उदय मुख्य रूप से 'अन्य' विदेशी समाजों को समझने के लिए बौद्धिक खोज के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। हालांकि, प्रारंभिक वर्षों से समाजशास्त्र और सामाजिक मानव विज्ञान के बीच का अंतर कार्य क्षेत्र, अवधारणा और विधि के स्तर के बजाय, प्रयोग के स्तर और अध्ययन की प्राथमिकता निर्धारित करने पर अधिक रहा है।

1.9 बोध प्रश्न

1) समाज-शास्त्र की उत्पत्ति का वर्णन करें।

2) सामाज-शास्त्र की उत्पत्ति में 1789 के फ्रांसीसी आंदोलन का क्या योगदान था?

3) सामाजिक मानव विज्ञान की उत्पत्ति के प्रचलन की आलोचना करें।

4) सामाजिक मानव विज्ञान की उत्पत्ति के चरणों का वर्णन करें।

5) सामाजिक मानव विज्ञान के साथ सामाज-शास्त्र की उत्पत्ति के अंतर की आलोचना करें।

1.10 संदर्भ

बर्जर, पी. (1963). इनविटेशन टू सोशियोलॉजी ए ह्युमैनिस्टिक पर्सपेक्टिव. न्यू यार्कः एंकर बुक्स डबल डे एंड कंपनी, इंक.

बिडनी, डी. (1953). थीअरेटिकल एंथ्रोपोलॉजी. कोलंबियाः कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस.

बोस, फ्रांज़. (1911). दी माइंड ऑफ प्रिमिटिव मैन. न्यूयार्क. दी मैकमिलन कंपनी

बोस, फ्रांज़. (1940). रेस, लैंग्वेज और कल्चर. न्यूयार्क. दी मैकमिलन कंपनी

बोस, फ्रांज़. (एडेटेड बाई हेलेन कोडेर). (1966). क्वाकियुकी एन्थ्रोपोलॉजी. शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस

बोटोमर, टी.बी. (1962). सोशियोलॉजीः ए गाइड टू प्रोबल्म्स एंड लिटरेचर. लन्दनः जॉर्ज एलन एंड अनविन लिमिटेड.

एरिक्सन, थॉमस हाइलाड. (1995). स्माल प्लेसेस, लार्ज इश्यूज़ः ऐन इन्ट्रोडक्शन टू सोशल एंड कल्चरल एन्थ्रोपोलॉजी. सेकंड एडिशन 2001- लन्दनः प्लूटो प्रेस.

एरिक्सन, थॉमस हाइलाड. एंड फिन सिवर्ट निलसेन. (2001). ए हिस्ट्री ऑफ एंथ्रोपोलॉजी (सेकंड एडिशन). न्यूयार्कः प्लूटो प्रेस.

इवांस- प्रिचर्ड, ई.ई. (1951). सोशल एंथ्रोपोलॉजी. लन्दनः कोहेन एंड वेस्ट लिमिटेड.

इवांस- प्रिचर्ड, ई.ई. (1951). सोशल एंथ्रोपोलॉजी एंड अदर एसेज. न्यूयार्कः फ्री प्रेस.

फ्रेज़र, सर जेम्स. (1891). दी गोल्डन बाउः ए स्टडी इन कॉम्प्रेटिव रिलिजन. न्यूयार्कः मैकमिलन एंड कंपनी.

हैरिस, मार्विन. (1979) (1969). दी राइज ऑफ एंथ्रोपोलॉजिकल थ्योरी. लन्दन एंड हेनलीः रूटलेज एंड केगन पॉल.

होएबेल, ई.ए. (1958). मैन, इन दी प्रिमिटिव वर्ल्ड. न्यूयार्क/लन्दन/टोरंटोः मैकग्रा-हिल बुक कंपनी, आईएनसी.

इन्केल्स, ए. (1975). व्हाट इज सोशियोलॉजी? न्यू देहलीः प्रेन्टिस-हॉल.

कोएप्पिंग, क्लाउस-पीटर. (1983). अडोल्फ़ बस्तीयन एंड दी साइकिक यूनिटी ऑफ एन्थ्रोपोलॉजी इन नाइनटीन्थ-सेंचुरी जर्मनी. न्यू यॉर्कः यूनिवर्सिटी ऑफ क्वीन्सलैंड प्रेस.

कूपर, ऐडम जे. (2018). "हिस्ट्री ऑफ एन्थ्रोपोलॉजी." इन एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका ("एंथ्रोपोलॉजी"). https:@@www-britannica-com@science@anthropology, lsLM 20 जुलाई 2018).

लेवीस्ट्रॉस, क्लौड. (1949). दी एलीमेंट्री स्ट्रक्चर्स ऑफ किन्शिप. (ट्रांस. 1969). बोस्टनः बीकन प्रेस.

लेवीस्ट्रॉस, क्लौड. (1955). ट्रिस्टस ट्रॉपिकुएस. (ट्रांस. जॉन वेटमैन एंड डोरीन वेटमैन. 1973). न्यूयार्कः एथिनयूम.

लेवीस्ट्रॉस, क्लौड. (1963). स्ट्रक्चरल एन्थ्रोपोलॉजी. यूएसएः बेसिक बुक्स.

मेयर, लूसी. (1965). ऐन इंट्रोडक्शन टू सोशल एन्थ्रोपोलॉजी. ऑक्सफ़ोर्डः ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

मैलिनोवस्की, ब्रोनीस्लाव. (1922). एर्गोनॉट्स ऑफ दी वेस्टर्न पैसिफिकः एन अकाउंट ऑफ नेटिव इंटरप्राइज़ एंड एडवेंचर इन दी आर्कीपेलौगिस ऑफ मेलानिसियन न्यू ग्युनिया. लन्दनः रूटलेज एंड केगन पॉल.

मैलिनोवस्की, ब्रोनीस्लाव (1926). क्राइम एंड कस्टम इन सैवेज सोसाइटी. न्यू यार्कः हरकोर्ट, ब्रेस एंड कंपनी

मैलिनोव्स्की, ब्रॉनिस्लाव. (1944). ए साइंटिफिक थ्योरी ऑफ़ कल्चर एंड अदर एस्से. चैपल हिल. उत्तर कैरोलिनाः दा यूनिवर्सिटी ऑफ़ नोर्थ कैरोलिना प्रैस।

मौस, मार्सेल. (1925) (1990). दा गिफ्टः फोर्म्स एंड फंक्शनस ऑफ़ एक्सचेंज इन आर्किक सोसयटीज़. लंडनः रूटलेज।

मैकगी, आर. जे. एंड वार्म्स, आर. एल. (2012). अन्थ्रोपोलोजीकल थ्योरीः एन इंट्रोडक्ट्री हिस्ट्री (5वाँ संस्करण) यू एस एः मैकग्रो हिल।

मैक्लेनन, जॉन फर्ग्यूसन. (1865) (1970). प्रिमिटिव मैरिज. शिकागोः इलिनोइसः यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रैस।

मैक्लेनन, जॉन फर्ग्यूसन. (1876). स्टडीज़ इन एंसियेंट हिस्ट्री. लंडनः बर्न्हार्ड क्वालीच।

मैक्लेनन, जॉन फर्ग्यूसन. (1885) (2006). दा पेट्रियार्क्ल थ्योरी. एडामंट मीडिया कारपोरेशन।

मॉर्गन, लुईस एच. (1871). सिस्टम्स ऑफ़ कोन्संगुईनीटी एंड एफिनिटी ऑफ़ दा ह्यूमन फैमिली. न्यू यॉर्कः स्मिथसोनियन इंस्टीट्यूशन।

मॉर्गन, लुईस एच. (1877). एंसियेंट सोसायटी, न्यू यॉर्कः हैनरी हाल्ट एंड को.।

रैडक्लिफ-ब्राउन, ए. आर. (1922). दा एंडोमैन आइलेंडर्सः ए स्टडी इन सोशियल अन्थ्रोपोलोजी. कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस।

रैडक्लिफ-ब्राउन, ए. आर. (1952). स्ट्रक्चर एंड फंक्शन इन प्रिमिटिव सोसायटीः एसेज़ एंड एड्रेसिस. ग्लिनकोई, इलिनोइसः दा फ्री प्रैस।

रैडक्लिफ-ब्राउन, ए. आर. (1958). मैथर्ड इन सोशियल अन्थ्रोपोलोजी. शिकागो, इलिनोइसः यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रैस।

रिट्‌जर, जी. (2016). क्लासिकल सोशियोलॉजीकल थ्योरी. न्यू दिल्लीः मैकग्रो हिल एजुकेशन (इंडिया).

रिवर्स, एच. आर. (1906). दा टोडास, न्यू यॉर्क एंड लंडनः मैकमिलन।

रिवर्स, एच. आर. (1914) हिस्ट्री ऑफ़ मेलनेसियन सोसायटी. कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस।

सारना, गोपाला. (1983). सोशियोलॉजी एंड अन्थ्रोपोलोजी एंड अदर एसेज़. कलकत्ताः इंस्टीट्यूट ऑफ़ सोशियल रिसर्च एंड एप्लाइड अन्थ्रोपोलोजी।

सजोबर्ग, जी. एंड नेट, आर. (1968). 'बेसिक ओरियनटेशंस टुवर्ड्स दा साइंटिफिक मेथड्स. 'इन ए मेथोड़ोलॉजी फॉर सोशल रीसर्च. न्यू यॉर्कः हार्पर एंड रो।

टाइलर, एडवर्ड बर्नेट. (1865). रिसर्चिज़ इनटू दा अर्ली हिस्ट्री ऑफ़ मैनकाइंड एंड दा डेवलोपमेंट ऑफ़ सिविलाईज़ेशन. लंडनः जॉन मुरे।

टाइलर, एडवर्ड बर्नेट. (1871). प्रिमिटिव कल्चर लंडनः जॉन मुरे।

टाइलर, एडवर्ड बर्नेट. (1881). अन्थ्रोपोलोजी एन इंट्रोडक्शन टू दा स्टडी ऑफ़ मैन एंड सिविलाईज़ेशन, लंडनः मैकमिलन एंड को।

वोगेट, फ्रेड डब्लू. (1975). ए हिस्ट्री ऑफ़ एथ्नोलोजी. यू एस एः होल्ट, राइनहार्ट और विंस्टन।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड 2
समाजशास्त्र का अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंध

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 2 समाजशास्त्र का मानव विज्ञान के साथ संबंध*

संरचना

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान की प्रकृति

2.3 समाजशास्त्र का उद्‌भव एवं इतिहास

2.4 मानव विज्ञान का उद्‌भव एवं इतिहास

2.5 समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के मध्य समानताएं

2.6 समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के मध्य भिन्नताएँ

2.7 सारांश

2.8 संदर्भ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप निम्न बातों को समझ पाएंगे :

- मानव विज्ञान के साथ समाजशास्त्र के संबंधों को जान पाएंगे;
- समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान की प्रकृति को जान पाएंगे;
- समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के उद्‌भव एवं इतिहास को जान पाएंगे;
- समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के मध्य समानताओं एवं भिन्नताओं की जांच कर पाएंगे; तथा
- समसामयिक दौर में समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान की प्रकृति को जान पाएंगे।

2.1 प्रस्तावना

समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानवविज्ञान कई पहलुओं के आधार पर एक दूसरे से संबंधित हैं। जांच एवं पद्धति के कुछ क्षेत्रों में कभी-कभी समाजशास्त्र को सामाजिक मानव विज्ञान से अलग करना कठिन है। जाँच के विषय, पद्धति, अभ्यास एवं परंपरा के आधार पर इन दोनों विषयों में कुछ भिन्नताएँ भी हैं जो देखी जा सकती हैं। हालांकि इस प्रकार का अंतर बहुत कम है तथापि ये अंतर भी विश्वविद्यालय प्रणालियों में विभिन्न शैक्षिक विषयों एवं विभागों के विकास के साथ भिन्नता का विषय बन जाते हैं। सही मायने में जॉन बीट्टी (1980) उल्लेख करते हैं कि "समाजशास्त्र का विषय सामाजिक मानव विज्ञान का सबसे नजदीकी विषय है तथा ये दोनों विषय अपनी अनेक सैद्धांतिक समस्याओं और हितों को एक दूसरे के साथ साझा करते हैं। सामाजिक मानवविज्ञानी अपने आप में समाजशास्त्री भी होते हैं , परंतु वे एक ही समय में उनसे कुछ कम भी होते हैं, क्योंकि उनके जाँच का वास्तविक क्षेत्र पूरी तरह से अधिक प्रतिबंधित होता है, और वे उसी समय कई बार उनसे आगे भी होते हैं क्योंकि वे सामाजिक संबंधों पर बल देते हैं, तथा साथ ही वे संस्कृति के

*डॉ. आर.वाशुम, इग्नू

अन्य पहलुओं पर भी बल देते हैं "(पृष्ठ 31)। इसलिए इन दोनों विषयों के बीच के संबंधों को समझने हेतु इनके ऐतिहासिक एवं समकालीन विकास को समझना जरूरी है।

2.2 समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान की प्रकृति

समाजशास्त्र सामाजिक विज्ञान क्षेत्र का सबसे नया विषय है। यह सबसे तेज़ गति से बढ़ आगे रहे शैक्षिक विषयों में से एक है। 'समाजशास्त्र' शब्द लैटिन शब्द 'सोशिअस' ('संगी-साथी' अथवा 'सहयोगी') एवं ग्रीक शब्द 'लॉजी'/'लोगोस' ('ज्ञान') से बनाया गया है। 1838 में ऑगस्ट कॉम्टे द्वारा 'समाजशास्त्र' शब्द को बनाया गया। मानव समाज का एक वैज्ञानिक अध्ययन समाजशास्त्र है जो कि सामाजिक घटनाओं के संदर्भों को समझाने की कोशिश करता है। इसमें मानव व्यवहार के सामूहिक पहलुओं पर जोर दिया जाता है। इस विषय की व्यापक प्रकृति ने इसे मानव विज्ञान, राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, भूगोल, शिक्षा, कानून एवं दर्शनशास्त्र जैसे अनेक सामाजिक विज्ञान के विषयों के साथ जोड़ा है। मानव विज्ञान (जिसकी उत्पत्ति ग्रीक शब्द 'अन्थ्रोपोस' जिसका अर्थ ' मानव ' है और 'लॉगिया'/'लोगोस' अर्थात 'का अध्ययन' से हुई है) वह एकमात्र विषय है जो मानव समाज के अध्ययन में समाजशास्त्र के दायरे को पार करता है जिसमें सामाजिक/सांस्कृतिक मानव विज्ञान (जिसे सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान भी कहा जाता है), भौतिक मानव विज्ञान, पुरातात्विक मानव विज्ञान (जिसे पूर्व-ऐतिहासिक पुरातत्व भी कहा जाता है) एवं भाषा वैज्ञानिक मानव विज्ञान की शाखाएं भी सम्मिलित हैं। मरियम वेबस्टर डिक्शनरी के अनुसार " मानव विज्ञान शब्द का प्रयोग 16वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में किया गया "। यह माना जाता है कि 1805 में पहली बार 'मानव विज्ञान' शब्द का प्रयोग दिखाई पड़ा (मैक्जी एवं वारम्स, 2012; 6) ।

ऐतिहासिक रूप से सामाजिक/सांस्कृतिक मानव विज्ञान प्रारंभ से ही समाजशास्त्र के बहुत समीप रहा है क्योंकि ये दोनों ही मानव समाज का अध्ययन करते हैं। हालांकि मानव विज्ञान को पूर्व-साक्षर समाजों (जिसे प्रारंभिक मानवविज्ञानियों एवं अन्य विद्वानों द्वारा गलत तरीके से 'आदिम' समाज के रूप में रूपायित किया गया है) का अध्ययन माना गया है एवं समाजशास्त्र को समकालीन, शहरी तथा विकसित समाजों से अधिक जुड़ा हुआ माना जाता है, और यह अंतर आज के युग में सत्य नहीं है। मानव विज्ञान के क्षेत्र में पहले यह प्रवृत्ति थी कि यह सूक्ष्म अध्ययन (खास तौर से असाधारण गांव के अध्ययन) से जुड़ा हुआ था और समाजशास्त्र वृहत अध्ययन (खास तौर से आधुनिक समाज) के साथ जो कि वर्तमान समय में सच नहीं रहा है। इसी प्रकार ग्रामीण समुदायों के अध्ययन को पहले मानव विज्ञानियों के साथ जोड़ा जाता था एवं शहरी समुदायों के अध्ययन को समाजशास्त्रियों के साथ उस समय जोड़ा जाता था जब ये विषय विकास के प्रारंभिक चरणों में थे और ये बातें समय के साथ अब मलिन हो चुकी हैं । वर्तमान समय में एक प्रवृत्ति स्थापित की गई है जहां एक ओर समाजशास्त्रियों ने ग्रामीण समुदायों, गांवों एवं सूक्ष्म ढांचों पर अधिक अध्ययन किए हैं, वहीं मानवविज्ञानी शहरी ढांचों एवं वृहत अध्ययनों की ओर रुख कर चुके हैं। इस उभरती हुई नई प्रवृत्ति के पर्याप्त उदाहरण मौजूद हैं जो विकासशील देशों में समाजशास्त्रियों एवं मानवविज्ञानी द्वारा किए गए अध्ययनों में स्पष्ट रूप से झलकते हैं। इसी करण समाजशास्त्रियों एवं मानव विज्ञान और खास तौर से सामाजिक मानव विज्ञान एवं/अथवा सांस्कृतिक मानव विज्ञान के बीच जॉच एवं अभिरुचि के क्षेत्रों में परस्पर व्याप्ति बहुत अधिक हुई है।

2.3 समाजशास्त्र का उद्भव एवं इतिहास

समाज के एक वैज्ञानिक अध्ययन के रूप में समाजशास्त्र विषय क्षेत्र में विकास का अपेक्षाकृत लघु इतिहास रहा है। इसकी शुरुआत 19वीं सदी में एक शैक्षिक विषय के रूप

में हुई। हालांकि समाज का अध्ययन समाजशास्त्र हेतु विशिष्ट नहीं है, यह 5वीं शताब्दी ईसा पूर्व में यूनानी दार्शनिकों सुकरात हेतु 4 शताब्दी ईसा पूर्व में प्लेटो एवं अरस्तू हेतु और पहली शताब्दी ईसा पूर्व में रोमन दार्शनिक मार्कस तुल्लीअस सिसरो हेतु लंबे समय तक उनकी रूचि का विषय रहा है जिन्होंने अपने समय में समाज को समझने में अत्यधिक योगदान दिया। मानव समाज के व्यवस्थित अध्ययन का उन्होंने प्रयास किया, मुख्य रूप से समाज, दर्शन, राजनीति, कानून एवं राज्य के सामान्य विवेचन पर। 16वीं शताब्दी ईस्वी तक समाज एवं राज्य से संबंधित थॉमस हॉब्स एवं मेकियावेली के अध्ययन (कार्य) समाज एवं राज्य की अवधारणाओं को समझने हेतु प्रभावशाली रहे। यूरोप में पुनर्जागरण के प्रभाव के बाद 18वीं शताब्दी ईस्वी तक, वहां अनेक प्रतिष्ठित दार्शनिक हुए जिन्होंने समाज को समझने में अपना अत्यधिक योगदान दिया और उन दार्शनिकों में रूसो, विको एवं बैरन डी मोंटेस्क्यू भी सम्मिलित थे जिन्होंने उस समय की सामाजिक घटनाओं का सामना किया। इन प्रारंभिक कार्यों ने निश्चित रूप से सामाजिक विज्ञान के विकास एवं समाजशास्त्र और मानव विज्ञान सहित मानव समाज के विज्ञान हेतु दार्शनिक आधारशीला की नींव रखी। मानव समाज के अध्ययन हेतु सकारात्मकता ने समाज की अवधारणा को किसी दैवीय अथवा ईश्वर प्रदत्त स्थिति से बदलकर रख दिया जिसे अब मानव की उपलब्धि के रूप में देखा जा सकता है। इसने समाज के उद्देश्य को संभव बना दिया तथा मानव प्रयास एवं कार्रवाई के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन की धारणा की भी पेशकाश की।

हालांकि यूरोप में 18वीं एवं 19वीं शताब्दी में होने वाले विभिन्न बौद्धिक एवं सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तन समाजशास्त्र के प्रादुर्भाव हेतु सबसे महत्वपूर्ण कारक रहे हैं। यूरोप में फ्रांसीसी क्रांति एवं औद्योगिक क्रांति कुछ महत्वपूर्ण प्रभावों में सम्मिलित है। हालांकि, क्लाउड हेनरी सेंट साइमन ने "समाज के विज्ञान" के विचार का उपयोग किया, तथापि अगस्त कॉम्टे (1798-1857), वह फ्रांसीसी विद्वान् थे जिन्हें आम तौर पर समाजशास्त्र के उद्भव की नींव रखने का श्रेय जाता है। 'समाजशास्त्र' शब्द का प्रयोग 1838 में अगस्ट कॉम्ट द्वारा अपनी पुस्तक, *पॉजिटिव फिलॉसफी* में किया गया। सामाजिक घटना के व्यवस्थित अवलोकन एवं वर्गीकरण के आधार पर वह समाजशास्त्र को विज्ञान मानते हैं। हर्बर्ट स्पेंसर, अंग्रेज सामाजिक दार्शनिक समाजशास्त्र की नींव रखने वालों में अग्रणी है। मानव विज्ञान की जैविक समानता के आधार पर उनकी किताब *प्रिंसिपल्स ऑफ़ सोशियोलॉजी* (1876), उस समय की एक महत्वपूर्ण योगदान थी। अमेरिका में सामाजिक दार्शनिक, लेस्टर एफ वार्ड ने अपनी पुस्तक, डायनामिक सोशियोलॉजी (1883) द्वारा समाजशास्त्र के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया जो कि सामाजिक प्रगति एवं सामाजिक कार्रवाई की अवधारणाओं से संबंधित है परंतु वैज्ञानिक पद्धति का इस्तेमाल करके समाजशास्त्र के विकास में सबसे महत्वपूर्ण योगदान इमाइल दुर्खीम ने अपनी रचनाओं *रूल्स ऑफ़ सोशियोलॉजीकल मेथड* (1895) और *सुसाइड* (1897) में किया। समाजशास्त्र के अग्रणी मैक्स वेबर ने सामाजिक घटनाओं की सूझबूझ हेतु एक नए प्रकार के दृष्टिकोण को पेश किया। उनकी प्रसिद्ध रचनाओं में द प्रोटेस्टेंट एथिक एंड द स्पिरिट ऑफ कैपिटलिज्म तथा इकोनॉमी एंड सोसाइटी शामिल है। समाजशास्त्र के विकास में कार्ल मार्क्स ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया, हालांकि उनके योगदान समाजशास्त्र की सीमा को लांघकर काफी आगे जाते हैं। समाजशास्त्र से संबंधित उनकी सबसे लोकप्रिय किताब दास *कैपिटल* है। समाज शास्त्र के कुछ अन्य अग्रदूतों में *जॉर्ज हर्बर्ट मीड*, विल्फ्रेडो पारेतो, जॉर्ज साईमेल और फर्डिनेंड टोंनी के नाम शामिल हैं। समाज शास्त्र के इन अग्रदूतों का अनुसरण चार्ल्स हॉर्टन कूली, पिटिरिम सोरोकिन, सी राइट मिल्स, टैल्कॉट पार्सन्स, रॉबर्ट के मर्टन, इरविंग गोफमैन, जॉर्ज सी होमन्स, मिशेल फूको, जुर्गन हबर्मस, पियरे बौरदिएउ एवं एंथनी गिडेंस सहित अनेक प्रसिद्ध आधुनिक समाजशास्त्रियों ने किया।

2.4 मानव विज्ञान का उद्‌भव एवं इतिहास

मानव विज्ञान का क्षेत्र एक विविध एवं व्यापक क्षेत्र है जिसमें मनुष्यों एवं उनके संस्कृति- समाज का अध्ययन किया जाता है। वास्तविकता यह है कि इसे व्यापक विषय माना जाता है जो मानवों के अध्ययन और इसके विविध पहलुओं से संबंधित है। मानव विज्ञान और उसके शैक्षिक पेशे की विषय वस्तु प्राकृतिक विज्ञान एवं मानविकी से शुरू हुई। आज भी इसी प्रवृत्ति का अनुसरण किया जाता है। इस स्थिति का मुख्य कारण यह है कि इस विषय को 'मानव जाति के समग्र अध्ययन' के रूप में देखा जाता है। इसका प्रादुर्भाव इस बात के साथ हुआ है कि मनुष्य एक प्रजाति के रूप में विकसित हुए हैं और अन्य सभी प्राकृतिक प्रजातियों एवं घटनाओं के अनुरूप प्राकृतिक नियमों का अनुपालन करते हैं। मानव विज्ञान के अत्यधिक भिन्न विषय वस्तु को ध्यान में रखते हुए, मानव विज्ञान के बौद्धिक विकास और इसके उद्‌भव के बारे में व्यापक रूप से पता लगाना मुश्किल है। तथापि, इस विषय के प्रारंभ और विकास के रुझानों की पहचान व्यापक रूप से की जा सकती है। इसका ऐतिहासिक चित्रण सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान (ब्रिटेन में स्थापित सामाजिक मानव विज्ञान एवं संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रयोग की जाने वाली सांस्कृतिक मानव विज्ञान) पर केंद्रित हो सकता है क्योंकि यह समाजशास्त्र के साथ मानव विज्ञान की सबसे समीपवर्ती शाखा है।

समाजशास्त्र की भांति मानव विज्ञान के उद्‌भव एवं विकास को पाश्चात्य जगत में वैज्ञानिक विकास से सीधे सीधे जोड़ा जाता है। मानव विज्ञान की स्थापना ग्रीको रोमन पुनर्जागरण काल से हुई, खास तौर से 5वीं शताब्दी ईसा पूर्व में हेरोडॉटस के लेखन के साथ। वोगेट (1975:7) के अनुसार, हेरोडॉटस "को संभावित अग्रदूत के रूप में भी उद्धृत किया गया है, नृवंशविज्ञान के "जनक" के रूप में नहीं"। तत्कालीन ग्रीक दार्शनिक, खास तौर से, सुकरात, प्लेटो और अरस्तु ने भी मनुष्य और समाज के अध्ययन पर प्रभाव डाला। तदुपरांत, रोमन दार्शनिक मार्कस तुलियस सीसेरो ने भी मानव समाज के अध्ययन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। कई शताब्दियों के बाद कुछ दार्शनिकों ने समाज एवं राज्य के अध्ययन में रूचि लेनी शुरू की, खास तौर से 16वीं शताब्दी ईस्वी में। इन विद्वानों में थॉमस हॉब्स और मैकियावेली शामिल हैं। इससे पहले, 14वीं शताब्दी ईस्वी में नैतिक ऐतिहासिक दर्शन एवं सामाजिक घटनाओं के संरचनात्मक-कार्यात्मक विश्लेषण से संबंधित इब्न खलदुन के महत्वपूर्ण योगदान के बारे में उल्लेख किया जा सकता है।

यूरोप में पुनर्जागरण के प्रभाव के बाद 18वीं शताब्दी ईस्वी तक, वहां अनेक प्रतिष्ठित दार्शनिक हुए जिन्होंने समाज को समझने में अपना अत्यधिक योगदान दिया और उन दार्शनिकों में रूसो, विको एवं बैरन डी मोंटेस्क्यू भी सम्मिलित थे जिन्होंने उस समय की सामाजिक घटनाओं का सामना किया। इन प्रारंभिक कार्यों ने निश्चित रूप से सामाजिक विज्ञान के विकास एवं समाजशास्त्र और मानव विज्ञान सहित मानव समाज के विज्ञान हेतु दार्शनिक आधारशिला की नींव रखी। मानव विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान का विकास जो पहले के दार्शनिक एवं ऐतिहासिक अध्ययनों से आगे जाता है वह दो चरणों में सामने आया। प्रथम चरण (1725-1840) में "दार्शनिक वैज्ञानिक इतिहास से मनुष्य, समाज एवं सभ्यता के अध्ययन को अलग करने में सफल रहे और इस प्रकार उन्होंने एक सामान्य सामाजिक विज्ञान को तैयार किया" (वोगेट, 19 75: 41)। हालांकि, होबेल (1958) का यह मानना है कि "मानव विज्ञान मुख्य रूप से प्राकृतिक विज्ञान से प्रकट हुआ है एवं प्राकृतिक विज्ञान परंपरा का निर्वहन एक बड़े स्तर पर करता है" (पृष्ठ 9) और इसके स्थान पर इतिहास या दर्शन से नहीं। दूसरी ओर, मार्विन हैरिस (1979) का यह मत है कि मानव विज्ञान "इतिहास के विज्ञान के रूप में शुरू हुआ" (पृष्ठ 1)। इसके पहले के संबंध और मानव विज्ञान की

प्रकृति की समस्या ऐसी है कि 20वीं शताब्दी के मध्य में ई.ई. इवांस-प्रिचर्ड को भी ब्रिटिश मानव विज्ञान (खास तौर से सामाजिक मानव विज्ञान) की स्थिति से जूझना पड़ा। सामाजिक मानव विज्ञान की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए उन्होंने कहा कि "उन लोगों की राय व्यापक रूप से भिन्न है जो प्राकृतिक मानव विज्ञान के रूप में सामाजिक विज्ञान को मानते हैं एवं उन लोगों की तरह जो स्वयं उनकी (इवांस-प्रिचर्ड) भांति इसे एक मानविकी की विषय मानते हैं। यह अंतर शायद उस समय सबसे स्पष्ट होता है जब मानव विज्ञान एवं इतिहास के बीच के संबंधों पर चर्चा की जाती है "(इवांस-प्रिचर्ड, 1951:7)। एक विषय के रूप में मानव विज्ञान का विकास व्यापार, यात्रा एवं उपनिवेशीकरण हेतु यूरोप के लोगों का दुनिया के अन्य हिस्सों में फैलना था। मानव विविधता और भिन्नता को समझाने के प्रयासों के अंतर्गत मानव विज्ञान विकसित हुआ। इसे प्रारंभ में 'अन्य संस्कृतियों' के अध्ययन के रूप में भी जाना जाता था और इस तरह इसे समाजशास्त्र से अलग किया जाता था जिसे पाश्चात्य लोगों द्वारा उनके अपने समाज के अध्ययन के रूप में देखा जाता था।

दूसरे चरण (1840-1890) में "प्राकृतिक विज्ञान में एक स्थिर संतुलित मॉडल से एक गतिशील मॉडल में बदलाव हुआ। इसका अंत थर्मोडायनामिक और डार्विनियन विकासवादी सिद्धांत के परिचय के साथ हुआ "(वोगेट, 1975: 42)। मानव विज्ञान की तरह विविध क्षेत्रों के साथ, 1860 के दशक में एक सामान्य मानव विज्ञान विषय में एकीकृत करने हेतु प्रयास किया गया जो मनुष्य के प्रारंभिक इतिहास से जुड़ा होगा। 1870 तक और उसके बाद "मानव विज्ञान के एक विशिष्ट गुण ने खुद को प्रकट करना शुरू किया" और वह भी भौतिक मानव विज्ञान, प्रागैतिहासिक एवं नृवंशविज्ञान को एकीकृत करके (सीएफ, उपरोक्तानुसार)। इस अवधि में मानव विज्ञान के उद्भव को शैक्षिक विषय में शामिल किया गया है। यह भौतिक और जैविक क्षेत्र में वैज्ञानिक पद्धति की जीत की प्रेरणा के माध्यम से संभव हुआ जिसके बारे में उन्नीसवीं शताब्दी के मानवविज्ञानी मानते थे कि सामाजिक-सांस्कृतिक घटनाएं खोज करने योग्य कानूनी सिद्धांत थीं। यह दृढ़ विश्वास पूर्व अवधि की चाहत के साथ उनके अपने हितों में सम्मिलित हो गया तथा इसे अठारहवीं शताब्दी के ज्ञान एवं मानव जाति के सार्वभौमिक इतिहास की दृष्टि हेतु सामाजिक विज्ञान का नाम दिया गया (हैरिस, 1979:1)। हालांकि, उन्नीसवीं शताब्दी में यह एक शैक्षिक विषय के रूप में उभरा। कुपर (2018) के अनुसार, "1860 के दशक में मानव विज्ञान के आधुनिक प्रवचन को सुनिश्चित रूप दिया गया तथा जीवविज्ञान, भाषा विज्ञान, एवं प्रागैतिहासिक पुरातत्व विज्ञान में प्रगति से इसे बल मिला"। मानव विज्ञान का विभाजन अलग-अलग उप-विषयों (अथवा विशेष क्षेत्रों), अर्थात्, भौतिक अथवा जैविक मानव विज्ञान, पुरातत्व मानव विज्ञान, सामाजिक अथवा सांस्कृतिक मानव विज्ञान (जिसे सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान भी कहा जाता है), तथा भाषा वैज्ञानिक मानव विज्ञान – और कुछ इसमें मनोवैज्ञानिक मानव विज्ञान को सम्मिलित करेंगे, 19वीं सदी के बाद से 20वीं सदी के मध्य तक सामने आया। मानव विज्ञान की इन शाखाओं में से सामाजिक या सांस्कृतिक मानव विज्ञान (जिसे सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान भी कहा जाता है) समाजशास्त्र से मानव विज्ञान की सबसे नजदीकी शाखा है।

मानव विज्ञान (सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान) के अग्रदूतों में जो शामिल हैं वे हैं- लेविस हेनरी मॉर्गन (1818-1881), जॉन फर्ग्यूसन मैकलेनैन (1827-1881), सर एडवर्ड बर्नेट टेलर (1832-19 17), फ्रांज बोस (1858-19 42), सर जेम्स जॉर्ज फ्रैज़र (1854-19 41) एवं डब्ल्यू.एच.आर. रिवेर्सद्य कुछ दशक उपरांत (1920 के दशक से), मानव विज्ञान (सामाजिक-

सांस्कृतिक मानव विज्ञान), खास तौर से दो उत्कृष्ट मानवविज्ञानियों, अर्थात् ब्रोनीस्लाव मालिनोव्स्की एवं ए.आर. रैडक्लिफ-ब्राउन के लेखकीय कार्यों के साथ 'आधुनिक मानव विज्ञान' के रूप में विकसित हुआ। एक तरफ मालिनोव्स्की की किताब आर्गोनॉट्स ऑफ़ द वेस्टर्न पैसिफिक (1922) एवं रैडक्लिफ-ब्राउन के द अंडमान आइलैंडर्स (1922) सबसे प्रारंभिक महवपूर्ण आधुनिक रचनाएँ थीं जो स्पष्ट रूप से मानव विज्ञान के नए आधुनिक दौर के उद्भव को चिह्नित करती हैं। ये रचनाएँ मुख्य रूप से सैद्धांतिक अभिविन्यास के साथ गहन क्षेत्रीय कार्यों (नृवंशविज्ञान कार्यों) पर आधारित थीं। इन दोनों मानवविज्ञानियों की रचनाओं का प्रभाव शीघ्र ही ब्रिटेन से आगे उत्तरी अमेरिका तक पहुंच जिसे आम तौर पर सांस्कृतिक मानव विज्ञान का केंद्र माना जाता था। ऐसे अनेक मानवविज्ञानी भी थे जिन्होंने उस समय एवं बाद में आधुनिक मानव विज्ञान के विकास में अपना योगदान दिया परंतु वे लोग मालिनोव्स्की एवं रैडक्लिफ-ब्राउन की भांति प्रसिद्धि और ऊंचाई हासिल नहीं कर सके।

2.5 समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के मध्य समानताएं

समाजशास्त्र सामाजिक/सांस्कृतिक (सामाजिक-सांस्कृतिक) मानव विज्ञान के बहुत समीपवर्ती विषय है। इन दोनों के मध्य का संबंध इतना घनिष्ठ है कि वर्तमान समय में इनके बीच अंतर बहुत ही कम हो गया है। ऐसे कई प्रतिष्ठित मानवविज्ञानी हैं जो समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान, खास तौर से सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान के बीच घनिष्ठ संबंधों के पक्षधर हैं। उदाहरण के लिए, फ्रेज़र, शायद पहले मानव विज्ञानी है, जिन्होंने सामाजिक मानव विज्ञान के प्रथम प्रोफेसर के रूप में 1908 में अपने उद्घाटन भाषण में यह परिभाषित किया कि "सामाजिक मानव विज्ञान समाजशास्त्र की एक शाखा है जिसका संबंध आदिम समाजों से है" (रैडक्लिफ-ब्राउन, 19522; सी एफ, वोगेट, 1975: 143)। फ्रैज़र के अनुसार, " समाजशास्त्र को समाज के सबसे सामान्य विज्ञान के रूप में देखा जाना चाहिए। सामाजिक मानव विज्ञान समाजशास्त्र का एक हिस्सा होगा, जो "मूल अथवा प्रारंभिक चरणों, मानव समाज के प्रारंभिक चरण तक सीमित है। फ्रैज़र ने सामाजिक मानव विज्ञान को जंगली जीवन के अध्ययन तक सीमित करते हुए, मानव जाति के प्रारंभिक इतिहास एवं संस्थानों पर मनोवैज्ञानिक बल देते हुए वेट्ज़ और टेलर के विचारों को प्रतिबिंबित किया। (वोगेट, 1975: 143)।

रैडक्लिफ-ब्राउन (1983) के मतानुसार सामाजिक मानव विज्ञान 'तुलनात्मक समाजशास्त्र' है। 'तुलनात्मक समाजशास्त्र' शब्द से उनका तात्पर्य यह रहा होगा कि "वह विज्ञान जो मनुष्य के सामाजिक जीवन की घटनाओं एवं संस्कृति अथवा सभ्यता के अंतर्गत सम्मिलित सभी चीज़ों हेतु प्राकृतिक विज्ञान की सामान्यीकृत पद्धति को लागू करता है" (पृष्ठ 55)। इस तरह उनका विचार है कि सामाजिक मानव विज्ञान को भावसूचक दृष्टिकोण (ideo-graphic approach) (सामान्य वैज्ञानिक तथ्यों एवं प्रक्रियाओं की खोज वह भी सामान्य कानूनों से अलग) के स्थान पर 'नियमान्वेषी' दृष्टिकोण (nomothatic approach) (समाज के सामान्य कानूनों की) की खोज करनी चाहिए। यह "सामान्य कानून" (उपरोक्तानुसार) को स्थापित करने हेतु "एक विशेष घटना या कार्यक्रम" को प्रदर्शित करने की एक पद्धति है। ऐसे कई दूसरे मानवविज्ञानी भी हैं जो लोग उनके विचार से सहमत हैं। उदहारण के लिए, इवान्स-प्रिचर्ड, एक दूसरे प्रसिद्ध मानवविज्ञानी सामाजिक मानव विज्ञान को "सामाजिक अध्ययन की एक शाखा" मानते हैं, वह शाखा जो कि मुख्य रूप से आदिम समाजों के अध्ययन पर बल देती है" (1951:11)। उनका मत है कि "जब लोग समाजशास्त्र की बात करते हैं, तो सामान्य तौर पर वे लोग सभ्य समाजों की विशेष समस्याओं का मन ही मन अध्ययन करते हैं। अगर हम इस अर्थ को शब्द का रूप देते हैं, तो सामाजिक मानव विज्ञान

और समाज के बीच का अंतर केवल क्षेत्रानुगत का अंतर है (उपरोक्तानुसार)। ई.ए. होबेल के अनुसार, समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान के बीच संबंध "उनके अर्थ की व्यापकता और एकरूपता है।" दोनों के दोनों सामाजिक अंतर-संबंधों का अध्ययन हैं, अर्थात मनुष्य का मनुष्य के साथ संबंध" (1958:9)। लुसी मैयर (1965) और कई दूसरे मानवविज्ञानी सामाजिक मानव विज्ञान को समाजशास्त्र की 'शाखा' मानते हैं।

यद्यपि समाजशात्र से पहले मानव विज्ञान (भौतिक मानव विज्ञान सहित एकीकृत मानव विज्ञान) का प्रादुर्भाव हुआ और शुरुआत से ही इन दोनों के विषय वस्तुयों में खास तौर से सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान के बीच अंतर करना बहुत ही कठिन था। जहाँ मानव जाति एवं उससे संबंधित पहलुओं के समग्र अध्ययन के रूप में मानव विज्ञान को बनाया गया वहीं अगस्ट कॉम्टे ने यह भी माना है कि समाजशास्त्र मानव समाज का गहन अध्ययन होगा, और इस कारण समाजशास्त्र को "सभी विज्ञानों की रानी" कहा जाना चाहिए। मानव विज्ञान एवं समाजशास्त्र ने भी प्राकृतिक विज्ञान के महत्वपूर्ण तत्वों को किसी न किसी तरीके से आत्मसात करते हुए खुद को स्थापित किया, हालांकि मानव विज्ञान (एकीकृत मानव विज्ञान) की विषय-वस्तु ने खास तौर से भौतिक मानव विज्ञान एवं पुरातात्विक मानव विज्ञान के घटकों के कारण भौतिक विज्ञान के साथ इसके संबंध के कारण समाजशास्त्र की सीमा को पार किया है। यहां तक कि जब समाजशास्त्र एवं सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान के विषय स्थापित किये गए थे तब भी उनके बीच संबंध मौजूद थे। ये संबंध मुख्य रूप से उनकी विषय वस्तु एवं पद्धति में समानता के कारण हैं। फ्रेड डब्ल्यू वोगेट (1975) के अनुसार, समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान (खास तौर से सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान) के बीच का अंतर व्यापकता, अवधारणा एवं विधि के स्तर के स्थान पर अनुप्रयोग स्तर पर अधिक है। वे कहते हैं कि:

> प्रक्रियात्मक अंतर जिनके द्वारा प्रारंभिक समाजशास्त्रियों ने मानव विज्ञान एवं समाजशास्त्र को एक दूसरे से अलग करने और जोड़ने का प्रयास किया उससे संबंधित विषयों का ऐतिहासिक विकास हुआ। मानव विज्ञान एवं समाजशास्त्र दोनों विषयों ने विज्ञान, संयुक्त विवरण और सामान्यीकरण के मॉडल का अनुसरण किया। इन दोनों विषयों के बीच व्यावहारिक अंतर उस समय आया जब उनके संबंधित प्रतिपादकों ने फील्डवर्क शुरू किया (वोगेट, 1975: 144)।

सच्चाई यह है कि कई ऐसे विश्वविद्यालय एवं कॉलेज थे जहां विश्व के कई विश्वविद्यालयों में एक ही विभाग में समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान मौजूद थे। 20वीं शताब्दी की शुरुआत में इन दोनों के संबंधित शैक्षिक विषयों की स्थापना के साथ उनके बीच अंतर अधिक दिखाई देने लगा। वर्तमान समय में यह संबंध और भी घनिष्ठ हो रहा है जिसके चलते विषय आधारित चारदीवारी के रखरखाव के बावजूद भी दोनों के बीच अंतर करना मुश्किल हो रहा है। इन दोनों विषयों का संबंध इनकी अवधारणाओं का एक दूसरे में उपयोग की आवश्यकता एवं समान सैद्धांतिक एवं अनुसंधान समस्याओं तथा उनके निष्कर्षों की ज़रुरत की वजह से भी है। सच्चाई यह है कि इन दोनों विषयों को अपने आप को मजबूत करने और समाज के अध्ययन की व्यापकता हेतु न्याय करने के लिए एक-दूसरे की जरूरत है ।

पश्चिमी विद्वानों के अनुसार उनके बीच मुख्य अंतर यह था कि जहाँ समाज मानव विज्ञान 'दूसरों' का अध्ययन था वहीं समाजशास्त्र अपने समाज का; गैर पश्चिमी विद्वानों के विषय-वस्तु 'दूसरों' की भांति विषय-वस्तु बन गए तब दोनों विषयों के बीच का अंतर गौण हो गया। उदाहरण के लिए जब पश्चिमी विद्वान जाति को सामाजिक मानव विज्ञान के रूप में अध्ययन करेंगे तब भारतीय विद्वानों के लिए यह समाजशास्त्र भी हो सकता है।

गैर-यूरोपीय एवं गैर-पश्चिमी क्षेत्रों में, खास तौर से 'तीसरी दुनिया' देशों के संदर्भ में "सिद्धांत एवं पद्धति के स्तर पर सामाजिक मानव विज्ञान एवं समाजशास्त्र के बीच अंतर बहुत कमजोर है" (जैन 1986:1)। भारतीय संदर्भ में समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान के बीच कई मामलों में अंतर करना और भी कठिन हो गया है। इन समानताओ में भारतीय विश्वविद्यालयों में पद्धति, सिद्धांतों एवं शोध अध्ययनों के क्षेत्र में समान पाठ्यक्रम सम्मिलित हैं। इसमें कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है कि भारत में समाजशास्त्र के कई प्रसिद्ध शोध ग्रामीण ढांचों के साथ गांव पर केंद्रित अध्ययन हैं जिसे सामाजिक मानव विज्ञान का पारंपरिक क्षेत्र माना जाता है। यह भी सच है कि भारत के कुछ प्रसिद्ध समाजशास्त्री प्रशिक्षित सामाजिक मानवविज्ञानी हैं। सच्चाई यह भी है कि भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान परिषद् (आईसीएसएसआर) सामाजिक विज्ञान की शीर्षक केंद्रीय वित्तीय निधिकरण संस्था समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान को एक ही यूनिट के अंतर्गत मानती है। वर्तमान समय में यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि समाजशास्त्र विभागों या सामाजिक अनुसंधान कार्यों में संकाय सदस्य के रूप में कई सामाजिक मानवविज्ञानियों को रखा गया है?

2.6 समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के मध्य भिन्नताएँ

यद्यपि विषय वस्तु, रुचि, सिद्धांतों एवं पद्धति की समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के क्षेत्र में परस्पर व्यापकता है तथापि इनके बीच कुछ अंतर भी हैं। सबसे पहला और प्रमुख अंतर विषयों की व्यापकता की परिभाषा में निहित है। इस समाजशास्त्र समाज का अध्ययन (अथवा विज्ञान) है, जबकि मानव विज्ञान (एकीकृत मानव विज्ञान) मनुष्य और उन सब चीजों का अध्ययन है जो मानव से संबंधित है। हालांकि समाजशास्त्र एवं सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान के बीच अंतर (जिस पर अब प्रकाश डाला जाएगा) बहुत सीमित है।

समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के बीच मुख्य अंतर उनके ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के माध्यम से पता लगाया जा सकता है। आम तौर पर मानव विज्ञान को "दर्शन मूलाहीन" माना जाता है जबकि समाजशास्त्र में दर्शन मौजूद है (सराना 1983:14)। जबकि औद्योगिक क्रांति एवं फ्रेंच क्रांति से हुए महान सामाजिक परिवर्तन के बाद समाजशास्त्र के प्रादुर्भाव को मुख्य रूप से सामाजिक परिवर्तन (यूरोपीय सामाजिक संदर्भ में) लाने के प्रयास हेतु जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, मानव विज्ञान के प्रादुर्भाव पर इनका प्रभाव नहीं था जैसे कि समाजशास्त्र या अन्य सामाजिक विज्ञान पर प्रत्यक्ष रूप से इनका प्रभाव था; बल्कि यह यूरोपीय विद्वानों को यूरोपीय समाज से बाहर निकलने एवं पूर्व-साक्षर समाजों ('अन्य' गैर-यूरोपीय समाज) का अध्ययन करने हेतु बौद्धिक एवं भौगोलिक स्थान खोलने का अप्रत्यक्ष प्रभाव था। (सी.एफ. एफ. एरिक्सन एट अल 2001; सराना 1983)। मरियम वेबस्टर डिक्शनरी के अनुसार, "एंथ्रोपोलॉजी शब्द 16वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में प्रकाश में आया" – अंग्रेजी शब्द 'एंथ्रोपोलॉजी' वर्ष 1805 में पहली बार प्रकाश में आया (मैक्जी एवं वारम्स, 2012; 6) जबकि समाजशास्त्र शब्द बाद में 1838 में बनाया गया ।

समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान (सामाजिक-सांस्कृतिक) के मध्य अभिरुचि के क्षेत्रों का मूल ध्यान विचलन के मुख्य कारकों में से एक रहा है। समाजशास्त्र समाज के अध्ययन मुख्य अभिव्यक्ति के साथ शुरू हुआ और वह भी एक सामान्यीकृत सामाजिक विज्ञान के रूप में, खास तौर से सामाजिक घटनाओं को समझाने हेतु एक बड़े सामाजिक संदर्भ पर ध्यान केंद्रित करते हुए। यह औद्योगिक समाजों (पश्चिमी समाजों, खास तौर से यूरोपीय) के अध्ययन पर बल देता है जिन्हें आधुनिक समाज माना जाता है। दूसरी ओर मानव विज्ञान की प्रारंभिक मुख्य अभिरुचि गैर-यूरोपीय एवं/अथवा गैर-पश्चिमी समाजों के 'अन्य'

विदेशज समुदायों का अध्ययन था। इस करण उनका ध्यान एवं अभ्यास यूरोप अर्थात पश्चिमी समाजों के बाहर स्थित सरल, लघु-स्तरीय एवं पूर्व-साक्षर समाजों के अध्ययन पर ही था। यह प्रवृत्ति खास तौर से 20वीं शताब्दी के मध्य समय से बदल गई जब मानवविज्ञानियों ने अपने क्षेत्रीय अध्ययनों को आधुनिक एवं शहरी ढांचों तक फैलाया, जबकि समाजशास्त्रियों ने ग्रामीण एवं सरल समाजों के अध्ययन की ओर अपना रुख किया ।

समाजशास्त्र एवं सामाजिक-सांस्कृतिक मानव विज्ञान के मध्य दूसरा अंतर इनकी पद्धति, खास तौर से विधियों एवं अनुसंधान की तकनीक हो सकता है। समाजशास्त्रियों ने आंकड़ा एकत्र करने एवं सांख्यिकीय तकनीकों की सहायता से आंकड़ों के विश्लेषण हेतु प्रश्नावली जैसे मात्रात्मक तरीकों को बड़े पैमाने पर अपनाया है। मानव विज्ञान क्षेत्र आधारित विज्ञान के रूप में शुरू हुआ। मुख्य रूप से मानवविज्ञानी अन्य विधियों एवं तकनीकों के साथ गुणात्मक तरीकों का भी उपयोग करते हैं, खास तौर से वे 'प्रतिभागी प्रेक्षण' का उपयोग करते हैं। मानवविज्ञानी क्षेत्रों में जाते हैं एवं कई महीनों तक अथवा यहां तक कि कई वर्षों तक लोगों के साथ रहते हैं और उनके समाज का हिस्सा बनकर उनकी संस्कृति को सीखते हैं। हालांकि लम्बे समय की दौर में अनुसंधान विधियों एवं तकनीकों के उपयोग में अंतर आ गए हैं क्योंकि समाजशास्त्रियों ने गुणात्मक तरीकों को व्यापक रूप से अपनाना शुरू कर दिया है, जबकि मानवविज्ञानी भी गुणात्मक तरीकों के साथ मात्रात्मक तरीकों का उपयोग करना शुरू कर चुके हैं। समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के बीच अंतर इन दोनों विषयों के प्रारंभिक प्रतिपादकों के ऐतिहासिक विकास के कारण भी था, खासतौर से जिस प्रकार से उन्होंने अपने फिल्ड कार्य किए। इस संबंध में, वोगेट (1 975: 144) लिखते हैं: उस समय (प्रारंभिक विकास अवस्था) मानव विज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों ने खुद को एवं अपने विषयों को उस आधार पर अलग नहीं किया जो उन्होंने कहा अपितु उन्होंने अपने कार्यों द्वारा खुद को अलग किया। मानव विज्ञानी ट्रोब्रिंडर्स, जुलस एवं जुनीस के जीवन शैली को रिकॉर्ड करने हेतु मैदान में आए, जबकि समाजशास्त्रियों ने जनगणना के आंकड़ों, साक्षात्कार एवं प्रश्नावली से पश्चिमी देशों के शहरी जीवन पर जानकारी संकलित की। पूर्व-औद्योगिक लोगों की मान्यताओं, रीति-रिवाजों, रस्मों, कला, प्रौद्योगिकी एवं सामाजिक संगठन के बारे में स्वयं तथ्यों को एकत्रित करने की जरुरत ने मानव विज्ञान पर एक स्थायी प्रभाव डाला एवं नवीन आंकड़ों संग्रह पर हर दम जोर दिया गया।

20वीं शताब्दी के मध्य तक अथवा बाद के सायं तक समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान की प्रकृति की भिन्नता को होबेल (1958) के कथन से संक्षेपित किया जा सकता है, जिस पर वह मुख्य रूप से निम्न ऐतिहासिक कारणों से विचार करते हैं:

> "प्रत्येक क्षेत्र (समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान - यहां तक कि सामाजिक मनोविज्ञान की भी) की एक अलग पृष्ठभूमि रही है जिनके द्वारा जांच के कुछ भिन्न तरीकों का इस्तेमाल किया जाता है, और उनके पारंपरिक दृष्टिकोण एवं अवधारणाओं में अंतर है। मानव विज्ञान संस्कृति एवं सम्पूर्ण समाज के संदर्भ में कार्य करने पर बल देता है। समाज शास्त्र जटिल पश्चिमी समाज के पहलुओं के संदर्भ में कार्य करने पर बल देता है। मानव विज्ञान मुख्य रूप से प्राकृतिक विज्ञान से निकला है एवं इसमें प्राकृतिक विज्ञान की परंपरा का बड़े स्तर पर प्रयोग होता है। फिर भी अध्ययन के इन दोनों क्षेत्रों के बीच पद्धतिगत भिन्नताएँ प्रत्येक वर्ष कम हो जाते हैं, क्योंकि मानव विज्ञान अधिक विश्लेषणात्मक तथा समाजशास्त्र अधिक उद्देश्यपरक बन जाता है, जिससे आज इनके बीच अंतर करना सुविधाजनक है। मानव विज्ञानी मुख्य रूप से आदिम लोगों के समाज पर ध्यान देते हैं और समाजशास्त्री हमारे अपने (यूरोपीय एवं/अथवा पश्चिमी समाजों) समकालीन सभ्यता पर ध्यान केंद्रित करते हैं "(पृष्ठ .9)।

अलग-अलग देशों एवं संदर्भों में समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान के बीच संबंध एक समान नहीं रहा है। "समाजशास्त्र क्या है?" की अवधारणा एवं विचार तथा "सामाजिक मानव विज्ञान क्या है?" के सवाल के जबाब में क्षेत्रीय विविधता आ जाती है। इस संबंध में बेते (1974) वर्णन करते हैं कि:

> यूनाइटेड किंगडम में समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान के बीच विभिन्नता के उद्देश्य की स्थिति महानगरीय देश एवं उपनिवेशों में समाज एवं संस्कृति के बीच का अंतर था, खास तौर से संयुक्त राज्य अमेरिका में यह औद्योगिक शहर में आदिवासी बस्तियों के जीवनशैली के बीच का अंतर था। अमेरिकी शहर की आक्रामक, विस्तृत जगत एवं अमेरिकी बस्तियों की स्थिर, मौत की दुनिया की तुलना में कोई भी दो अलग-अलग संसार नहीं हो सकते। अतः इसमें थोड़ा आश्चर्य होता है कि समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान के बीच अंतर को किसी भी दूसरे देश की तुलना में संयुक्त राज्य अमेरिका में अधिक चिह्नित किया गया। फिर भी यह कोई घटना नहीं हो सकती है कि यूनाइटेड किंगडम में साम्राज्य की क्षति के उपरांत इन दोनों के बीच अंतर कम चिह्नित हो गए जिसने महानगरीय देश एवं उपनिवेशों के बीच की भिन्नता की गति को कम कर दिया (पृष्ठ 703)।

ब्रिटेन में एक सामान्य अवधारणा यह भी है जो " खुद में एवं मूल निवासियों के बीच एक साधारण अंतर लाता है; जब उन्होंने खुद का अध्ययन किया तो वे समाजशास्त्री बन गए और जब उन्होंने मूल निवासियों का अध्ययन किया तो वे सामाजिक मानवविज्ञानी बन गए ... यहां अमेरिका वालों हेतु भी समान अंतर करने की प्रवृत्ति है, हालांकि वह स्पष्ट रूप से नहीं है । जब वे अपने समाज एवं संस्कृति के मूलाधार का अध्ययन करते हैं तो वे समाजशास्त्री बन जाते हैं। और जब वे अन्य समाजों एवं संस्कृतियों खासकर अफ्रीका, एशिया एवं लैटिन अमेरिका (अथवा अपने समाज के कमजोर समूह) का अध्ययन करते हैं तो वे जातीय समाजशास्त्री बन जाते हैं। बहुत ही दुख की बात है कि कुछ भारतीय अब यह महसूस करते हैं कि उन्हें खुद के बीच के अंतर को जानने के लिए इसी पद्यति का इस्तेमाल करना चाहिए " (बेते, 1974:704)।

थर्ड वर्ल्ड के देशों, खास तौर से भारत के संदर्भ में, समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान का संबंध संदिग्ध है। 1920 के दशक में जब भारत में समाजशास्त्र को शुरू किया गया, उस समय "समाजशास्त्र ने अपनी वैधता पहले ही स्थापित कर ली थी; और इस विषय में कुछ जगहों पर अपना स्थान बना लिया था पर सभी पश्चिमी विश्वविद्यालयों में इसे स्थान नहीं मिला था और इस आधार पर भारतीय समाजशास्त्रियों के लिए अपने विश्वविद्यालयों में इसके लिए जगह अथवा सीट का दावा करना अपेक्षाकृत सरल था" (बेते, 2004: 5)। वास्तविकता यह भी है कि "भारतीय विश्वविद्यालय प्रणाली में हमें समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान के बीच जो अंतर दिखाई देता है वह भारतीय विद्वानों द्वारा स्वयं नहीं बनाया गया, अपितु पश्चिम से अधिगृहित किया गया। पश्चिमी देशों में ही यह अंतर दोनों विश्व युद्धों के बीच की अवधि में सबसे अधिक उभर कर सामने आया और यह वह समय था जब भारत में समाज एवं संस्कृति विज्ञान अपनी जड़ें जमा रहा था। यदि आज इस भिन्नता से कई भारतीय सामाजिक वैज्ञानिक परेशान हैं, तो ऐसा इसलिए क्योंकि यह उनके कार्य की परिस्थितियों के अनुरूप नहीं है, जो कि किसी भी मामले में मुख्य स्रोत नहीं था, जिससे यह विकसित हुआ " (बेते, 1974: 703)। सच्चाई यह है कि "भारत में कार्य के उद्देश्य की स्थिति बहुत भिन्न है, हालांकि पुराने लेबल अब भी इस्तेमाल किये जाते हैं। लगभग सभी भारतीय – चाहे वे 'समाजशास्त्री' हो या 'सामाजिक मानवविज्ञानी'- वे

भारतीय समाज के किसी न किसी क्षेत्र का अध्ययन करते हैं, जो पूर्ण रूप से न तो बहुत आदिम है और न ही बहुत उन्नत। जब कोई भारतीय 'आदिवासी' गांव का अध्ययन करता है तब वह एक 'मानवविज्ञानी' होता है और जब वह 'गैर आदिवासी' गांव का अध्ययन करता है तो वह एक 'समाजशास्त्री' होता है; अथवा जब वह किसी गांव, आदिवासी अथवा गैर-आदिवासी का अध्ययन करता है, तो वह एक 'मानवविज्ञानी' होता है, परंतु जब किसी नगर या शहर का अध्ययन करता है, तो वह 'समाजशास्त्री' होता है (उपरोक्तानुसारः 703-704)। इसलिए बेते का यह मानना है कि भारत में "आदिवासी' और 'गैर आदिवासी' 'गांव के बीच का अंतर, अथवा गांव और शहर के अंतर संयुक्त राज्य अमेरिका में शहर और बस्तियों के बीच का अंतर अथवा महानगरीय देशों के बीच और ब्रिटिश साम्राज्य में कॉलोनी के बीच के अंतर से एकदम भिन्न प्रकार का होता है " (उपरोक्तानुसारः 704)।

2.7 सारांश

मानव विज्ञान के साथ समाजशास्त्र का संबंध वास्तव में बहुत घनिष्ट है। ये दोनों विषय एक दूसरे से इतने मिलते जुलते हैं कि इनकी व्यापकता, अभिरुचि क्षेत्रों, सिद्धांतों, पद्धति, और अनुप्रयोग में अंतर करना मुश्किल है। जिन परंपराओं में उन्हें विकसित किया गया था उनके जांच के वांछित क्षेत्रों में भी सम-मिलन (एकरूपता) था। इस कारण समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान दोनों मानव समाज का अध्ययन करते हैं और बड़े पैमाने पर अपनी अपनी सैद्धांतिक समस्याओं और अभिरूचियों को एक दूसरे से साझा करते हैं। इसी कारण कई विद्वान् सामाजिक मानव विज्ञान को समाजशास्त्र या समाजशास्त्र की शाखा मानते हैं। इनकी समानताओं के बावजूद, दोनों विषयों के बीच भिन्नता भी हैं जो कि प्रारंभिक विकास अवस्था के बाद के चरणों तक और इन क्षेत्रों के संदर्भ में और जांच की ज़रुरत, पद्धति, सिद्धांतों एवं अभ्यास के प्रयोग की प्राथमिकता के आधार पर देखे जा सकते हैं। हालांकि इस प्रकार की अंतर संक्षेप में मामूली हैं परन्तु विश्वविद्यालय प्रणालियों में भिन्न-भिन्न शैक्षिक विषयों एवं विभागों के विकास को देखते हुए ये अपने आप में भिन्नता के मामले भी बन जाते हैं। एक और महत्वपूर्ण पहलू जिस पर विचार करने की जरुरत है, वह है समाजशास्त्र और सामाजिक मानव विज्ञान की अवधारणा की अस्पष्टता, विशेष रूप से भारत सहित थर्ड वर्ल्ड के देशों के संदर्भ में। समाजशास्त्र और सामाजिक मानव विज्ञान जिस प्रकार पश्चिम के आविष्कार हैं, उनकी संकल्पना और अनुभूति तथा साथ ही उसके प्रयोक्ता उलझे हुए और दागदार हैं। सच्चाई यह है कि पश्चिमी समाजशास्त्री खास तौर से अमेरिका एवं ब्रिटेन में समाजशास्त्रियों को 'सामाजिक' या 'सांस्कृतिक' मानवविज्ञानी उस समय मानते हैं जब अनुसंधान अध्ययन जनजातीय आदिवासी और/या ग्रामीण क्षेत्रों और औपनिवेशिक देशों में भी होते हैं। दूसरी ओर वे समाजशास्त्रियों को 'समाजशास्त्री' तब मानेंगे जब वे समाजशास्त्री 'शहरी' और/अथवा 'उन्नत' समाजों का अध्ययन करेंगे। भारतीय समाजशास्त्रियों के संदर्भ में भी यह बात सत्य है। इसलिए, पश्चिमी समाजशास्त्रियों के परिप्रेक्ष्य में सभी भारतीय समाजशास्त्री इस तथ्य हेतु सामाजिक मानवविज्ञानी हैं क्योंकि भारत में समाजशास्त्री किसी न किसी समय 'आदिवासी' एवं 'ग्रामीण' समुदायों तथा शहरी समुदायों दोनों का अध्ययन करते हैं। दूसरी बात यह है कि भारत में कई प्रशिक्षित मानवविज्ञानियों ने भारत में समाजशास्त्र की स्थापना के प्रारंभिक अवस्था से ही समाजशास्त्र को आत्मस्वीकृत किया है। इसके अतिरिक्त समाजशास्त्रियों एवं सामाजिक मानवविज्ञानियों द्वारा विधियों एवं तकनीकों के उपयोग (या निगमन) की बढ़ती प्रवृत्ति जोकि परंपरागत रूप से समाजशास्त्र या सामाजिक मानव विज्ञान के क्षेत्र के रूप में भिन्न-भिन्न विषयों के रूप में थी उसने भारत में समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानव विज्ञान के बीच अंतर्संबंधो को आगे बढ़ाया है। यदि यह प्रवृत्ति कोई संकेतक समाजशास्त्र और सामाजिक मानव विज्ञान है तब संभावना है कि इन दोनों विषयों के घनिष्ठ संबंध भविष्य में भी जारी रहेंगे?

2.8 अभ्यास प्रश्न

1) समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के प्रादुर्भाव के बारे में चर्चा करें।

2) समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान की समानताओं एवं भिन्नताओं की जांच करें।

3) विशेष रूप से भारत के संदर्भ के साथ समाजशास्त्र एवं मानव विज्ञान के संबंधों पर चर्चा करें।

2.9 संदर्भ

बीटी, जॉन, 1980 (1964), अदर कल्चर्स, लंदन एवं हेनलीः रूटलेज एंड कीगेन पॉल

बेते, आंद्रे, 1974 "सोशियोलॉजी एंड इथ्नोसोशियोलॉजी" इंटरनेशनल सोशल साइंस जर्नल, खंड ग्टप् संख्या 4 पेरिस यूनेस्को

बेते, आंद्रे, 2004 "सोशियोलॉजीः एस्से ऑन अप्रोच एंड मेथड (तृतीय संस्करण), नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, प्रेस

एरीकसेन, थॉमस हालैंड एंड फिन सिवर्ट निलसन, 2001, ए हिस्ट्री ऑफ एंथ्रापोलॉजी (द्वितीय संस्करण), न्यूयार्क, प्लूटो प्रेस

इवांस-प्रिचार्ड, ई,ई, 1951, सोशल एंथ्रापोलॉजी, लंदनः कोहन एंड वेस्ट लिमिटेड

हेरिस, मार्विन, 1979 (1969) द राइज ऑफ एंथ्रापोलॉजिकल थ्योरी, लंदन एंड हेनलेः रूटलेज एंड केगेन पॉल

हैबेल, ई.ए. 1958, मेन इन द प्रिमिटिव वर्ल्ड, न्यू यॉर्क/लंदन/टोरंटोः मेकग्रा-हिल बुक कंपनी, आईएनसी

जैन, आर.के. 1986, "सोशल एंथ्रापोलॉजी ऑफ इंडियाः थ्योरी एंड मेथड्स" सर्वे ऑफ रिसर्च इन सोशियोलॉजी एंड सोशल एंथ्रापोलॉजी (पृ. 1-50) नई दिल्लीः इंडियन काउंसिल ऑफ सोशल साइंस रिसर्च

कूपर, आदम जे, 2018 "हिस्ट्री ऑफ एंथ्रापोलॉजी" इन साइक्लोपीडिया बिटेनिका ("एंथ्रापोलॉजी") https:@@www-britannica-com@science@anthropology (20 जुलाई 2018)

मेर, लूसी, 1965 एन इंट्रोडक्शन टू सोशल एंथ्रोपोलॉजी, ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस,

मेलीनोंस्की, ब्रॉनीसलॉ, 1922, अर्गोनोट्स ऑफ द वेस्टर्न पेसिफिकः एन एकाउंट ऑफ नेटिव एंटरप्राइज एंड एडवेंचर इन द आर्किपेलागॉज ऑफ मेलेनिशयन न्यू ग्यूना, लंदनः जॉर्ज रूटलेज एंड संस लिमिटेड

मेकगी, आर.जे. एवं वार्म्स, आर.एल. (2012) एंथ्रापोलॉजिकल थ्योरीः एन इंट्रोडक्ट्री हिस्ट्री (पांचवा संस्करण) यूएसएः मेकग्रा-हिल।

रेडक्लिफ-ब्राउन, ए.आर. 1922, द अंडमान आयरलैंडर्स, लंदनः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस

रेडक्लिफ-ब्राउन, ए.आर. 1952, स्ट्रक्चर एंड फंक्शन इन प्रिमिटिव सोसायटीः एस्सेज एंड एड्रेस, ग्लेनोइ, इलियोनोइसः द फ्री प्रेस।

रेडक्लिफ-ब्राउन, ए.आर. 1983 (1958) मेथड इन सोशल एंथ्रापोलॉजी, शिकागो, इलियोनोइसः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस

सरना, गोपाला (1983) सोशियोलॉजी एंड एंथ्रापोलॉजी एंड अदर एस्सेज, कलकत्ताः इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल रिसर्च एंड एप्लाइड एंथ्रापोलॉजी।

वोगेट, फ्रेड डब्ल्यू 1975, ए हिस्ट्री ऑफ इथोनोलॉजी, यूएसएः हॉल्ट, राइनहर्ट एंड विंस्टन

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 3 समाजशास्त्र का मनोविज्ञान से संबंध

संरचना

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 समाजशास्त्र की परिभाषा

3.2.1 मनोविज्ञान की परिभाषा

3.3 समाजशास्त्र और मनोविज्ञानःअन्तर्सम्बन्ध

3.4 सामाजिक मनोविज्ञानः ऐतिहासिक विकास

3.4.1 सामाजिक मनोविज्ञान की परिभाषा

3.4.2 समाजशास्त्र और मनोविज्ञान का सामाजिक मनोविज्ञान से अंतःविषयक सम्बन्ध

3.4.3 सामाजिक मनोविज्ञान का विषय-क्षेत्र

3.5 समाजशास्त्रीय उपकरण

3.5.1 समाजशास्त्रीय परिकल्पना

3.5.2 मान्यताएं एवं मूल्य

3.5.3 संस्कृति

3.5.4 भूमिका एंव स्तर

3.5.5 सामाजीकरण

3.6 सामाजिक मनोविज्ञान में प्रयोग होने वाले समाजशास्त्र के विचार एवं तरीके

3.6.1 मध्यम श्रेणी के सिद्धांत

3.7 सामाजिक मनोविज्ञान की समाजशास्त्रीय क्षेत्र में संभावनाएं

3.7.1 सांकेतिक आदान-प्रदान

3.7.2 सामाजिक ढांचा एवं व्यक्तित्व

3.7.3 सामूहिक पद्धतियां

3.8 सामाजिक मनोविज्ञान में अनुसंधान के उद्देश्य

3.9 समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान का महत्व

3.10 सारांश

3.11 संदर्भ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप जानेंगे :

- समाजशास्त्र व सामाजिक मनोविज्ञान की परिभाषाएं;
- समाजशास्त्र व सामाजिक मनोविज्ञान के सरोकार;
- समाजशास्त्र और सामाजिक मनोविज्ञान में संबंध;
- समाजशास्त्र और मनोविज्ञान मिलकर एक नए विषय को जन्म देते हैं जिसे समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान कहा जाता है। सामाजिक मनोविज्ञान यह समझाता है कि व्यक्तिगत संबंधों पर समाज का क्या प्रभाव पड़ता है;

*डॉ. राजश्री चंचल, सहायक प्रोफसर एयूडी, दिल्ली

- सामाजिक मनोविज्ञान का ऐतिहासिक विकास कैसे हुआ; तथा
- सामाजिक मनोविज्ञान में समाजशास्त्र की कौन-कौन सी अवधारणाओं व पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है।

3.1 प्रस्तावना

सभी जीव धारियों में केवल मनुष्य ही सोचने और अपने आसपास के वातावरण का सार्थक इस्तेमाल करने की क्षमता रखता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समूह बनाकर रहना पसंद करता है। ज्यों ज्यों मानव समाज का विकास होता गया है विद्वानों का यह प्रयास रहा है कि वे विभिन्न देशकालों में मनुष्यों की सामाजिक व सांस्कृतिक गतिविधियों को समझें तथा उन्हें लिपि बद्ध करें। मनुष्यों की प्रकृति तथा उनके संबंधों के प्रति समाज की खोज के फलस्वरूप समाज विज्ञानों की कोख से समाजशास्त्र, मनोविज्ञान तथा इतिहास जैसे महत्वपूर्ण विषयों का जन्म हुआ। इन सभी विषयों में समाजशास्त्र एक ऐसा विषय है जो मानव समाज तथा उसमें रहने वाले मनुष्यों के अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन करता है। समाजशास्त्र की तरह ही मनोविज्ञान के अध्ययन का केंद्रीय विषय भी मनुष्य ही है। अब प्रश्न यह उठता है कि क्या समाजशास्त्र और मनोविज्ञान का आपस में कोई संबंध है? क्या इन दोनों विषयों के सिद्धांतों के माध्यम से मनुष्यों की सामाजिक व मनोवैज्ञानिक स्थितियों को अच्छी तरह समझा और जाना जा सकता है। इस इकाई में हम समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान की प्रकृति को समझेंगे तथा सामाजिक मनोविज्ञान के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त करेंगे।

3.2 समाजशास्त्र की परिभाषा

समाजशास्त्र के जनक के रूप में ख्याति प्राप्त महान समाजशास्त्री ऑगस्टे कोम्टे को "समाजशास्त्र" शब्द सबसे पहले प्रयोग में लाने का श्रेय प्राप्त है। समाजशास्त्र समाज तथा मानवीय संबंधों के अध्ययन पर जोर देता है। ऐसा माना जाता है कि जब मनुष्य एक दूसरे के साथ रहने लगते हैं और परस्पर संबंधों के द्वारा एक दूसरे के निकट आते हैं तो उनके बीच अन्तर्सम्बन्ध बनने लगते हैं। इससे सामाजिक समूहों व समुदायों का जन्म होता है। पारस्परिक संबंधों की प्रगाढ़ता उन्हें एक दूसरे को गहराई से समझने तथा सहयोगी भूमिकाओं में खड़े होने के लिए प्रोत्साहित करती है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक स्वत्व तथा वैयक्तिक स्वत्व दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इसी आधार पर विद्वानों ने समाजशास्त्र को परिभाषित करने तथा उसकी विषय वस्तु की विशुद्ध व्याख्या करने के प्रयास किए हैं।

महान समाजशास्त्री ऑगस्टे कोम्टे ने समाजशास्त्र की विषय वस्तु को दो भागों में विभाजित किया है- सामाजिक स्थायित्व तथा सामाजिक गतिशीलता। सामाजिक स्थायित्व में समाज के विभिन्न घटकों के अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन शामिल है तथा सामाजिक गतिशीलता में समस्त समाजों को एक इकाई मानकर उनका विश्लेषण किया जाता है तथा यह जानने का प्रयास किया जाता है कि विभिन्न कालावधियों में उनका किस प्रकार विकास हुआ और उनमे कैसे कैसे बदलाव आए (इन्कलेस 1964)। एमिलदुरखेम के अनुसार - समाजशास्त्र सामाजिक तथ्यों का अध्ययन है। समाजशास्त्र को मानव जीवन का वैज्ञानिक अध्ययन कहा जा सकता है जिसमें मनुष्यों के सामाजिक सम्बन्ध, सामाजिक समूह तथा समाज का समग्र अध्ययन शामिल है। समाजशास्त्र का क्षेत्र बहुत व्यापक है जिसमें मनुष्यों के दिन प्रतिदिन के संपर्कों, संबंधों व सामान्य व्यवहारों से लेकर विश्वभर के समाजों का तुलनात्मक अध्ययन तक सब कुछ समाहित है।

3.2.1 मनोविज्ञान की परिभाषा

'मनोविज्ञान' शब्द का उद्भव ग्रीक भाषा के दो शब्दों, साईकी तथा लोगोस से हुआ है। साईकी का है अर्थ आत्मा अथवा प्राण तथा लोगोस का अर्थ ज्ञान या खोज अथवा अध्ययन है। मनोविज्ञान का विकास एक स्वतंत्र विषय के रूप में 1879 में हुआ, जब विल्हेल्म वुंड ने जर्मनी के लिपजिंग विश्वविद्यालय में मनोविज्ञान की प्रयोगशाला स्थापित की थी।

आरम्भ में मनोविज्ञान को "चेतना के विज्ञान" के रूप में परिभाषित किया गयाद्य सरल शब्दों में मनोविज्ञान को मानव-व्यवहारों तथा अनुभवों के सिलसिलेवार अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। मनोविज्ञानविदबैरन (1990) के अनुसार,"मनोविज्ञान मनुष्यों के व्यवहारों एवं उनकी अनुभूति प्रणालियों का विज्ञान है।" मनोविज्ञान के अध्ययन के दायरे में मनुष्य की मानसिक अनुभूतियां एवं संबंधित गतिविधियां जैसे धारणाएं, संज्ञान, भावनाएं तथा इन सभी का सामाजिक वातावरण पर प्रभाव आदिसब शामिल है।

3.3 समाजशास्त्र और मनोविज्ञानः अंतर्संबंध

समाजशास्त्र और मनोविज्ञान दोनों का सामाजिक विज्ञानों में सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। स्वतंत्र एवं प्रथक विषय होते हुए भी दोनों के अध्ययन के केंद्र में मानव जीवन के विविध पक्ष ही हैं। मनुष्यों के अतिरिक्त जीवधारियों की अन्य प्रजातियां अपने अस्तित्व को बनाए रखने तथा जीवन जीने के लिए भौतिक परिस्थितियों के प्रति अनुकूलन की प्रवृत्तियों तक ही सीमित रहती है; जबकिमनुष्य व्यवहार पद्धतियां सदैव सीखतेरहते हैं। जानवरों की प्रवृत्तियां अनुवांशिक प्रतिबद्धताओं से प्राप्त होने वाले निर्देशों से संचालित रहती हैं और वे उन्हीं के अनुरूप व्यवहार करते हैं। पशु-पक्षी अपने जीवन काल में जिन-जिन कार्यों को संपन्न करते हैं उनके लिए उन्हें निर्देश भी अनुवांशिकता से ही प्राप्त होते हैं।

हरलामबोस और होलबोर्न (2008) उदाहरण के लिए पक्षियों में अपने लिए तथा अपने बच्चों के लिए घोंसले बनाने की प्रवृत्ति होती है। अलग-अलग प्रजातियों के पक्षी, अलग-अलग तरह के घोंसले बनाते हैं। इसकेठीक विपरीत मनुष्यों के मस्तिष्क सामाजिक संस्कृतियों, रीतिरिवाजों, परंपराओं, मान्यताओं तथा मूल्यों से प्रभाव ग्रहण करते हैं। मनुष्य सभ्यता की प्रक्रिया द्वारा ऐसी व्यवहार पद्धतियां सीखते रहते हैं जो उनके आस-पास के वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करने में सहयोगी होती हैं। मनुष्य को सामाजिक संदर्भों से ऐसी जानकारियां प्राप्त होती रहती है जो जीवन की परिस्थितियों के साथ उनका तालमेल बैठाने के लिए जरूरी होती हैं। समाजशास्त्र की विश्लेषण की आधारभूत इकाई सामाजिक प्रणाली जैसे परिवार, सामाजिक समूह, समुदाय, संस्कृति आदि ही होती है।

मनोविज्ञान की प्रमुख विषय वस्तु मनुष्य के मन का अध्ययन है। मनुष्यों की सोच, उनके व्यवहार, उनकी भावनाएं, उनकी धारणाएं तथा जीवन मूल्य एक खास सामाजिक परिवेश में उनके व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। जबकि समाजशास्त्र सामाजिक परिवेश, सामाजिक संस्थान जैसे परिवार, समुदाय आदि का अध्ययन करता है। मनोविज्ञान के अध्ययन के केंद्र में व्यक्ति रहता है। सामूहिक योग्यता का आंकलन करते समय समाज-विज्ञानी तथा मनोवैज्ञानिक समूह की सामान्य रुचियों,उनके अंदर मौजूद सहयोग की भावनाओं,सह-अस्तित्व की प्रवृत्तियों, सूचनाओं के प्रवाह निर्णय लेने की क्षमताओं तथा स्तरीकरण की प्रवृत्तियों का पता लगाते हैं। रुचियोंकी समानता के आधार पर दोनों प्रकार के विद्वान, विभिन्न सिद्धांतों के सहयोग से समूह की योग्यताओं और क्षमताओं का आंकलन करने में सफलता प्राप्त कर लेते हैं।

3.4 सामाजिक मनोविज्ञानः ऐतिहासिक विकास

19वीं शताब्दी में प्राकृतिक विज्ञानों के अस्तित्व में आने के साथ ही वैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर मानव व्यवहार का अध्ययन करने की जिज्ञासा का आरंभ हो गया था। कॉम्टे का विचार था - प्राकृतिक विज्ञानों की वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग से समाज का अध्ययन किया जा सकता है। कॉम्टेके अनुसार – "जिन चीजों से हम परिचित हैं उनसे संबंधित परिदृश्य की व्याख्या हम उन चीजों को ध्यानपूर्वक देखने से प्राप्त अनुभवों के आधार पर आसानी से कर सकते हैं।" अनेक घटनाओं के बीच तर्कसंगत संबंधों को गहराई से समझ लेने के बाद आगे घटित होने वाली घटनाओं का अनुमान लगाया जा सकता है। कॉम्टे का यह भी मानना है कि - यदि समाजिक विज्ञानी किसी समाज में प्रचलित नियमों व कानूनों को अच्छी तरह समझ लें तो वे उस समाज के बेहतरीकरण के लिए कारगर योजनाएं सफलतापूर्वक बना सकते है। किसी समाज के बारे में जानकारी एकत्र करने तथा व्यक्तियों की समाज में हैसियत पता लगाने के प्रयासों द्वारा प्रमाणों तथा अनुवीक्षण की मदद से वहां के लोगों की मानसिकता का पता लगाया जा सकता है। आरंभिक दौर के तथा बाद के मनोविज्ञानियों के विचारों ने समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान का ढांचा तैयार करने में विशेष रूप से मदद की है। मीड ने हमारे अपने बारे में विचारों को जानने के लिए हमारे सामाजिक हालात का अध्ययन करने पर विशेष जोर दिया है। समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान की रूपरेखा तैयार करने में जिन अन्य विद्वानों के नाम उल्लेखनीय है वे हैं - जॉर्ज सिम्मल (1858-1918), चार्ल्स हॉर्टनकूली (1864-1929) तथा इरविन गोफमान।

आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान का उदभव 19वीं शताब्दी में हुआ। सामाजिक मनोविज्ञान के केंद्रीय विषय मानसिक विकास पर आधारित पहली उल्लेखनीय पुस्तक "सोशल एंड एथिकल इंटरप्रिटेशन इन मेंटल डेवलपमेंट" न्यूयॉर्क में 1987 में प्रकाशित हुई। इस पुस्तक के लेखक जाने-माने समाजशास्त्री जेम्स मार्क बोल्डविन थे। इससे पहले 1908 में विलियम मैकदौगल तथा एडवर्ड ए. रॉस सामाजिक मनोविज्ञान को स्वतंत्र वैज्ञानिक विषय घोषित कर चुके थे। इस वर्ष सामाजिक मनोविज्ञान पर दो पुस्तकों का प्रकाशन हुआ था - एक थी विलियम मैकदौगल की पुस्तक ऐन इंट्रोडक्शन टू सोशल साइकोलॉजी तथा दूसरी थी ख्याति प्राप्त समाज विज्ञानी एडवर्ड ए. रॉस की पुस्तक सोशल साइकोलॉजी।

3.4.1 सामाजिक विज्ञान की परिभाषा

व्यक्तिगत तथा सामाजिक सन्दर्भों में सदैव एक अंतर्संबंध मौजूद रहता है। दोनों एक दूसरे से प्रभावित होते रहते हैं तथा एक दूसरे पर अपना प्रभाव डालते रहते हैं। "मानवीय सामाजिक व्यवहार की प्रकृति तथा उसके कारण के बीच अन्तर्सम्बन्ध के अध्ययन को सामाजिक मनोविज्ञान कहा जाता है।"(मीचेनेर - डलमटेर, 1999 सीघ्फ़. डलमटेर, 2006:11)। महान विद्वान जी. डब्ल्यू आलपोर्ट (1954:5) सामाजिक मनोविज्ञान की परिभाषा करते समय व्यक्ति के वास्तविक, काल्पनिक अथवा दूसरों के प्रभाव से उत्पन्न विचारों, भावों तथा व्यवहारों पर विशेष रूप से ज़ोर देते हैं। कुछ अन्य विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं का सार यह है कि -

"सामाजिक मनोविज्ञान एक ऐसा मनोविज्ञान है जो व्यक्ति के मन पर पड़े सामाजिक प्रभावों का गहराई तक जाकर उद्घाटन करता है।"

बैरन और बयर्ने (2007) सामाजिक मनोविज्ञान की परिभाषा करते हुए कहते हैं कि – "यह एक वैज्ञानिक क्षेत्र है जो मनुष्य के व्यवहार की प्रकृति तथा उसके कारणों को समझने का प्रयास करता है।"

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि "सामाजिक मनोविज्ञान सामाजिक संदर्भ में मनुष्यों के विचारों, भावनाओं तथा व्यवहारों का सिलसिलेवार अध्ययन है।"

बोध प्रश्न

1) सामाजिक मनोविज्ञान के ऐतिहासिक विकास की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) सामाजिक मनोविज्ञान की परिभाषा लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3.4.2 समाजशास्त्र और मनोविज्ञान का सामाजिक मनोविज्ञान से अंतः विषयक संबंध

सुप्रसिद्ध मनोविज्ञानी आलपोर्ट के अनुसार– "सामाजिक मनोविज्ञान की जड़ें समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान दोनों में गहराई तक फैली हुई है।" मनोवैज्ञानिक विचारक कुक, फाइन, हाउस (1995) व डेलमेटौर (2006) का विचार है कि समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान दोनों के विश्लेषण एवं संश्लेषण का एक बहुत बड़ा भाग सामाजिक मनोविज्ञान के अंतर्गत आता है। यही कारण है कि समाजशास्त्र व मनोविज्ञान सामाजिक मनोविज्ञान से सीधे जुड़े हैं। सामाजिक मनोविज्ञान का मुख्य विषय सामाजिक संदर्भ में व्यक्ति का अध्ययन है या यह कहें कि मन, चेतना व समाज तीनों सामाजिक मनोविज्ञान के अंतर्गत आते हैं। अनेक समाजशास्त्रीय एवं मनोविज्ञान विषयक धारणाओं का प्रयोग मनोविज्ञान में मनुष्यों तथा समाज के पारस्परिक प्रभावों को समझने के लिए किया जाता है। समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान पर उद्देश्य, पहुंच व अध्ययन विषय आदि के आधार पर सामाजिक मनोविज्ञान की निर्भरता को ध्यान में रखते हुए उसे दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है– समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान तथा मनोविज्ञान परक सामाजिक मनोविज्ञान। यह विश्लेषण 1977 में हाउस तथा स्ट्राइक ने किया था। इन दोनों धाराओं के बीच अंतर स्थापित करना बहुत कठिन है क्योंकि सामाजिक मनोविज्ञान समाजशास्त्र व मनोविज्ञान से ही निकली है और इन दोनों के प्रभावों से उसे पूरी तरह मुक्त नहीं किया जा सकता है। चिंतन आधारित सामाजिक मनोविज्ञान अथवा सामाजिक चिंतन यह पता लगाता है कि कोई विचार किस तरह पनपता है और कैसे दिमाग में घर बना लेता है।

थोइट्स (1995:1232) के अनुसार "सूचना अपने मूल रूप में अथवा मानसिक निरूपण के रूप में एकत्रित होती है तथा संकेतों से, स्मृतियों से, किसी निश्चय पर पहुँचने की कोशिश

से, अपने तथा दूसरों के बारे में सोचते जाने तथा अनुमान लगाने से अधिक प्रभावशाली बन जाती है।" यहां चिंतन सामाजिक संदर्भ है, यह सामाजिक अनुभवों से उत्पन्न होता है तथा पारस्परिक व्यवहारों के रूप में प्रकट होता है।

समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान मनुष्यों की समग्र मानसिक अवस्था, वर्गीय मनोविज्ञान तथा सामूहिक मानसिकता के तत्व जैसे रीति रिवाज, नैतिक मूल्य एवं परंपराएं आदि को केंद्र में रखते हुए कार्य करता है। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि यह थोड़े से लोगों की सामूहिक मानसिक गतिशीलता को केंद्र बनाकर कार्य करती है।

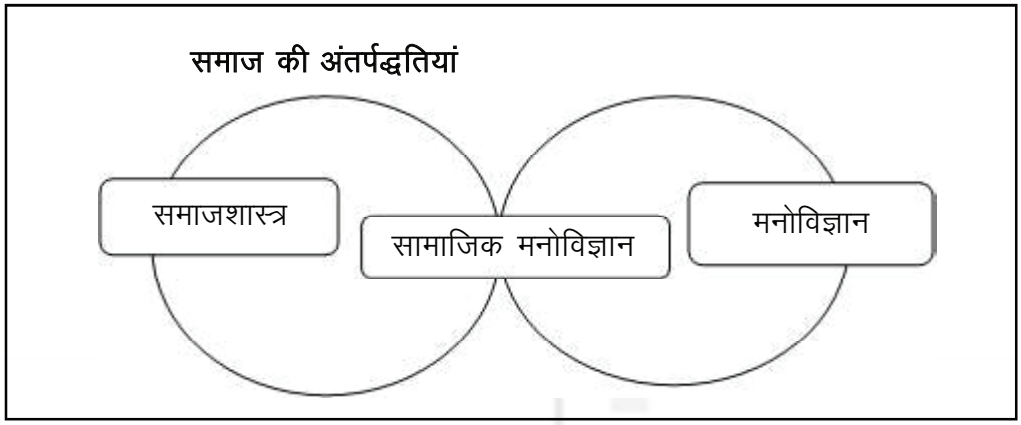

चित्र 3.1: सामाजिक मनोविज्ञान समाजविज्ञान व मनोविज्ञान दोनों के तत्वों को अपने में समाहित किये रहता है।

स्रोतः रोहाल, मिल्की और लुकास (2011:9)

3.4.3 सामाजिक मनोविज्ञान का विषय-क्षेत्र

सामाजिक मनोविज्ञान सामाजिक संदर्भ में मानव-व्यवहार का अध्ययन करता है। सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति के मन तथा उसमें पैदा होने वाले विचारों का अध्ययन करता है। व्यक्ति चाहे समूह का हिस्सा हो या अलग-थलग जीवन जी रहा हो, मानसिक स्थिति के प्रभाव से पैदा हुए मानव-व्यवहार के बारे में गहरी जानकारी प्राप्त करना, सामाजिक मनोविज्ञान का प्रमुख काम है। मनुष्य चाहे छोटे समूहों में रहने वाले हों या फिर बड़े समूहों में रहते हों, उनके आपसी संबंधों तथा उनसे उपजे व्यवहारों का अध्ययन सामाजिक मनोविज्ञान के अंतर्गत आता है। डलमटेर (1995:11) के अनुसार सामाजिक मनोविज्ञान के अध्ययन के विषय हैं–

- एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति पर प्रभाव
- मानव समूह का उसके सदस्य पर प्रभाव
- व्यक्तियों के उनके समूह पर प्रभाव
- एक व्यक्ति समूह का दूसरे व्यक्ति समूह पर प्रभाव

सामाजिक परिवेश तथा व्यक्ति दोनों एक दूसरे पर अपना प्रभाव डालते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि सामाजिक मनोविज्ञान सामाजिक और मनोवैज्ञानिक क्षेत्रों की समग्रता के साथ व्याख्या करने का प्रयास करता है। क्योंकि किसी देश अथवा समाज की संस्कृति यह तय करती है कि उस देश या समाज के लोग अपने विचारों तथा अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति किस प्रकार करते हैं। इसीलिए एक समाज में रहने वाले लगभग सभी लोगों का सोचने का तरीका कुछ-कुछ एक जैसा ही होता है।समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान के अनुसंधान एवं अध्ययन के केंद्रीय विषय हैं - जीवन की समग्र व्याख्या, सामाजीकरण,

सामाजिक संपर्क सूत्र, सामूहिक गतिशीलता, रूढ़िवाद, सामाजिक पतन तथा सामाजिक स्तरण। जीवन में मनुष्य को अनेक अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है, जैसे - बचपन, किशोरावस्था, युवावस्था, अधेड़ अवस्था, वृद्धावस्था आदि। हर अवस्था में उस पर सामाजिक मान्यताओं, मूल्यों, धार्मिक विश्वासों तथा रीति रिवाजों आदि सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों का प्रभाव पड़ता है।

विभिन्न समाजों में बच्चों के पालन-पोषण के तरीके अलग अलग होते हैं। इनका प्रभाव उनके व्यक्तित्व पर पड़ता है। पारिवारिक स्तिथियां तथा पारिवारिक संबंध मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया पर सबसे अधिक प्रभाव डालते हैं। आज हम ऐसे समाज में जी रहे हैं जिसमें सामाजिक विविधता व्यापक रूप से मौजूद है; इसीलिए सामाजिक मनोविज्ञानी बहुसंस्कृतिवादी प्रवृत्ति से प्रभावित रहते हैं। उनके अध्ययन के क्षेत्र में समाज का वर्गीय विभाजन, लैंगिकता, नैतिक धरातल, आयु, लैंगिक रुझान, विकलांगता अथवा अक्षमता, धार्मिक मान्यताएं तथा अन्य अनेक सामाजिक व सांस्कृतिक आयाम शामिल रहते हैं।

3.5 समाजशास्त्रीय उपकरण

सामाजिक मनोविज्ञान के अध्ययन के लिए कुछ अधिक उपकरणों की जरूरत नहीं पड़ती। समाज शास्त्री केवल दो चीजों की मदद से अपने अनुसंधान तथा सिद्धांतों का विवरण प्रस्तुत कर सकते हैं, यह दो चीजें हैं - संकल्पना और अभिव्यक्ति।

3.5.1 समाजशास्त्रीय संकल्पना

हमारा दिन प्रतिदिन का जीवन अनेक चीज़ों से प्रभावित होता हैं। इनमें पारिवारिक मूल्य एवं मान्यताएं मुख्य है जिनका निर्माण सामाजिक प्रभाव करते हैं। हमारे दैनिक जीवन में कौन-कौन सी ताकतें काम कर रही हैं इसे समझने के लिए समाजशास्त्रीय संकल्पना की जरूरत होती है।

सी. राइट मिल्स (1959) के अनुसार, "इतिहास तथा सामाजिक संरचना के संदर्भ में अपना तथा दूसरों का अतीत समाजशास्त्रीय संकल्पना कहलाता है।" मिल्स का तर्क है कि - समाजशास्त्री को किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए यह आवश्यक है कि वह उसके जीवन को प्रभावित करने वाले सांस्कृतिक, ढांचागत तथा ऐतिहासिक कारकों को भलीभांति समझ ले। मनुष्यों तथा उसके समाजों के बारे में जानकारी प्राप्त करने तथा उनके एक दूसरे को प्रभावित करने वाले कारकों का पता लगाने के बाद ही यह समझा जा सकता है कि उस व्यक्ति की सोच, उसका व्यवहार तथा उसका सांस्कृतिक स्तर कैसा होगा।

समाजशास्त्रीय संकल्पना सामाजिक मनोविज्ञानी को ऐसी सक्षम अंतर्दृष्टि प्रदान करती है जो उन सभी सामाजिक कारकों तथा सामाजिक दशाओं के बारे में विचार कर सके जो उसके विचारों, भावनाओं तथा व्यवहार को प्रभावित करते रहे हैं।

3.5.2 सामाजिक मान्यताएं एवं सामाजिक मूल्य

सामाजिक मान्यताएं मनुष्य के व्यवहार को दिशा देती हैं तथा उस पर पूरा नियंत्रण रखती हैं। मनुष्य का व्यवहार, उसकी आचार संहिताओं से पूरी तरह प्रभावित होता है क्योंकि हर व्यक्ति को आचार संहिताओं का पालन करना पड़ता है। मूल्यों का मनुष्य के आदर्शों व विश्वासों से गहरा संबंध होता है। मूल्य ही आदर्शों की संरचना करते हैं तथा सामाजिक स्तर व सामाजिक अपेक्षाओं के अनुरूप उन्हें ढालने का काम करते हैं।

3.5.3 संस्कृति

किसी समाज के अनुरूप व्यवहार पद्धतियों एवं विश्वासों को व्यक्तियों में ढालने की भूमिका उस समाज की संस्कृति निभाती है। हर समाज की अपनी एक विशेष संस्कृति होती है, जो उसकी पहचान बन जाती है। भाषा, प्रतीक, मूल्य, विश्वास, मान्यताएं तथा रहन-सहन की शैली व साजो सामान आदि सब मिलकर किसी समाज की संस्कृति को एक विशेष स्वरूप प्रदान करते हैं।

3.5.4 भूमिकाएं एवं स्तर

व्यवहार पद्धतियां ही भूमिकाएं हैं। भूमिकाएं व्यक्ति के सामाजिक स्तर का प्रतिनिधित्व करती हैं। भूमिकाएं वे व्यवहार पद्धतियां है जो समाज में मनुष्य एक दूसरे के संपर्क में आते समय निभाते हैं। भूमिकाएं व्यक्ति के सामाजिक स्तर का प्रदर्शन करती हैं। जैसे जब आप इस पुस्तक को पढ़ रहे होंगे तब आप विद्यार्थी अथवा पाठक की भूमिका में होंगे, जबकि आप परिवार व समाज में पुत्र, पुत्री, भाई-बहन अथवा पड़ोसी व संबंधी आदि अनेक भूमिकाओं में होते हैं। जब हम स्तर की या पद की बात करते हैं तो उसके दायित्व बोध, लाभ, प्रतिष्ठा आदि अनेक संबंधित घटक भी आ जाते हैं जिनका अनुभव कोई व्यक्ति समाज में अपने पद पर रहते हुए करता है।

3.5.5 सामाजीकरण

सामाजीकरण वह प्रक्रिया है जो जन्म लेते ही व्यक्ति के जीवन में आरंभ हो जाती है। इस प्रक्रिया द्वारा नवजात शिशु उन सभी सामाजिक मान्यताओं, व्यवहार पद्धतियों, आस्थाओं, जीवन मूल्यों, जीवन स्तरों आदि का अनुभव करना आरंभ कर देता है। जो उस समाज विशेष में रहने के लिए आवश्यक होती है, यह प्रक्रिया जीवन भर चलती रहती है।

सामाजीकरण व्यक्तियों को सामाजिक हित के अनेक कार्यों को संपन्न करने की योग्यता व क्षमता प्रदान करता है, इनमें सबसे जरूरी है सामाजिक समरसता बनाए रखने तथा सामाजिक व्यवस्था दुरुस्त रखने की समझ व क्षमता।

3.6 समाजशास्त्र की अवधारणाएं व पद्धतियां जिनका सामाजिक मनोविज्ञान में इस्तेमाल होता है

मनुष्य के सामाजिक परिवेश के साथ संबंधों तथा मनुष्य व समाज की परस्पर निर्भरताओं का अध्ययन करने के लिए सामाजिक मनोविज्ञान को समाजशास्त्र के अनेक सिद्धांतों तथा तरीकों का सहारा लेना पड़ता है।

मैक्स वेबर के अनुसार – "मनुष्य के व्यवहार पर संस्कृति का प्रभाव सदैव बना रहता है, अतः मनुष्य की मानसिक अवस्था अथवा सोच को समझने के लिए उसके सांस्कृतिक परिवेश को ध्यान में रखना बहुत जरूरी है। जर्मन भाषा में एक शब्द आता है वेरस्टेहन जिसका अर्थ है "गहराई तक समझना"। इस पर काम करते समय अनुसंधान-कर्ता व्यक्ति के सामाजिक परिवेश तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का गहन अध्ययन कुछ इस तरह करता है जैसे वह उस समाज का ही एक अंग हो। इस तरह काम करने से किसी भी समाज-विज्ञानी के लिए वहाँ के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों, सामाजिक सरोकारों व सांस्कृतिक मान्यताओं को पूरी तरह समझ लेना संभव हो पाता है। समाजशास्त्र में अनुसंधान करते समय आप गुणात्मक अनुसंधान प्रविधि पर जोर देते हैं अथवा मात्रात्मक अनुसंधान प्रविधि पर, इन दोनों स्थितियों में मौलिक अंतर है।

मात्रात्मक अनुसंधान प्रविधि के अंतर्गत सामाजिक मनोविज्ञानी बड़े स्तर पर सर्वेक्षण करते हैं, बड़ी संख्या में लोगों से पूछताछ करते हैं। फिर उन आंकड़ों के विश्लेषण के आधार पर यह जानने का प्रयास करते हैं कि उस समाज में रहने वाले लोगों की व्यवहार पद्धतियां किस तरह की हो सकती हैं। जबकि गुणात्मक अनुसंधान प्रविधि के अंतर्गत लोगों के बीच रहते हुए उनके विचारों को जाना जाता है। व्यक्तिगत रूप से तथा समूहों में उनसे ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं जिनसे उनके अंदर की सच्चाई बाहर आ सके। सामूहिक वार्तायें आयोजित की जाती है तथा जिन स्रोतों से जानकारी प्राप्त होती हैं उनका बारीकी से विश्लेषण किया जाता है। सामाजिक मनोविज्ञान के सिद्धांतों के आधार पर उनकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों को खंगाला जाता है तथा यह जानने का प्रयास किया जाता है कि उनके विचार-जगत तथा भाव-जगत के मूल स्रोत क्या क्या है तथा उनके व्यक्तित्वों का विकास किन परिस्थितियों में हुआ है।

3.6.1 मध्यम श्रेणी का सिद्धांत

मध्यम श्रेणी के सिद्धांत की अवधारणा अमेरिकन समाजशास्त्री रॉबर्ट के. मर्टन (1949) ने स्थापित की थी। मध्यम श्रेणी का सिद्धांत सामाजिक प्राणियों के सामान्य सिद्धांतों के बीचों बीच स्थित हैं। सामाजिक प्रणालियों के सामान्य सिद्धांत विशेष वर्गों के सामाजिक व्यवहार, सामाजिक संगठनों तथा रहन सहन के स्तरों व अन्य अनेक विशेषताओं तक अपनी पूरी पहुंच नहीं बना पाते हैं। मध्यम श्रेणी के सिद्धांत सामाजिक परिदृश्य के सीमित पहलुओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। रॉबर्ट मर्टन के अनुसार "समाज की क्रियात्मक एकता की अवधारणा जटिल एवं अत्यधिक विषम समाजों पर ठीक से लागू नहीं हो पाती। जबकि इस अवधारणा के अनुसार सामाजिक प्रणाली का हर अवयव पूरी सामाजिक व्यवस्था के लिए काम करता है। समाज के सभी अंग सामाजिक व्यवस्था एवं सामाजिक अखंडता के लिए मिलकर कार्य करते हैं।" अपने तर्क की पुष्टि के लिए वह धार्मिक विश्वासों की विविधता का उदाहरण प्रस्तुत करता है। अनेक ऐसे समाज हैं जहां अनेक धर्मों के अनुयायी निवास करते हैं। धर्म सामाजिक एकता की भूमिका अदा करने के स्थान पर सामाजिक विभाजन की भूमिका अदा करता है। इसी लिए प्रसिद्ध विद्वान मर्टन किसी देश की कुछ सामाजिक प्रविधियों तथा कुछ सामाजिक व्यवहारों की व्याख्या करने के लिए मध्यम श्रेणी के सिद्धांतों का सहारा लेता है। सामाजिक मनोविज्ञानी खास तरह के सामाजिक परिदृश्य को समझने के लिए मध्यम श्रेणी के सिद्धांतों को इस्तेमाल करते हैं। कुर्ट लेविन का क्षेत्रीय सिद्धांत मध्यम श्रेणी के सिद्धांत का ही एक उदाहरण है। कुंठा, आक्रोश, दृष्टिकोण परिवर्तन, सहयोग तथा प्रतिस्पर्धा आदि के सिद्धांत सामाजिक मनोवैज्ञानिक सिद्धांत के मध्यम श्रेणी के सिद्धांतों के दायरे में ही आते हैं।

3.7 समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान के परिप्रेक्ष्य

अब तक की व्याख्याओं से यह समझा जा सकता है कि व्यक्तियों के दिन-प्रतिदिन के जीवन पर समाज की भूमिकाओं तथा प्रभावों की जानकारी प्राप्त करने के अनेक तरीके हैं। अपनी मरज़ी के अनुसार आप अपने चारों ओर फैले समाज के माध्यम से यह जानकारी इकट्ठी कर सकते हैं या फिर तुलनात्मक रूप से बड़े परिवेश जैसे लोगों के जीवन पर पड़ने वाले वैश्विक प्रभावों के माध्यम से यह ज्ञान अर्जित कर सकते हैं। समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञानी देश, काल व समाजों से बाहर जाकर भी मनुष्यों के व्यवहार की कुछ सामान्य तथा कुछ विशेष व्याख्याएं प्रस्तुत करते हैं।

3.7.1 सांकेतिक आदान-प्रदान

समाज और व्यक्तियों के बीच संबंधों तथा क्रिया-प्रतिक्रियाओं से अनेक सामाजिक प्रविधियों का जन्म होता है। जॉर्ज हर्बर्ट मीड (1863-1931) उन प्रभावशाली समाजशास्त्रियों में से एक है जिन्होंने सामाजिक क्षेत्र में सांकेतिक क्रिया-प्रतिक्रिया की अवधारणा को सैद्धांतिक रूप दिया। भाषा तथा उसकी सार्थकता के गर्भ से सांकेतिक अथवा प्रतीकात्मक पारस्परिकता का जन्म होता है। लोगों के पारस्परिक व्यवहार, उनकी सार्थकता तथा दूसरों की प्रतिक्रियाएं सांकेतिक आदान-प्रदान के अंतर्गत आती हैं।

जिस तरह हम अपने आप को महत्व देते हैं, दूसरों को महत्व देते हैं, चीज़ों को महत्व देते हैं, उन सब के बीच एक आदान-प्रदान की स्थिति बन जाती है। भाषा और प्रतीक दोनों का प्रयोग संसार में हर चीज़ को सार्थकता प्रदान करने के लिए किया जाता है।

इरविन गोफमैन (1956:1) के अनुसार जब कोई व्यक्ति दूसरों के सामने पहुँचता है तो वे उसके बारे में अधिक से अधिक जानना चाहते हैं अथवा जो कुछ जानते हैं उसके आधार पर उसके साथ वैसा ही व्यवहार करते हैं। इस प्रकार जब दो या दो से अधिक व्यक्ति आपस में मिलते हैं तो एक दूसरे के कार्यों पर उनके प्रभाव पड़ते हैं। इस क्रिया को सांकेतिक आदान -प्रदान अथवा प्रतीकात्मक पारस्परिकता कहा जाता है। प्रतीकात्मक पारस्परिकता के कारण ही समाज संपर्कों अथवा पारस्परिक क्रिया प्रक्रियाओं का घर बन जाता है। जहां लोग अपने विचारों का आदान-प्रदान करते हैं और अपने दैनिक जीवन के क्रियाकलापों को अंजाम देते हैं। लोगों के परस्पर मिलते रहने के कारण समाज में विचार तथा अभिव्यक्तियां सामूहिक हो जाती हैं तथा लोग वहां पैदा होने वाले वातावरण से अछूते अथवा अलग थलग नहीं रह पाते बल्कि वे सक्रिय बने रहते हैं तथा अपने क्रियात्मक विचारों व गतिविधियों के माध्यम से अपने प्रभावों का आदान-प्रदान करते हैं तथा वातावरण पर अपनी छाप छोड़ते हैं। सामाजिक मनोविज्ञान प्रतीकात्मक परस्पराकता पर निर्भर करता है जो व्यवहार को प्रभावित करने वाले सामाजिक वातावरण, सामान्य अपेक्षाओं अथवा मान्यताओं के ढांचागत संबंधों तथा संगठनात्मक विशेषताओं पर विशेष रूप से जोर देते हैं।

3.7.2 सामाजिक ढांचा एवं व्यक्तित्व

सामाजिक ढांचा और व्यक्तित्व की अवधारणा व्यापक स्तर पर घटने वाली सामाजिक घटनाओं तथा उसके व्यक्तियों पर पड़ने वाले प्रभावों से संबंधित है। सामाजिक ढांचे का प्रभाव उसमें रहने वाले व्यक्तियों के जीवन के विभिन्न पहलुओं पर इतनी गहराई से पड़ता है कि उनके व्यक्तित्वों पर उसकी छाप स्पष्ट दिखाई देने लगती है। सामाजिक ढांचा और व्यक्तित्व की अवधारणाएँ इसी आधार पर उत्पन्न हुई हैं क्योंकि सामाजिक संरचना, समाज के तौर तरीके, सामाजिक मान्यताएं, मिलने जुलने तथा व्यवहार करने की शैलियां समाज में रहने वाले व्यक्तियों पर इस तरह हावी हो जाती हैं कि लोगों से यह उम्मीद की जाती है कि वे उसी तरह सोचें, महसूस करें और व्यवहार करें जिस तरह उस समाज के अन्य लोग करते हैं। उदाहरण के लिए कार्ल मार्क्स यह मानता है कि "वह आर्थिक ढांचा जिसमें हम रहते हैं, हमारे सामाजिक संबंधों को और हमारे सोचने के तरीकों को भी" प्रभावित करता है।

3.7.3 सामूहिक पद्धतियां

समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान इस बात पर विशेष रूप से जोर देता है कि सामूहिक संदर्भ में सामाजिक पद्धतियां किस प्रकार काम करती हैं (रोहेल, मिल्केव लुकास 2011)।

समूह समाज का महत्वपूर्ण घटक होता है। सामाजिक विज्ञान और मनोविज्ञान दोनों सामूहिक व्यवहार का अध्ययन करने और उसे समझने के लिए अत्यधिक समय एवं ऊर्जा खर्च करते हैं। समूह के लिए कम से कम दो व्यक्ति चाहिए। मनुष्य अपना अधिकतर समय विभिन्न सामाजिक समूहों के साथ व्यतीत करते हैं - जैसे परिवार, मित्र तथा सहकर्मी आदि। कूली (1909) ने वैधान्तिक आधार पर सामाजिक समूहों को दो वर्गों में विभाजित किया है - प्राथमिक समूह तथा द्वितीय श्रेणी के समूह। पहली श्रेणी के तथा सबसे महत्त्वपूर्ण समूह वे हैं जिनमें मनुष्य आमने-सामने होते हैं तथा उनके संबंध बहुत गहरे होते हैं, जैसे परिवार तथा मित्र। दूसरी श्रेणी के समूह अपेक्षाकृत बड़े होते हैं परंतु समूह के सदस्यों के बीच संबंधों में उतनी निकटता नहीं होती। कूली के अनुसार प्राथमिक तथा द्वितीय श्रेणी के समूहों में अंतरंगता के आधार पर मौलिक अंतर विद्यमान रहता है।

समूह पद्धतियों के माध्यम से समाज के अंदर तथा बाहर लोगों के अन्तर्सम्बन्धों, व्यवहारों तथा उनकी व्यक्तिगत स्थितियों को समझने तथा उनकी व्याख्या करने के प्रयास किए जाते हैं। सामूहिक व्यवहारों का अध्ययन करते समय समाज में लोगों के स्तर तथा उनकी विभिन्न भूमिकाओं को ध्यान में अवश्य रखा जाना चाहिए। आपने अपने मित्र-समूहों में ही देखा होगा कि उनमें से कुछ बहुत बोलते हैं तथा बार-बार अपनी राय देते हैं और वे दूसरों पर हावी हो जाते हैं। जबकि कुछ चुप रहते हैं। इनके इस तरह के होने की वजह क्या है। ऐसा क्यों होता हैं? समूह के अंदर रहने वाले लोगों में शक्तियों का बंटवारा कैसे होता है? यदि एक सामाजिक मनोविज्ञानी को इसके पीछे मौजूद तार्किक कारणों का पता-लगाना हो तो वह सबसे पहले उस सामाजिक समूह के परिवेश का सिलसिलेवार अध्ययन करना चाहेगा। सामाजिक मनोविज्ञान के अनुसार तीन चरणों में तुलनात्मक रूप से इस तरह के अध्ययन को प्रस्तुत किया जा सकता है जैसा कि तालिका संख्या एक में दिखाया गया है।

तालिका 3.1: सामाजिक मनोविज्ञान के तीन परिप्रेक्ष्य

परिप्रेक्ष्य	समाज में व्यक्ति की भूमिका की स्तिथि	अध्ययन क्षेत्र
सांकेतिक आदान प्रदान	सामाजिक निर्माण की भूमिका में व्यक्ति सक्रिय रहा।	सार्थकता निर्माण प्रक्रिया।
सामाजिक ढांचा एवं व्यक्तित्व	आदान-प्रदान की प्रकृति लोगों की भूमिकाओं पर आधारित।	यह पता लगाना कि बड़े सामाजिक ढांचे व्यक्तियों पर किस प्रकार प्रभाव डालते हैं।
सामूहिक पद्धतियां	जब लोग सामाजिक समूहों का निर्माण करते हैं तो उनके बीच होने वाले आदान प्रदान से कुछ आधार भूत पद्धतियां उत्पन्न होती हैं।	सामूहिक सन्दर्भों में उत्पन्न होने वाली पद्धतियां।

स्रोतः रोहिल, मिल्की, और लुकास (2011:13)

बोध प्रश्न

1) सामाजिक मनोविज्ञान की पारस्परिक निर्भरता वाली प्रकृति पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) जोड़े मिलाइए

स्तंभ अ	**स्तंभ ब**
i)	मैक्सवेबर सांकेतिक आदान-प्रदान
ii)	मीड प्राथमिक समूह
iii)	मर्टन समझना
iv)	कूली मध्यम श्रेणी का सिद्धांत

3.8 सामाजिक मनोविज्ञान में अनुसंधान के उद्देश्य

जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है कि व्यक्ति के दूसरे लोगों तथा सामाजिक परिवेश के साथ संबंधों का अध्ययन करना सामाजिक मनोविज्ञान की प्राथमिकता है। सामाजिक मनोविज्ञान के अनुसंधान के प्रमुख उद्देश्य निम्न प्रकार हैं:

1) निरीक्षण एवं वर्णन–सामाजिक मनोविज्ञान का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य यह है कि वह विभिन्न परिस्थितियों में व्यक्तियों के सामाजिक व्यवहारों का सिलसिलेवार अध्ययन करे, उनका बारीकी से निरीक्षण करे तथा फिर उसकी इस प्रकार व्याख्या करे कि उसकी सहायता से किसी ऐसे सामान्य निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके जो मनुष्यों की बड़ी आबादी पर भी लागू होता हो।

2) कारण-कार्य संबंध– वैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर किए जाने वाले सामाजिक मनोविज्ञान के सभी अध्ययन अनेक प्रकार के लोगों के बीच तथा अनेक प्रकार की परिस्थितियों व परिवेशों के बीच पहुँच कर उनके कार्यों एवं व्यवहारों तथा उनके कारणों के बीच संबंधों का विश्लेषण अवश्य करते हैं। सामाजिक मनोविज्ञानी सामाजिक व व्यक्तिगत स्तर पर सामाजिक परंपराओं, संस्थानों जैसे मूल्यों, संस्कृतियों आदि में आने वाले परिवर्तनों के मानव व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करने का प्रयास करते हैं। इसे कारण कार्य संबंध कहा जाता है। उदाहरण के लिए, यह जानना कि यदि आरंभिक शिक्षा निशुल्क व अनिवार्य कर दी जाए तो लड़कियों की शिक्षा के बारे में माता पिता के दृष्टिकोण में क्या परिवर्तन आएगा।

3) नए सिद्धांत को प्रस्तावित करना – सामाजिक मनोविज्ञान का एक उद्देश्य सामाजिक व्यवहार के तर्कसंगत विश्लेषण पर आधारित नए सिद्धांत को प्रस्तावित करना भी है जिससे यह समझा तथा व्याख्यायित किया जा सके कि खास स्थितियों में मनुष्य के व्यवहार में इस तरह परिवर्तन क्यों आता है।

4) अनुप्रयोग – उपर्युक्त प्रयासों से प्राप्त ज्ञान का इस्तेमाल उन समस्याओं के हल निकालने के लिए किस प्रकार किया जाए जिनका अपने दैनिक जीवन में लोग सामना करते हैं अनुप्रयोग अथवा सम्प्रयोग कहलाता है।

3.9 समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान का महत्व

सभी प्रकार के मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक विश्लेषणों के आधार पर समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान समकालीन परिस्थितियों की पड़ताल करने में सक्षम है जिससे मनुष्यों तथा सामाजिक परिवेशों के एक दूसरे पर क्या और कैसे प्रभाव पड़ते हैं, इस सब की समुचित व्याख्या की जा सके। सामाजिक मनोविज्ञान परिस्थिति एवं व्यवहार के बीच दो तरफ़ा संबंधों को समझने का प्रयास करता है और उसकी व्याख्या करते हुए विभिन्न मानव समूहों अथवा समुदायों के बीच आकार लेने वाले संबंधों की भविष्यवाणी कर सकता है।

3.10 सारांश

एक स्वतंत्र विषय के रूप में सामाज विज्ञान तथा मनोविज्ञान के उद्‌गम एवं विकास की हमने व्याख्या की। दोनों विषयों की प्रकृति का विश्लेषण करते हुए समाज विज्ञान तथा मनोविज्ञान को परिभाषित भी किया। समाजशास्त्र व मनोविज्ञान के पारस्परिक संबंधों को समझने का प्रयास भी किया गया। इसके साथ ही साथ सामाजिक मनोविज्ञान की पृष्ठभूमि तथा उसके अन्य विषयों के बीच अस्तित्व व स्थिति को समझने का प्रयास भी किया गया। समाजशास्त्र, मनोविज्ञान तथा सामाजिक मनोविज्ञान के अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन उन छात्रों के लिए विशेष रूप से उपयोगी हो सकता है जो समाजशास्त्र तथा उसके अन्य विषयों के साथ संबंधों को जानना चाहते हैं। मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक मनोविज्ञान के मर्मज्ञ दोनों ही सामाजिक संदर्भों का अध्ययन करते हैं जिनमें मनुष्यों के विचारों, उनकी भावनाओं,उनके व्यवहारों ने जन्म लिया है तथाजिनसे वे प्रभावित हुए हैं। समाज विज्ञान की अवधारणाएं तथा उसके सिद्धांत सामाजिक मनोविज्ञान के उपयोग में भी लाए जाते हैं।

बोध प्रश्न

1) समाजशास्त्र की परिभाषा बताइए।

2) मनोविज्ञान की परिभाषा बताइए।

3) सामाजिक मनोविज्ञान के उद्‌गम की व्याख्या कीजिए।

4) क्या समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान के बीच कुछ समानताएं हैं? यदि हां, तो उनकी व्याख्या कीजिए।

5) सामाजिक मनोविज्ञान के विषय क्षेत्र एवं उसकी प्रकृति की व्याख्या कीजिए।

6) सामाजिक मनोविज्ञान में किसी समाजशास्त्रीय अवधारणा का इस्तेमाल करते हुए समाज में अपनी भूमिका की व्याख्या कैसे करेंगे?

7) सामाजिक मनोविज्ञान में अनुसंधान के मुख्य उद्देश्य क्या है?

3.11 सन्दर्भ

बग्गा, क्यू. एल. एंड. सिंह, ए. (1990). एलिमेंट्स ऑफ़ जनरल साइकोलॉजी. नई दिल्ली : आर्य बुक डिपो

बैरोन, आर.ए. (1999). एसेंशिअल्स ऑफ़ साइकोलॉजी. (द्वितीय एडिशन). यू एस एः

आलीन एंड बेकन गर्वी, ए.ई. (1928). एथिक्स, साइकोलॉजी, एंड सोशियोलॉजी जर्नल ऑफ़ फिलोसोफिकल स्टडीज, टवस. 3 (12), पृ. 457-467

हरलामबोस, एम., एंड होलबोर्न, एम. (2008). सोशियोलॉजी थीम्स एंड पर्सपेक्टिव्स लंदन : कॉलिंस एजुकेशनल

लोवी, आर. एच. (1915). साइकोलॉजी एंड सोशियोलॉजी. अमेरिकन जर्नल ऑफ़ सोशियोलॉजी, वॉल. 21(2), पृ. 217-229.

मेर्टोन, के. रोबर्ट. (1949). सोशल थ्योरी एंड सोशल स्ट्रक्चर. न्यू यॉर्कः द फ्री प्रेस.

म्येर्स, डी.जी. (2010). सोशल साइकोलॉजी (10जी एडिशन). न्यू यॉर्कः मैक ग्रौ-हिल.

रोहाल, डी., मिल्की, एम. एंड लुकास, जे. (2011). सोशल साइकोलॉजी सोशियोलॉजिकल पर्सपेक्टिव्स. (दूसरा एडिशन). नई दिल्लीः पी एच आई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड.

थोइट्स, पी.ए. (1995). द इंटरप्ले बिटवीन सोशियोलॉजी एंड साइकोलॉजी. सोशल फोर्सेज,

वॉल.73 (4), पृ.1231-1243.

इकाई 4 समाजशास्त्र और इतिहास का संबंध*

संरचना

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 समाजशास्त्र और इतिहास का संबंध

- 4.2.1 इतिहास को पारिभाषित करना
- 4.2.2 समाजशास्त्र और इतिहास का संबंध
- 4.2.3 समाजशास्त्र और इतिहास में अंतर

4.3 एक उपविधा के रूप में एतिहासिक समाजशास्त्र

4.4 सारांश

4.5 संदर्भ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्, आप निम्न को समझने में सक्षम होंगे :

- सामाजिक शास्त्र के विधा के रूप में इतिहास की व्याख्या;
- समाजशास्त्र और इतिहास के बीच के आंतरिक संबंध;
- समाजशास्त्र और इतिहास के बीच के अंतर; तथा
- समाजशास्त्र और इतिहास के प्रतिच्छेदन के परिणाम के रूप में ऐतिहासिक समाजशास्त्र को समझना।

4.1 प्रस्तावना

यह इकाई इतिहास के साथ समाजशास्त्र के संबंध को बताती है। दोनों विषय बहुत अधिक अंतरसंबंधित हैं। समाजशास्त्र को अक्सर समाज के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जाता है। विशेष रूप से, किसी भी समाज का कोई अध्ययन अपने इतिहास या अतीत को देखे बिना पूरा किया जा सकता है। यह देखना बेहद जरूरी है कि, अतीत में समाज कैसे विकसित हुआ है? किस तरह की परिस्थितियों और उदाहरणों के माध्यम से समाज आगे बढ़ा या विकसित हुआ है? इसकी संरचना और कार्यों के बदलावों में कारकों ने क्या योगदान दिया है? इस प्रकार, किसी भी समाज, समूह या संस्थानों और अपनी वर्तमान स्थिति को समझने के लिए अपने अतीत की सराहना करने की आवश्यकता है। यह देखा जा सकता है कि समाजशास्त्र के उद्भव ने ऐतिहासिक विकास जैसे फ्रांसीसी और औद्योगिक क्रांति, शहरों के विकास और सामाजिक संस्थानों और व्यक्तिगत अधिकारों और स्वतंत्रता के विकास में स्वयं आकार लिया है। विभिन्न पूर्व विद्वानों या समाजशास्त्र के संस्थापकों जैसे इब्न खल्दून, आगस्त कॉम्टे, हरबर्ट स्पेंसर, मैक्स वेबर, इमाईल दुर्खीम, कार्ल मार्क्स आदि ने सामाजिक संरचना, परिवर्तन और गतिशीलता के विश्लेषण में इतिहास या ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को महत्व दिया। समाजशास्त्र और अतीत (इतिहास) एक दूसरे से गहरे जुड़े हुए हैं। इसके अतिरिक्त, इतिहास ऐतिहासिक घटनाओं का विस्तार और विश्लेषण करने में समाजशास्त्र की मदद करता है। यह दर असल मानव जीवन के पूर्व के

*डॉ. शाहीद, मानू, हैदराबाद

सामाजिक पहलुओं पर प्रकाश डालता है। इस संदर्भ में यह मुख्यतः दोनों विषयों के सामाजिक विकास को समझने में एक-दूसरे की मदद करता है। इसलिए, ऐतिहासिक समाजशास्त्र, सामाजिक इतिहास और सांस्कृतिक इतिहास जैसा उप-क्षेत्र समाजशास्त्र और इतिहास के टकराव के परिणाम के रूप में उभरा।

समाज की संरचना, कार्यों और परिवर्तनों के संदर्भ में अध्ययन या व्याख्या करते समय समाजशास्त्री प्रायः 'संदर्भ' के बारे में बात करते हैं। इस स्थिति में, समय और स्थान वे दो महत्वपूर्ण कारक हैं जो सामाजिक यथार्थता के प्रासंगिक पहलुओं को उत्तराधिकार में प्राप्त करता है और इसे दर्शाता है। सामाजिक यथार्थता के विकास को समझाने का समय एक महत्वपूर्ण कारक है क्योंकि सामाजिक यथार्थता समय के साथ आकार लेती है। चूंकि, इतिहास समय या समाज के आवधिक विकास जैसे कारकों पर आधारित होता है, तो यह वास्तव में समाजशास्त्री को अधिक व्यवस्थित रूप से समाज का अध्ययन करने में मदद करता है। यह समाजशास्त्रियों को वर्तमान स्थिति और समाज के विकास संबंधी तय की गई दूरी को व्यक्त करने के लिए तर्क प्रदान करने में सहायता करता है। कॉम्टे ने अपने त्रिस्तरीय नियम में, समाज के विकास के विश्लेषण में स्पेंसर ने, आदर्श प्रकारों और शहर के विकास के विस्तार में वेबर ने और वर्ग संघर्ष और सामाजिक परिवर्तनों के अपने विश्लेषण में मार्क्स जैसे विभिन्न समाजशास्त्रियों ने अपने सामाजिक विश्लेषण में ऐतिहासिक आयाम का उपयोग किया है। इस प्रकार, इतिहास और समाजशास्त्र एक-दूसरे से बहुत निकटता से संबंधित हैं। हालांकि, हम यह भी देख सकते हैं कि दोनों विषयों की प्रकृति और दृष्टिकोण में भिन्नता है, फिर भी वे कई बिंदुओं पर एक दूसरे को काटता या संकरण करता है। परिणामस्वरूप, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है ऐतिहासिक समाजशास्त्र दो विषयों के बीच आपसी अन्तःप्रतिछेदऩ के उपशाखा के रूप में उभरा है। यह इकाई समाजशास्त्र और इतिहास के बीच के इस तरह के अन्तःप्रतिछेदऩ और अंतर-संबंधों को विस्तारित करने पर केंद्रित है।

4.2 समाजशास्त्र और इतिहास का संबंध

4.2.1 इतिहास को पारिभाषित करना

इतिहास को प्रायः अतीत के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जाता है। इतिहास का अध्ययन करने वाले इतिहासकार, सामाजिक घटनाओं और विकास की ओर अग्रसर घटनाओं और परिस्थितियों के अध्ययन कारणों और प्रभावों का अध्ययन करते हैं। शब्द मल्लारी (2013), 'इतिहास', कई पारस्परिक पहलुओं में सन्निहित है; सबसे पहले, इतिहास एक अतीत है या अतीत में घटित हुई चीजें हैं, दूसरी बात, अतीत में घटित हुई घटनाओं का इतिहास बताता है। विभिन्न विचारकों ने इतिहास को पुरातात्विक साक्ष्य के आधार पर मानव के अतीत के अध्ययन के रूप में वर्णन किया है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तथाकथित अतीत का अपना सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक पहलू भी है। इतिहासकार समाज के प्रकार, उनकी संरचना, संस्कृति, सभ्यता और राजनीति मानव समाजों को देखते थे, और समय काल के साथ विकसित होता है। इतिहास समय और काल की विशेषताओं के संबंध में अपने सामाजिक डोमेन का अध्ययन करता है।

विशेष रूप से, इतिहास कई मामलों में महत्वपूर्ण है। प्रथमतः, जैसे स्मृति किसी व्यक्ति के लिए स्थान रखता है वैसे ही इतिहास समाज के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दूसरा, जैसे स्मृति किसी भी व्यक्ति को पहचान और मान्यता प्रदान करता है वैसे ही इतिहास समूहों या समाज में एक समुदाय को पहचान और मान्यता प्रदान करता है। यह किसी की

जड़ों, जैसा कि यह अतीत में घटित हुआ होगा उस ऐतिहासिकता या विकास के मिलान बिन्दू की ओर इशारा करता है। सामाजिक यथार्थ को उजागर करने के लिए इतिहास की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण और निर्णायक बनाने वाले इस तरह के महत्वपूर्ण कार्यों के कारण आवश्यक हो जाती है, जहां विभिन्न विवाद उत्पन्न हो जाते है यह वहाँ भी निर्णायक स्थान रखता है।

4.2.2 समाजशास्त्र और इतिहास का संबंध

समाजशास्त्र और इतिहास एक दूसरे से अंतरसंबंधित है। समाजशास्त्र समाज का अध्ययन करता है और उसके ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखकर वर्तमान समस्या पर ध्यान देता है। इस तरह के विश्लेषण में वर्तमान और अतीत दोनों करीब आते हैं। समाजशास्त्रियों ने अक्सर समय के साथ सामाजिक परिवर्तन, विकास और समाज के चेहरे को बदलने के लिए इतिहास का संदर्भ दिया है। इसी तरह इतिहास को अतीत की व्याख्या करने के लिए सामाजिक पहलुओं (सामाजिक अवधारणाओं) की भी आवश्यकता है। दोनों विषयों के बीच की सीमाएं तब धुंधली और उलझ जाती है जब इन्हें सामाजिक यथार्थ के जटिल जालों को सुलझाने के लिए एक संदर्भ में शामिल किया जाता है। दो विषयों के बीच सीमाओं के इस धुंधलेपन को कई विद्वानों द्वारा उपयोगी शोध प्रयासों के अवसर के रूप में देखा जाता है। 'व्हाट इज हिस्ट्री' नामक पुस्तक लिखने वाले ई. एच. कार (1967) ने तर्क दिया है कि अधिक सामाजिक इतिहास और अधिक ऐतिहासिक समाजशास्त्र दोनों के लिए बेहतर होता है। उनके बीच की सीमा को आदान प्रदान के लिए खुला रखा जाना चाहिए। कई समाजशास्त्रियों ने अंतर-अनुशासनात्मक और ज्ञान उत्पादन को समृद्ध करने के दोनों विषयों के बीच लेनदेन के इस प्रस्ताव की भी वकालत की है।

सामाजिक परिवर्तन एक वास्तविकता है और यह स्वभाविक है। इतिहास समय और काल के संबंध में इसका विश्लेषण करने के लिए प्रतिबिंबित या वास्तविक तरीका दिखाता है। वास्तव में, इतिहास परिवर्तन की निरंतर चेतावनी देता रहा है भले ही तथ्य स्थायी, अनियमित और अप्रत्याशित है। इस प्रकार इतिहास सावधानीपूर्वक परिवर्तन की जांच और विश्लेषण करने के लिए संदर्भ और प्रासंगिक उपकरण का एक फ्रेम प्रदान करता है। वास्तविकता को पूरा करने के लिए समाजशास्त्र और इतिहास दोनों एक दूसरे पर निर्भर करते हैं। पूर्व की घटनाओं, आंदोलनों और सामाजिक संस्थानों को समझने के लिए समाजशास्त्र, इतिहास पर निर्भर करता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि समाजशास्त्र समाज के ऐतिहासिक विकास के अध्ययन से भी संबंधित है। समाजशास्त्री, ऐतिहासिक विश्लेषण और व्याख्याओं के माध्यम से पूर्व काल की या पुरानी परंपराओं, संस्कृति, सभ्यताओं के विकास, समूहों और संस्थानों का अध्ययन करता है। विशेष रूप से, जॉन सेली ने सही ही कहा है कि समाजशास्त्र के बिना इतिहास का कोई फायदा नहीं और इतिहास के बिना समाजशास्त्र कुछ नहीं है। किसी भी सामाजिक समस्या को समग्रता और गहराई से समझने के लिए भूतकाल और वर्तमान दोनों समान रूप से महत्वपूर्ण हैं।

एक शिक्षण के रूप में समाजशास्त्र, इतिहास और उसके असाधारण विकास का अध्ययन करने के लिए एक विशेष समझ की प्रस्तुत करने में सहायता प्रदान कर सकता है। उदाहरण के तौर पर, सामाजिक कल्पना का साधन स्पष्ट तथ्यों से परे देखने और तथ्यों के किसी भी ऐतिहासिक घटना के पहलुओं की जांच करने के लिए सामान्य तथ्यों से परे जाने में मदद कर सकता है। सामाजिक कल्पना की अवधारणा देने वाले सी राइट मिल्स (1959) ने कहा कि सामाजिक कल्पना का साधन जीवनी और इतिहास के संदर्भ में दुनिया को देखना शामिल करता है। समाजशास्त्र के अध्ययन में व्यक्तिगत जीवनी चीजों की अपनी योजनाओं में सामाजिक और ऐतिहासिक संदर्भ से जुड़े होते हैं। ऐतिहासिक घटनाओं

के गर्भ में स्थित इस तरह के संबंधों का बुद्धिमानी खोज की जानी चाहिए। वास्तव में, मिल्स ने संरचना, जीवनी और इतिहास जैसे मानव दुनिया के तीन पहलुओं पर जोर दिया। उन्होंने मानव दुनिया के उपरोक्त तीन आयामों के मिलान बिंदु पर विश्लेषण का अपना पैटर्न विकसित किया। जो कि एक व्यवस्थित वास्तविकता के रूप में सामाजिक दुनिया के गठन और आकार के संदर्भ में सामाजिक संरचना पर केंद्रित है। उन्होंने सामाजिक व्यवहार के विशेष पैटर्न के आकार के रूप में मानव व्यवहार को आगे बढ़ाया। चीजों की अपनी योजना में, इतिहास ने धारणा में जोड़ा कि सामाजिक संरचनाओं का आकार और गठन हमेशा समय और स्थान के लिए विशिष्ट होता है क्योंकि वे स्वयं परिवर्तन के अधीन होते हैं इसलिए एक अवधि से दूसरे अवधि में भिन्न होता है। अंत में, जीवनी इस तरह की सभी सामाजिक संरचना को जोड़ती है और सामाजिक अनुभवों के साथ सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को चित्रित करने के व्यक्तिगत अनुभवों के साथ बदलती है और समाज के सदस्य के रूप में उनकी क्रिया कैसे आकार और पुनः आकार प्राप्त करती है। इस प्रकार से, इतिहास किसी भी सामाजिक समस्या का पता लगाने के लिए उसके संदर्भ को समझने और इस समस्या को पूरी तरह समझने में मदद कर सकता है। यह देखा जा सकता है कि किसी समस्या को समझने के लिए केवल एक शैक्षणिक दृष्टिकोण या संदर्भ के फ्रेम से किसी समस्या का विस्तृत विश्लेषण प्राप्त करने में मदद नहीं मिल सकती है बल्कि समाजशास्त्र और इतिहास दोनों की कई समस्याओं का वास्तविक उत्तर सामाजिक इतिहास में और/या ऐतिहासिक समाजशास्त्र में प्राप्त हो सकता है।

आगस्त कॉम्टे का समाजशास्त्र की धारणा समाजशास्त्र और समाज के विकास के अपने विश्लेषण में इतिहास को शामिल करता है। वह विभिन्न ऐतिहासिक चरणों के माध्यम से मानवता के विकास के कारणों पर ध्यान केंद्रित करता है। इसके अलावा, टिली (2001) देखते हैं कि, कार्ल मार्क्स का कैपिटल, मैक्स वेबर का इकोनोमी एंड सोसाइटी या फर्डिनेंड टॉनीज का 'गेमाइनशाफ्ट और गेसेलस्काफ्ट ने अपने सामाजिक विश्लेषण को समृद्ध करने के लिए व्यापक रूप से ऐतिहासिक आयाम का उपयोग किया है। इस तरह के विश्लेषण से पता चलता है कि एक समस्या का पता लगाने और इसके महत्व की जांच करने के लिए समाजशास्त्र इतिहास (उदाहरण के लिए वेबर का विवरण समाजशास्त्रियों द्वारा अपनी सामाजिक व्याख्या विकसित करने के लिए तैयार किए जाने वाले उदाहरण का एक आदर्श प्रकार है) की मदद लेता है। इसके अलावा, इतिहास में समाजशास्त्र को पेश करने के लिए कई चीजें हैं। मिसाल के तौर पर, उपलब्ध ऐतिहासिक स्रोत समाजशास्त्रियों को समाज, विश्लेषण और गतिशीलता पर विश्लेषण के लिए डेटा का एक बड़ा हिस्सा प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए, 1700 के दशक के उत्तरार्ध और 1800 के दशक के दौरान यूरोप में सामाजिक उथल-पुथल ने विद्वानों को समाज का अध्ययन करने और सामाजिक विकास के पैटर्न को समझने के लिए प्रेरित किया। इस प्रभाव के लिए, पर्याप्त उदाहरण हैं जो इतिहास के साथ समाजशास्त्र के संबंध प्रदर्शित करते हैं। उदाहरण के लिए, कॉम्टे, स्पेंसर, मार्क्स, दुर्खाइम, वेबर, सिममेल, पारेतो, पार्सन्स और समकालीन समाजशास्त्री जैसे हबर्मास, मैनहेम, वालेंस्टीन, कास्ल्स इत्यादि जैसे कई समाजशास्त्रियों ने अपने सामाजिक विश्लेषण में ऐतिहासिक आयाम का उपयोग किया। उन्होंने आधुनिकता, विकास के मॉडल और शहरी समुदायों की समस्याओं पर अधिक जोर दिया। समाजशास्त्र अपने शुरूआती समय में और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में वर्तमान और अतीत दोनों में रुचि रखता था। अवधारणाओं को परिभाषित करने और संदर्भ में इसे व्यवस्थित करने के लिए इसे अनिवार्य रूप से ऐतिहासिक घटना के रूप में ऐतिहासिक घटना मिली। सामाजिक अवधारणाएं ऐतिहासिक और सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण घटनाओं के कारण व्याख्या में भी मदद करती हैं।

19वीं और 20वीं शताब्दी के ऐतिहासिक विकास में समाजशास्त्र के सिद्धांतों का विकास दर्शन, ज्ञान-मीमांसा और प्रगतिशील सोच के स्तर पर देखा गया है। विशेष रूप से,

सामाजिक सिद्धांत बौद्धिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक माहौल का उत्पाद रहा है जिसके भीतर वे विकसित हुए थे। उदाहरण के लिए, ज्ञानोदय उल्लेखनीय बौद्धिक विकास का समय था। इस अवधि में कुछ महत्वपूर्ण विचार और सामाजिक विचार उभरे। नव विकसित इन विचारों और चिंतन ने पुराने विचारों को बदल दिया। इस अवधि ने तर्क के कारण, तर्कसंगतता, वैज्ञानिक तरीकों या अनुभवजन्य शोध के माध्यम से समझे जा सकने वाले समाज को जन्म दिया। इसी तरह, 1789 में फ्रांसीसी क्रांति ने एक जगह बनाई जब मनुष्य के सार्वभौमिक अधिकारों ने सामाजिक निर्माण के आवश्यक तत्वों के रूप में स्वीकार किया। स्वतंत्रता, समानता, राष्ट्रवाद आदि जैसे नए विचारों ने आकार लिया। समाज की यह प्रभावित संरचना और विचारधाराओं और सामाजिक-राजनीतिक प्रतियोगिताओं के नए समूह का निर्माण किया। कई पहले समाजशास्त्री इस तरह के युग काल के उत्पाद थे और प्रगतिशील विचारों की परंपरा को आगे बढ़ाते थे। सेंट साइमन फ्रांसीसी क्रांति से सीधे प्रभावित था, जबकि कॉम्टे फ्रांसीसी क्रांति के बाद में रहते थे। इन पूर्व समाजशास्त्रियों ने चल रहे सामाजिक-सांस्कृतिक उथल-पुथल और मानवीय मामलों को समझने और परीक्षण करने के विचार दिए। उदाहरण के लिए, कॉम्टे (1865) नैतिक और सामाजिक दर्शन, इतिहास के दर्शन और महाद्वीप और विज्ञान के विशिष्ट तरीकों को एक साथ लाता है। कार्ल मार्क्स और मैक्स वेबर, जिन्हें समाजशास्त्र के संस्थापक के रूप में भी जाना जाता है, उन्होंने अपने सामाजिक विश्लेषण में इतिहास का उपयोग किया है। मार्क्स का सामाजिक परिवर्तन और ऐतिहासिक भौतिकवाद का विश्लेषण इसका उदाहरण है। इसी तरह, वेबर ने इतिहास और उसके विश्लेषण के गर्भ में तर्कसंगतता, आधुनिकता, पूंजीवाद, धर्मनिरपेक्ष समाज, शहर और आदर्श प्रकारों जैसे उनकी अवधारणाओं का विस्तार किया है। वेबर ने अपने कार्य 'इकोनॉमी एंड सोसाइटी' में जैसा कि पहले भी बताया गया है, ऐतिहासिक व्याख्या को ऐतिहासिक घटना के मूल और परिणामों के बारे में धर्मनिरपेक्ष सिद्धांतों के अपने प्रस्तावों को विस्तारित करने के लिए ऐतिहासिक व्याख्याओं को सामने लाता है।

समाजशास्त्र के क्षेत्र के कई बुद्धिजीवियों ने सामाजिक इतिहास के विकास की दिशा में काम किया है। विशेष रूप से, 19वीं और 20वीं शताब्दी के अंत में जर्मन भाषी देशों और अन्य देशों के कुछ इतिहासकार, जिन्होंने इस शिक्षण के पारंपरिक मार्गों को विचलित करने की हिम्मत की, धीरे-धीरे सामाजिक इतिहास के विकास में योगदान देने लगे। उदाहरण के लिए, जे एच टर्नर ने सभ्यता और जंगल के बीच की सीमाओं के संदर्भ में अमेरिका की स्थिति की व्याख्या की। सी. ए. दाढ़ी ने अमेरिकी गृहयुद्ध का औद्योगिक उत्तर और कृषक दक्षिण के बीच संघर्ष के रूप में व्याख्या और विश्लेषण किया। इसी प्रकार, बेल्जियम हेनरी पिरेन ने यूरोप का एक सामाजिक-आर्थिक इतिहास विकसित किया। डच विद्वान जॉन हुईज़िंग मध्य युग के अंत में अपना काम समर्पित किया और सांस्कृतिक इतिहास में एक महत्वपूर्ण योगदान दिया। इसके अलावा, संक्षेप में ठहराव के बाद, 1920 के दशक में इतिहास में एक महत्वपूर्ण बदलाव आया। यह बदलाव वास्तव में एनाल्स स्कूल से जुड़ा हुआ था, जिसे दुर्खिम के समाजशास्त्र से प्रभावित स्ट्रैसबर्ग विश्वविद्यालय के लुसीन फरवरी (1878-1956) और मार्क ब्लोच (1856-1944) के दो प्रसिद्ध प्रोफेसरों द्वारा शुरू किया गया था। उन्होंने इतिहास के व्यापक अध्ययन की वकालत की थी। इसके अलावा, समय के साथ-साथ, समाजशास्त्र ने भी अपने दृष्टिकोण और प्रणाली संबंधी (मेथडलाजिकल) परंपराओं में वृद्धि की। यद्यपि 20वीं शताब्दी के दौरान समाजशास्त्र और इतिहास थोड़ा अलग हो गए, लेकिन एक पूर्ण अलगाव कभी नहीं हुआ। यह मुख्य रूप से इस कारण से था कि एक नया और रोचक शोध अभिविन्यास अर्थात् ऐतिहासिक समाजशास्त्र ने आकार लिया और धीरे-धीरे सामाजिक अध्ययन में एक प्रमुख स्थान प्राप्त किया। अंततः इतिहास ने अतीत के सामाजिक विश्लेषण और वर्तमान के लिए प्रासंगिक प्रासंगिकता को साबित

करने में मदद की। यदि कोई सामाजिक सिद्धांतों में अपनी जड़ों की तलाश करता है, तो पार्सन्स की संरचनात्मक-कार्यात्मकता को एक महत्वपूर्ण प्रेरक कारक माना जा सकता है जो समाजशास्त्र और इतिहास को एक स्थान पर लाता है। इसके अलावा, 1957 में रॉबर्ट नेली बेलह ने 'ताकीगावा धर्म' नामक पुस्तक प्रकाशित की, जिसने विरोधवादी नैतिकता के जापानी समकक्ष को प्रकट किया। 1959 में नील जे स्मेल्सर ने अपनी पुस्तक 'सोशल चेंज इन इंडस्ट्रियल रेवोल्यूशन' में अंग्रेजी औद्योगिक क्रांति के दौरान कपास उद्योग के विकास की जांच करके सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति की व्याख्या करने का प्रयास किया। इसी तरह, 1960 के दशक में टैल्कॉट पार्सन्स ने सोसाइटीजः इवोल्यूशनरी एंड तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य (1971) और 'द सिस्टम ऑफ मॉडर्न सोसाइटीज' (1971बी) जैसे कार्यों में कार्यात्मक भेदभाव के माध्यम से प्रणाली की अनुकूली क्षमता बढ़ाने की अवधारणा के आधार पर सामाजिक विकास का सिद्धांत विकसित किया।। इसके अलावा, 1970 के दशक के मध्य में, नॉरबर्ट एलियास ने सभ्यता के सिद्धांत पर काम किया जिसमें उन्होंने व्यक्तित्व, व्यवहार और राज्य के गठन के सिद्धांत में ऐतिहासिक परिवर्तनों को व्यापक रूप से शामिल किया।

ऐसा कहा जाता है कि 1946 से 1960 के दशक संभवतः समाजशास्त्र का स्वर्ण युग था, जब इसका वैज्ञानिक दृष्टिकोण स्पष्ट लग कर रहा था, तो इसका भविष्य प्रत्याशित दिखाई देता था और इसके बौद्धिक अगुओं ने क्या करना है और कैसे करना है इसमें सुनिश्चित थे। हालांकि, बदलते समय सामाजिक जरूरतों और 1960 के बाद वैश्वीकरण ने समग्र सामाजिक संभाषण, एक दुसरे से जुड़ी हुई दुनिया, नेटवर्क समाज, सूचना क्रांति और सांस्कृतिक अध्ययनों के उद्भव ने समाजशास्त्र के संदर्भ को बदल दिया है। आधुनिकता अतीत का विषय बन गया। पिछले कुछ दशकों में समाजशास्त्री 'पोस्ट' पर बहुत अधिक चिन्तित हो गए है जैसे कि उत्तर-औद्योगिकीकरण, उत्तर-उपनिवेशवाद, उत्तर प्रत्यक्षवाद उत्तर संरचनावाद। हबर्मस ने (कार्य और सार्वजनिक क्षेत्र के बारे में बताया), फूको ने (आधुनिकता और जेल प्रणाली), एंथनी गिडेंस ने (आधुनिकता) जैसे विभिन्न समाजशास्त्री ने अपने सामाजिक विश्लेषण को विस्तारित करने के लिए ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य पर काम किया और इसका उपयोग किया।

4.2.3 समाजशास्त्र और इतिहास में अंतर

समाजशास्त्र और इतिहास के बीच अंतर हालांकि सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में समाजशास्त्र और इतिहास दोनों ही दो भिन्न बौद्धिक शैक्षणिक विषय है, दोनों ही अपनी शैक्षणिक पद्धतियों, दृष्टिकोणों और उद्देशों में भिन्नता रखते हैं। जॉन एच् गोल्डथोर्पे (1991) जिन्होंने यूनिवर्सिटी कॉलेज, लन्दन में बीसवीं शताब्दी के मध्य में इतिहास का अध्ययन किया, समाजशास्त्र और इतिहास दोनों के अनुसंधान दृष्टिकोणों की तुलना करते हैं। उनका दावा है की समाजशास्त्र और इतिहास दोनों ही अपने वर्तमान और अतीत के अभिविन्यास में भिन्न हैं। इतिहासकार समय-स्थान को स्थानबद्ध कर अपने निष्कर्षों पर ज़ोर देते हैं जबकि समाजशास्त्री स्थान-समय के आयामों से ऊपर उठकर अपनी समझ पर विश्वास करते हैं। अतः समाजशास्त्र और इतिहास में बड़ा अंतर विश्लेषण के लिए रखे गए तथ्य और साक्ष्य की प्रकृति से सम्बंधित है। समाजशास्त्री अतीत और प्राथमिक तथ्यों में अधिक दिलचस्पी रखते हैं जबकि इतिहासकार अतीत में दिलचस्पी रखते हैं और संग्रहित माध्यमिक तथ्यों और अतीत की घटनाओं की खोज करते हैं। एक समृद्ध सामाजिक विश्लेषण के लिए, अक्सर यह तर्क दिया जाता है कि समाजशास्त्रियों को ऐतिहासिक रूप से अवगत होना चाहिये- उन्हें ऐतिहासिक परिस्थितियों और सीमाओं से भी अवगत होना चाहिए जो उनके सामाजिक मुद्दों के विश्लेषण की सुचना देता हो। गोल्डथोर्पे (1991) का तर्क है कि इतिहास

और समाजशास्त्र महत्वपूर्ण रूप से दो भिन्न बौद्धिक उद्धम हैं। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि इतिहास और समाजशास्त्र को निष्कर्ष के तहत एक मानना गलत है। इतिहास किसी भी अर्थ में समाजशास्त्र की तरह प्राकृतिक विज्ञान नहीं है। यह रंगहीन इकाइयों की तलाश नहीं करता। ऐसा कहा जाता है कि इतिहास तथ्यों को पुनः प्रस्तुत करता है जबकि प्राकृतिक विज्ञान तथ्यों की व्याख्या करता है। इतिहासकार ठोस तथ्यों को इकट्ठा करते हैं और इन तथ्यों को एक अनूठी घटना के रूप में पुनः प्रस्तुत करते है जबकि समजशास्त्री विशिष्ट तथ्यों को खोजने और सूत्रबद्ध करने के लिए प्रासंगिक और विभिन्न श्रेणियों में परिकल्पना, वर्गीकृत और व्यवस्थित डेटा पर कार्य करते हैं।

समाजशास्त्र और इतिहासः भिन्नताएं

सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में समाजशास्त्र और इतिहास दो अलग अनुशासन है जो पद्धतियों, दृष्टिकोणों और उद्देश्यों में भिन्न है। समाजशास्त्रियों में संख्याओं की और इतिहासकारों में तिथियों और शब्दों की लालसा होती है। समाजशास्त्री नियमों को मान्यता देते हैं और विविद्धता को अनदेखा करते हैं जबकि इतिहासकार व्यक्तियों और विशिष्टता पर बल देते हैं। समाजशास्त्री अवधारणाओं के प्रकार विज्ञान को बनाने के लिए सामान्यीकृत, एकरूपता और प्रक्रियाओं की तलाश करते हैं जो इतिहासकारों द्वारा किसी विशेष मामले में प्रस्तावित वास्तविक तथ्यों से अलग होता है। इतिहास को समाज के मूर्त और विवरणात्मक विज्ञान के रूप में देखा जाता है। इतिहास सामाजिक अतीत की एक तस्वीर को बनाने का प्रयास करता है। दूसरी तरफ, समाजशास्त्र को समाज का सारांश और सैद्धांतिक विज्ञान का एक रूप कहा जाता है। इस विषय में समाजशास्त्र का विस्तार इतिहास से व्यापक माना जाता है।

यह सत्य है कि समाजशास्त्र और इतिहास एक ही भाषा नहीं बोलते। दोनों ही व्यवाहारिक रूप से कई मायनों में एक दूसरे से भिन्न मत रखते है। विशेषकर, हमें इसे केवल दो भिन्न व्यवसाय मात्र के रूप में नहीं देखना चाहिए, अपितु यह एक संरचना है जिसकी भाषा, विचार की शैली और मूल्य भिन्न है जो शिक्षा और प्रशिक्षण में भिन्नता के द्वारा आकार पाते हैं। ऐसा कहा जाता है कि समाजशास्त्रियों में संख्याओं की और इतिहासकारों में तिथियों और शब्दों की लालसा होती है; समाजशास्त्री नियमों को मान्यता देते हैं और विविद्धता को अनदेखा करते हैं जबकि इतिहासकार व्यक्तियों और विशिष्टता पर बल देते हैं। इसके आलाव, समाजशास्त्र इतिहास से इन अर्थों में भिन्न है कि समाजशास्त्री अवधारणाओं के प्रकार विज्ञान को बनाने के लिए सामान्यीकृत, एकरूपता और प्रक्रियाओं की तलाश करते हैं जो इतिहासकारों द्वारा किसी विशेष मामले में प्रस्तावित वास्तविक तथ्यों से अलग होता है। अनेक विद्वानों ने इतिहास को समाज के मूर्त और विवरणात्मक विज्ञान का एक रूप कहा है। इतिहास सामाजिक अतीत की एक तस्वीर को बनाने का प्रयास करता है। दूसरी तरफ, समाजशास्त्र को समाज का सारांश और सैद्धांतिक विज्ञान का एक रूप कहा जाता है। इस विषय में समाजशास्त्र का विस्तार इतिहास से व्यापक माना जाता है। समाजशास्त्र न केवल सामाजिक वर्तमान से अपितु यह सामाजिक अतीत से भी सम्बंधित होता है। अतः समाजशास्त्र मुद्दों की एक विस्तृत श्रृंखला को शामिल करता है; यह अक्सर व्यापक उद्देश्य को लक्षित करता है और समान्यीकरण को उत्पन्न करने के लिए समय और स्थान की सीमाओं का अतिक्रमन कर सैद्धांतिक कथनों में स्थापित करता है।

बोध प्रश्न 1

1) समाजशास्त्र और इतिहास के बीच परस्पर संबंध की चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) समाजशास्त्र और इतिहास के बीच अंतर की चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) निम्नलिखित समाजशास्त्रियों में से किसने अपने समाजशास्त्रिय विश्लेषण में इतिहास का प्रयोग किया?

क) अगस्त कॉम्ते

ख) एमिली डर्कहेम

ग) कार्ल मार्क्स

घ) उपरोक्त सभी

4.3 एक उप संकाय के रूप में एतिहासिक समाजशास्त्र

ऐतिहासिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र की एक शाखा है। यह समाजशास्त्र और इतिहास के मिलान बिंदु के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुआ। दोनों संकाय सामान्य विषयों पर व्याख्या हेतु अवधारणा और सैद्धांतिक आधार के रूप में एक दूसरे के समीप आयी है जो दोनों की क्षेत्रीय सीमाओं को छूती है। सीमाओं को पार करने की इस प्रक्रिया ने ऐतिहासिक समाजशास्त्र नमक एक उप-क्षेत्र के विकास को जन्म दिया। ऐतिहासिक समाजशास्त्र अपने विश्लेषण में इतिहास का उपयोग करता है। इसके अतिरिक्त, यह ध्यान देने योग्य है कि परिवार में परिवर्तन और विकास के मुद्दों, रिश्तेदारी, प्रवास और दहेज प्रणाली के मुद्दों इत्यादि सभी का एक अतीत है जिसका प्रभाव उनकी वर्तमान स्थिति पर पड़ता है। यह अतीत समस्या की वर्तमान स्थिति या विचाराधीन मुद्दों को समझने के महत्वपूर्ण संकेत रखता है। ऐतिहासिक समाजशास्त्र इस बात

ऐतिहासिक समाजशास्त्र

ऐतिहासिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र की एक शाखा है। यह बीसवीं सदी के दौरान मुख्य रूप से समाजशास्त्र और इतिहास के टकराव के परिणामस्वरूप उभरा। समाजशास्त्र के एक उप-क्षेत्र के रूप में ऐतिहासिक समाजशास्त्र अनुशासन को दो महत्वपूर्ण योगदान देगा। पहला, यह सामाजिक विश्लेषण को लाभदायक रूप से एतिहासिक रूप दे सकता है यह लाभदायक रूप में सामाजिक विश्लेषणों का ऐतिहासिकरण, ऐतिहासिक दृष्टि से किन्ही सामाजिक विश्लेषणों को स्थापित करने में मदद कर सकता है। दूसरा, यह महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दों पर ध्यान आकर्षित करने में मदद करेगा जिन्हें गंभीर रूप से ऐतिहासिक विश्लेषणों की आवश्यकता है परन्तु जो किन्ही कारणों से सामाजिक विश्लेषणों में अन्देखे या उपेक्षित रह गए हैं।

में दिलचस्पी रखता है कि लोग, समुदाय और समाज बदलते समय के साथ कैसे बदल रहे हैं, उन्होंने स्वयं को समकालीन आधुनिक समाजों में कैसे परिणत किया? साम्राज्यवाद, पुनर्जागरण, फ्रांसीसी क्रांति और औद्योगिक क्रांति जैसे महान परिवर्तनों ने किस प्रकार आधुनिक दुनिया को आकार दिया? जैसा कि पहले भी चर्चा की गई है अनेक प्रारंभिक समाजशास्त्रियों जैसे काल्डन, कॉम्टे, स्पेंसर, वेबर, डर्कहेम साइमन इत्यादि ने इस क्षेत्र में बड़े पैमाने पर योगदान दिया है। उदाहरण के लिए, मैक्स वेबर ने अपने अध्ययन, 'दा सिटी' जो बहुत पहले 1921 में प्रकाशित हुआ, के अंतर्गत ऐतिहासिक प्रतिमान का प्रयोग किया और आधुनिक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के वाहक और आधुनिक राष्ट्र-राज्य के अग्रदूत के रूप में शहर की भूमिका की जांच की। इतिहास की घटनाओं पर अपने सैद्धांतिक कथनों के सत्यापन में पूर्व समाजशास्त्रियों के समालोचनात्मक योगदान के आलावा, यह कहा जाता है कि फ्रांस में जॉर्ज बेलेंदियर और अमरीका में रोबर्ट निस्बेट ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य की प्रासंगिकता की ओर ध्यान आकर्षित कराने वाले अग्रणीय समाजशास्त्री थे। एस एन एसेंस्तेड, बी मूर, टी स्कोक्पेल, सी टिली, जे हबेर्मस, एम कैस्टाल्स, ए जी फ्रेंक, आई वालेंस्टीन सभी ने आधुनिक विश्व में विकास के प्रतिमानों पर अपने सामाजिक विश्लेषण और सैद्धांतिक विचारों में इतिहास को प्रमुख स्थान दिया।

ऐसा माना जाता है कि ऐतिहासिक समाजशास्त्र कहे जाने वाले भिन्न उप-क्षेत्र का विचार बीसवीं शताब्दी के आस-पास मूर्त हुआ। यह वर्तमान के प्रत्यक्ष अवलोकन और भूतकाल के अप्रत्यक्ष अवलोकन से आने वाले प्रमाणों के बीच समाजशास्त्री द्वारा प्रारंभ किये गए भेद के कारण प्रारंभिक रूप से विकसित होना शुरू हुआ। ऐतिहासिक समाजशास्त्रियों ने वास्तव में अतीत से वर्तमान के संबंध को समझना प्रारंभ कर दिया था। जन्य कारणों के संबंध का पता लगाना या प्रसंग के संबंध में समस्या को खोजना ना केवल समझने के लिए बल्कि समकालीन विकास की पूरी तरह से जाँच करने के लिए भी महत्वपूर्ण हो जाता है। मिसाल के तोर पर जर्गन हेबरमास ने अपने कार्य 'थ्योरी ऑफ़ कम्युनिकेटिव एक्सन' में आधुनिक इतिहास से सम्बंधित विकासों की व्याख्या की है। उन्होंने आधुनिकीकरण, संचार, तर्कसंगतता और मानव स्वतन्त्रता से सम्बंधित विकासों पर मार्क्स, वेबर, डर्कहेम, पार्सन्स व अन्य जैसे पूर्व समाजशास्त्रियों के काम का आलोचनात्मक अध्ययन किया है। इसी प्रकार, मैनुअल कास्टल्स ने अपने प्रसिद्ध कार्य 'दा इनफोर्मेशन ऐज' में ज़रूरतों, विकल्पों और चुनौतियों को जिसका सामना मानवता आज कर रही है को समझने के लिए व्यापक रूप से आधुनिक दुनिया में बदलती सुचना प्रणाली और पहचान की जांच की। इसके अलावा, समीर अमीन (1989), जेम्स एम ब्लांट (1993), जैक गुडी (1996), आंद्रे गंदर फ्रैंक (1998), जैसे कई विद्वानों ने ऐतिहासिक या राजनीतिक समाजशास्त्र के क्षेत्र में काम किया। उन्होंने मानवीय सामाजिक विचारों और मामलों से प्राप्त यूरोप के विशेषाधिकार प्राप्त स्थान से प्रतिस्पर्धा के लिए आधुनिक दुनिया के उद्भव के इतिहास की खोज की। उन्होंने अपरिहार्य रूप से इस विचार को चुनौती दी कि आधुनिकता यूरोप में विकसित हुई और उसके बाद दुनिया के अन्य हिस्सों में फ़ैल गई। ऐतिहासिक समाजशास्त्र के प्रभाव क्षेत्र के भीतर, उन्होंने समय और स्थान के द्वैतवाद से संघर्ष किया, यूरोप और अमरीका से परे देशज लोगों द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका को उबारने के लिए यूरोप केन्द्रित धारणा के विचार पर विवाद किया।

ऐतिहासिक समाजशास्त्र जो की किसी समस्या को समझने के लिए अनिवार्य रूप से इतिहास में उतरता है ज्ञान के सृजन की वर्गावली को विस्तृत बनाने की लिए अंतरविषयी विद्दवत्ता के विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। समाजशास्त्र के उप-क्षेत्र के रूप में ऐतिहासिक समाजशास्त्र इस अनुशासन में दो प्रमुख योगदान देने की संभावना रखता है। पहला, ऐतिहासिक रूप से किसी भी सामाजिक विश्लेषणों को स्थापित करने में मदद करने के लिए यह लाभपूर्वक सामाजिक विश्लेषणों को ऐतिहासिक बना सकता है। यह न केवल

विश्लेषणों के महत्व को बढ़ाएगा अपितु उनके समय और स्थान की सीमाओं को निर्धारित कर संदर्भतः सामाजिक विश्लेषणों को आधार प्रदान करेगा और इस प्रकार से अन्य आनुभविक समान्यीकरण के साथ भी समान रूप से संलग्न होगा। दूसरा, अति व्यापक ऐतिहासिक समाजशास्त्र उन महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दों पर ध्यान खींचने में मदद करेगा जिन्हें ऐतिहासिक विश्लेषण की गंभीर आवश्यकता है परन्तु किन्ही कारणों से सामाजिक विश्लेषणों में सदा अनदेखा या उपेक्षित ही रहा। अनेक समाजशास्त्री इस बात की वकालत करते हैं कि इतिहास को समाजशास्त्रियों के सामाजिक विश्लेषणों या संवेदनशीलताओं की व्याख्या ना केवल सामाजिक उद्भव, संस्कृति और सभ्यता में बदलाव या विकास संबंधी परम्परा का अध्ययन करते समय करनी चाहिए अपितु तब करनी चाहिए जब हम स्थायित्व या रोजमर्रा के जीवन की वास्तविकता का अध्ययन कर रहें हों।

बोध प्रश्न 2

1) समाजशास्त्र और इतिहास के बीच परस्पर टकराव के परिणाम के रूप में ऐतिहासिक समाजशास्त्र पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) वे कौन से प्रमुख समाजशास्त्री है जिन्होंने ऐतिहासिक समाजशास्त्र के क्षेत्र में काम किया? चर्चा करें?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) निम्न में से किसने अमरीका में ऐतिहासिक समाजशास्त्र के विकास को प्रेरित किया?

क) जॉर्ज बेलेंदियर

ख) रोबर्ट निस्बेट

ग) मैक्स वेबर

घ) कार्ल मार्क्स

4.4 सारांश

इस इकाई में, हमने समाजशास्त्र के साथ इतिहास और उसके अंतर्संबंध के अर्थ और परिभाषा की जांच की। हमने देखा कि समाजशास्त्र और इतिहास किस प्रकार परस्पर जुड़े हुए हैं और वास्तव में एक दूसरे पर निर्भर हैं? संस्कृति और संस्थाओं का इतिहास भूतपूर्व समाज, उसकी गतिविधियों और विकास को समझने में सहायक हैं। इसी प्रकार, समाजशास्त्र अपने उपकरणों जैसे सामाजिक कल्पना, आदर्श प्रकार और कई अन्य भी उपलब्ध कराता है, जिससे पिछली सामाजिक घटनाओं को समझने और अवधारणा बनाने में मदद मिलती है। हमने यह भी देखा कि समाजशास्त्र वर्तमान से कैसे संबंधित है, परन्तु यह अपने संदर्भ को भूतकाल में स्थापित करता है। यह देखा गया है कि दोनों विषयों को एक मुद्दे का पूरा आंकलन करने के लिए एक दूसरे की आवश्यकता होती है। समाजशास्त्र के लिए यह आवश्यक है कि संदर्भ को समझने और इसके विश्लेषणों में महत्वपूर्ण मूल्य जोड़ने के लिए अतीत में झाँके। इसी तरह इतिहास भी ऐतिहासिक घटनाओं का अध्ययन करते समय सामाजिक-सांस्कृतिक पहलुओं को ध्यान में रखता है। इतिहासकार को ऐतिहासिक घटनाओं को विस्तृत रूप से लिखने और समझाने के लिए सामाजिक पृष्ठभूमि और कई बार समाजशास्त्रीय अवधारणाओं की भी आवश्यकता होती है।

इस इकाई में, हमने समाजशास्त्र और इतिहास के बीच भेदों का मूल्यांकन भी किया है। यह वर्णित है कि समाजशास्त्र वर्तमान के साथ अधिक सम्बंधित है जबकि इतिहास अतीत के साथ। इसी के अनुसार इनके दृष्टिकोण और उद्देश्य भी भिन्न होते हैं। इसके अलावा यह भी देखा गया है कि दोनों विषयों के बीच के संबंध को कई मिथकों और भ्रांत धारणाओं से भी चिंहित किया गया है। उदाहरण के लिए, इतिहासकारों द्वारा समाजशास्त्रियों को ऐसे पेशेवरों के रूप में माना जाता है जिनकी अमूर्त विशिष्ट शब्दावली विशेष समय और स्थानों के प्रति संवेदनशीलता का अभाव रखती है। दूसरी तरफ़, इतिहासकारों को अक्सर सूचनाओं के संग्रहकर्ता मात्र के रूप में देखा जाता है जो आवश्यक शिष्टता और पद्धतिगत सूक्ष्मता के साथ अपने ज्ञान का विश्लेषण करने में असमर्थ हैं। कहा जाता है कि इतिहास अधिक यथार्थपूर्ण और वर्णनात्मक होना चाहिए जबकि समाजशास्त्र को अधिक भावात्मक और सैद्धांतिक विज्ञान माना जाता है। हालांकि एक दूसरे से निकट संबंध होने के बावजूद भी ऐसा कहा जाता है कि ये दोनों विषय अपने उद्देश्यों, वैश्विक विचारों, दृष्टिकोणों और पद्धतियों के संदर्भ में दोनों भिन्न बौद्धिक उद्धम हैं।

हमने यह भी उल्लेखित किया है कि दोनों विषयों के परस्पर टकराव के परिणामस्वरूप ऐतिहासिक समाजशास्त्र कैसे उभरा है। यह भी उल्लेखित किया गया है कि समाजशास्त्र की शाखा के रूप में ऐतिहासिक समाजशास्त्र ने एक अंतरविषयी विद्वत्ता के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। प्रमुख अनुशासन के रूप में समाजशास्त्र के प्रारंभ से कई समाजशास्त्री, जैसे मार्क्स, वेबर, डर्कहेम उसके बाद कास्टेलस, अमीन, फ्रैंक और ब्लॉट जैसा की उल्लेख किया गया है ने इस क्षेत्र में विस्तृत योगदान दिया है। संक्षेप में, समाजशास्त्र और इतिहास दोनों ही, हालांकि सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में दोनों भिन्न विषय होने के बावजूद परस्पर बहुत अधिक जुड़े हुए हैं और अध्ययन के क्षेत्र में एक दूसरे के पूरक भी हैं।

4.5 संदर्भ

एब्बट, ए. (1991). हिस्ट्री एंड सोशियोलॉजीः दा लोस्ट सिंथेसिस, सोशिअल साइंस हिस्ट्री, वॉल्यूम. 15, नंबर 2, पृ. 201-238

कार, ई. एच (1967). व्हाट इज़ हिस्ट्री? लंडन, विंटेज।

कॉम्टे, अगस्ते. (1865) जर्नल व्यूह ऑफ़ पोज़िटिविज्म. अनुवाद. जे. एच. ब्रिजिज़. लंडन, ट्रबनर एंड को द्य

गिन्सबर्ग एम. (1932) हिस्ट्री एंड सोशियोलॉजी, फिलोसोफी, वॉल्यूम. 7, नंबर 28, पृ. 431-445

गोल्द्थोर्पे जॉन एच. (1991). दा यूज़िज़ ऑफ़ हिस्ट्री इन सोशियोलॉजीः रिफ्लैक्शन्स ऑन सम रीसेंट तेंड़ेंसी, दा ब्रिटिश जर्नल ऑफ़ सोशियोलॉजी वॉल्यूम. 42, नंबर 2 (जून., 1991), प्रष्ठ 211-230

ग्रिफिन, एल. जे. (1995) हाऊ इज़ सोशियोलॉजी इन्फॉर्मड बाय हिस्ट्री? सोशियल फोर्सिज़, वॉल्यूम. 73, नंबर 4, प्रष्ठ 1245-1254

मल्लारी, ए. ए. टी. (2013). ब्रिजिंग हिस्ट्री एंड सोशियोलॉजी इन स्टडिंग कोलोनियल प्रिज़न्सः नोट्स एंड रिफ्लेक्षंस, फिलिपींस सोशियोलॉजीकल रिव्यू, वॉल्यूम. 61, नंबर 1, सोशियोलॉजी एंड इंटरडिसिप्लिनेरी, पृ. 43-54.

मिल्स, सी. राइट (1959). दा सोशियोलॉजीकल इमैजिनेशन, न्यू यॉर्क, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस।

इस्टराइकर, एमिल. (1978). मार्क्स कम्पेरेटिव हिस्टोरिकल सोशियोलॉजी, डाईलेक्टिकल अन्थ्रोपोलोजी, वॉल्यूम. 3, नंबर 2, पृ. 139-155

टिली, चाल्स (2001). हिस्टोरिकल सोशियोलॉजी, इन इंटर्नेशनल इनसाईक्लोपीडिया ऑफ़ दा बीहेवियोरल एंड सोशल साइन्सेज़, एम्स्टर्डमः एल्सिविएर. वॉल्यूम. 10, पृ. 6753–6757.

इकाई 5 समाजशास्त्र का अर्थशास्त्र से संबंध*

संरचना

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 समाजशास्त्र का अर्थशास्त्र से संबंध

- 5.2.1 समाजशास्त्र की परिभाषा
- 5.2.2 अर्थशास्त्र की परिभाषा
- 5.2.3 समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र में समानता
- 5.2.4 समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र में अंतर
- 5.2.5 विभिन्न अर्थशास्त्रियों की परिभाषाएं तथा उनका समाजशास्त्र से संबंध
- 5.2.6 विभिन्न समाजशास्त्रियों की परिभाषाएं तथा उनका अर्थशास्त्र से सम्बन्ध

5.3 आर्थिक समाजशास्त्रः समाजशास्त्र की एक उपशाखा

- 5.3.1 आर्थिक समाजशास्त्र का इतिहास
- 5.3.2 समकालीन आर्थिक समाजशास्त्र
- 5.3.3 नए आर्थिक समाज शास्त्र का उद्‌गम

5.4 समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र की सामान्य समस्याएं

- 5.4.1 बेरोजगारी
- 5.4.2 बालश्रम
- 5.4.3 असमानता
  - 5.4.3.1 आर्थिक असमानता
  - 5.4.3.2 सामाजिक असमानता

5.5 सारांश

5.6 संदर्भ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप पढ़ेंगे :

- समाजशास्त्र का उदगम और विकास;
- समाजशास्त्रःविस्तृत वर्णन;
- समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र का परस्पर संबंध; तथा
- समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र संबंधी सामान्य समस्याओं का विश्लेषण।

5.1 प्रस्तावना

इस इकाई में समाजशास्त्र तथा उसके अर्थशास्त्र से संबंध का वर्णन किया गया है। सामाजिक हालात किसी काल विशेष के विचारों तथा उसकी गतिविधियों को पूरी तरह प्रभावित करते हैं। समाज के तर्कसंगत विकास का अध्ययन करने के लिए उस कालावधि में यूरोप में घटी घटनाओं, फ्रांसीसी क्रांति, 17-18वीं शताब्दी की औद्योगिक क्रांति को

*अहमेदुल कबीर, केंद्रीय विश्वविद्यालय दक्षिण बिहार, गया

समझना जरूरी है। इसे उस काल का नवजागरण भी कहा जाता है क्योंकि इस काल में विज्ञान व सकारात्मक दर्शन का उद्‌भव हुआद्य सामाजिक विचार, सामाजिक दर्शन तथा सामाजिक सिद्धांत विभिन्न काल खंडों की सामाजिक अवधारणाओं व गतिविधियों से प्रभाव ग्रहण करते हैं। समाजशास्त्र सामाजिक विज्ञानों की एक विशेष शाखा है। यह अन्य सामाजिक विज्ञानों से अनेक मामलो में अलग हैं।

समाजशास्त्र की प्रमुख विशेषताएं–

अ) समाजशास्त्र एक स्वतंत्र विज्ञान हैः समाजशास्त्र अब पूर्ण रूप से एक स्वतंत्र सामाजिक विज्ञान विषय बन चुका है। अब इसे इतिहास, राजनैतिक विज्ञान अथवा दर्शनशास्त्र की तरह ही किसी सामाजिक विज्ञान की शाखा के रूप में नहीं जाना जाता है। एक स्वतंत्र सामाजिक विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र का अपना अध्ययन क्षेत्र, सीमा तथा विधि विकसित हुई है।

ब) समाजशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है, वह कोई भौतिक विज्ञान नहीं हैः वह भौतिकी, रसायन विज्ञान या जीव विज्ञान से बिलकुल अलग एक स्वतंत्र सामाजिक विज्ञानं है। इसके अंतर्गत मनुष्य, उसका सामाजिक व्यव्हार, सामाजिक क्रिया-कलाप तथा पूरा सामाजिक जीवन आता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता हैं कि-

1) समाजशास्त्र सामाजिक दर्शन से उत्पन्न होकर स्वतंत्र व समग्र रूप से विकसित हुआ है।

2) समाजशास्त्र का विकास सामाजिक दर्शन से उस दौर में हुआ जब यह महसूस किया गया कि समाज एक रचनात्मक संस्थान है और उसमें भी बदलाव आते हैं जैसा कि फ्रांसीसी तथा अमेरिकी क्रांति के दौरान हुआ।

5.2 समाजशास्त्र का अर्थशास्त्र से संबंध

5.2.1 समाजशास्त्र की परिभाषा

समाजशास्त्र सामाजिक संबंधों को आधार मानकर चलता है तथा सामाजिक संबंधों व व्यवहारों की व्यवस्थित पद्धतियों के मर्म के विश्लेषण का प्रयास करता है। ऐसा कह सकते हैं कि यह मुख्य रूप से तीन आधारभूत प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास करता है। पहला, समाज कैसे और क्यों विकसित हुए? दूसरा, क्यों और किस प्रकार समाज अस्तित्व में रहते हैं? तीसरा, समाज किस प्रकार परिवर्तित होते हैं?

प्रायः सभी समाजशास्त्री इन तथ्यों से सहमत हैं-

अ) समाजशास्त्र का सरोकार मुख्य रूप से मनुष्यों के सामाजिक व्यवहार तथा उनके पारस्परिक संबंधों के विश्लेषण से है।

ब) समाजशास्त्र मौलिक सामाजिक संस्थानों जैसे परिवार तथा सामाजिक व्यवस्था के अध्ययन पर जोर देता है।

स) समाजशास्त्र सामाजिक विकास, सामाजिक बदलाव तथा सामाजिक क्रियाकलापों पर ज़ोर देता हैं।

द) समाजशास्त्र सहयोग एवं प्रतिस्पर्धा, सौजन्य एवं समीकरण, सामाजिक टकराव एवं सामाजिक संपर्क, सामाजिक विभिन्नताओं व सामाजिक समरसताओं आदि सामाजिक प्रक्रियाओं की व्याख्या करता है।

समाजशास्त्र की अपनी स्वतंत्र कार्यप्रणाली होती है जो अनुभव जन्य आंकड़ों तथा अनुमानित तर्कों के आधार पर कार्य करती है। परंतु समान्यीकरण के स्तर पर विशिष्ट नियमों का पालन भी करती है।

समाजशास्त्र

समाजशास्त्र एक महत्वपूर्ण सामाजिक विज्ञान है क्योंकि यह लोगों के जीवन से सीधा सरोकार रखता है। सभी मनुष्य सामाजिक प्राणी हैं- सामाजिक संबंधों के बिना न बच्चों का ठीक से विकास हो पाता, न वयस्कों को दिशा मिल पाती। मानव अस्तित्व के लिए समाज का होना जरूरी है। इस प्रकार समाजशास्त्र समाज का सामान्य विज्ञान है।

5.2.2 अर्थशास्त्र की परिभाषा

अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है जो आवश्यकताओं तथा उनकी पूर्ति से सरोकार रखता है। अर्थशास्त्रियों का मानना है कि मनुष्य की आवश्यकताएँ एवं इच्छाएं असीमित होती हैं और उनकी पूर्ति के लिए उपलब्ध संसाधन सीमित होते हैं। यही कारण है कि लोग संसाधन इकट्ठे करने तथा धन कमाने में लगे रहते हैं जिससे वे अधिक से अधिक आवश्यकताएं व इच्छाएं पूरी कर सकें। किसान खेतों में, मजदूर कारखानों में, कर्मचारी कार्यालयों में तथा शिक्षक विद्यालयों में इसीलिए काम करते हैं कि वे धन अर्जित कर सकें।

विभिन्न कार्यों में लोग क्यों व्यस्त रहते हैं? इस प्रश्न का एक ही उत्तर है कि वे अपने-अपने कार्यों के बदले धन अर्जित करते हैं जिससे वे अपने जीवन में अधिक से अधिक आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की पूर्ति कर सकें। आवश्यकताएं अनेक प्रकार की होती हैं। इन में आवश्यक आवश्यकताएं हैं - रोटी, कपड़ा और मकान तथा अन्य अनेक आवश्यकताएं जैसे बेहतर शिक्षा, बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं आदि। सभी इच्छाओं की तथा आवश्यकताओं की पूर्ति इसलिए भी संभव नहीं क्योंकि ज्यों ही मनुष्य एक इच्छा पूरी करता है त्यों ही दूसरी इच्छा जन्म ले लेती है। इस सिलसिले का कोई अंत नहीं। कच्चे माल को उपयोग में आने वाली वस्तुओं में बदलने की प्रक्रिया अर्थशास्त्र के अंतर्गत आती है। इन वस्तुओं को उत्पाद कहा जाता है। वस्तुओं के इस्तेमाल को अर्थशास्त्र की भाषा में उपभोग एवं वितरण कहा जाताहै।

अर्थशास्त्र

अर्थशास्त्र उपभोग, उत्पादन एवं धन वितरण का अध्ययन है।

समाजशास्त्र सामाजिक विज्ञान है और वह मनुष्यों से जुड़े तमाम संस्थानों व सरोकारों से सीधा संबंध रखता है। समाजशास्त्र मानवीय व्यवहारों, उनकी सामाजिक परिस्थितियों तथा दशाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है। मनुष्य के समस्त आर्थिक क्रियाकलापों से अर्थशास्त्र का सीधा संबंध है। अर्थशास्त्र मूलतः धन एवं उससे जुड़े सरोकारों का अध्ययन है। प्रोफेसर रॉबिंस के अनुसार अर्थशास्त्र सामाजिक विज्ञान है, जो मनुष्य की असीमित इच्छाओं तथा सीमित संसाधनों से उपजे हालातों एवं मानवीय व्यवहारों का अध्ययन करता है। यह मनुष्य की उत्पादन, उपभोग, वितरण तथा आदान प्रदान से जुड़ी समस्त गतिविधियों पर विशेष ध्यान देता हैं। विभिन्न आर्थिक संगठनों जैसे बैंकों व बाज़ारों आदि के स्वरूप एवं कार्य प्रणालियाँ भी अर्थशास्त्र के अंतर्गत आते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अर्थशास्त्र मनुष्यों की भौतिक आवश्यकताओं तथा उसके हितों से सीधा संबंध रखता है।

समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र दोनों ही सामाजिक विज्ञान हैं और इनका एक दूसरे से गहरा संबंध है। दोनों एक दूसरे से संबंधित भी हैं और एक दूसरे पर निर्भर भी हैं। समाजशास्त्र

तथा अर्थशास्त्र के संबंध के संदर्भ में थॉमस का विचार है कि, अर्थशास्त्र समाजशास्त्र की एक शाखा है। सिल्वर मैन के अनुसार अर्थशास्त्र समाजशास्त्र से ही जन्मा है जो सभी सामाजिक संबंधों के सामान्य सिद्धांतों का अध्ययन करता है।

अर्थशास्त्र मनुष्य के लिए हितों को साधने वाले समस्त भौतिक संसाधनों का अध्ययन करता है। मानवीय हितों को साधने के लिए अर्थशास्त्र मनुष्य के हितों से जुड़े सभी विज्ञानों विशेष रूप से समाज विज्ञान से सहयोग लेता है। इस प्रकार अर्थशास्त्र समाजशास्त्र पर आधारित है। अर्थशास्त्र, क्योंकि समाजशास्त्र का ही हिस्सा है अतः समाजशास्त्र की सहायता के बिना अर्थशास्त्र को नहीं समझा जा सकता। मनुष्य के आर्थिक तथा सामाजिक हित एक दूसरे से सीधे जुड़ें हैं।

जब समाज के सामने आर्थिक मंदी, गरीबी, बेरोजगारी, अदि समस्याएं आती हैं तब उनका हल निकालने के लिए अर्थशास्त्री समाजशास्त्र की ही सहायता लेते हैं और पता लगाते हैं कि उस काल विशेष में कौन-कौन सी सामाजिक घटनाएं घटी। यह भी सच है कि व्यक्ति की आर्थिक गतिविधियों को समाज ही नियंत्रित करता है। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री मैक्स वेबर, विल्फ्रेडो परेटो आदि ने वित्तीय मामलों व सामाजिक सरोकारों पर विशेष अनुसंधान किए हैं जो अर्थशास्त्र के लिए बड़े उपयोगी साबित हुए हैं। कुछ अर्थशास्त्री तो यहां तक मानते हैं कि जब समाज बदलता है तो उसके साथ-साथ अर्थशास्त्र भी बदल जाता है। हर आर्थिक समस्या का समाधान प्रायः समाजशास्त्र से प्राप्त आंकड़ों से ही संभव हो पाता है। स्पष्ट है कि समाजशास्त्र से दूरी बना लेने से अर्थशास्त्र का विकास नहीं हो सकता। इसी प्रकार समाजशास्त्र भी अर्थशास्त्र के सहयोग पर निर्भर करता है।

अर्थशास्त्र से सामाजिक ज्ञान में वृद्धि होती है। सामाजिक जीवन के हर पहलू को कहीं ना कहीं आर्थिक सरोकार प्रभावित करते हैं। दहेज, आत्महत्या आदि सामाजिक समस्याएं प्रायः आर्थिक सरोकारों से ही जुड़ी होती हैं। आर्थिक तंगी ही अक्सर इन की जड़ों में पाई जाती है। इस प्रकार अर्थशास्त्र समाजशास्त्र का ही एक भाग है और अर्थशास्त्र के सहयोग के बिना समाजशास्त्री अधिकतर सामाजिक समस्याओं का समाधान नहीं तलाश सकते। सामाजिक विज्ञान एवं अनुसंधान के क्षेत्र में भी अर्थशास्त्र समाजशास्त्र की सहायता करता है। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री कार्ल मार्क्स मानता है कि समाज की स्थापना आर्थिक संबंधों से ही हुई है। हमारे सामाजिक जीवन में आर्थिक सरोकारों की भूमिका सबसे बड़ी होती है। आर्थिक संस्थानों से समाज शास्त्रियों का सीधा सरोकार रहता है। यही कारण है कि स्पेंसर, वेबर, दुर्खेइम आदि समाजशास्त्री यह मानते हैं कि अर्थशास्त्र से सहयोग लिए बिना मनुष्य के सामाजिक संबंधों का विश्लेषण नहीं किया जा सकता।

यह सच्चाई कि समाज पर आर्थिक सरोकारों का बड़ा प्रभाव पड़ता है तथा आर्थिक नीतियां एवं योजनाएं समाज की स्थितियों के आधार पर बनाई जाती हैं, साफ़ साफ़ बताती हैं कि समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र के बीच गहरा संबंध है। अर्थशास्त्र को मनुष्य जीवन के उद्यमों में व्यवसायों का अध्ययन कहा जा सकता है। दूसरे शब्दों में कहें तो अर्थशास्त्र वित्त एवं संसाधनों का विज्ञान है जिसकी तीन प्रमुख आयाम है- उत्पादन, वितरण तथा उपभोग।

समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र के बीच सहयोग का क्षेत्र बहुत व्यापक है। आर्थिक समस्याओं का अध्ययन करते समय अर्थशास्त्री समाज शास्त्रियों का साथ जरूरी मानते हैं। जब दोनों मिलकर काम करते हैं तो आर्थिक चुनौतियों का सामना करने में आसानी हो जाती है।

उपर्युक्त विवरण से भलीभांति स्पष्ट हो चुका है कि समाजशास्त्र व अर्थशास्त्र एक दूसरे से सीधे जुड़े हैं। सामाजिक व आर्थिक समस्याओं का सटीक हल समाजशास्त्री व अर्थशास्त्री

मिलकर ही निकाल सकते हैं। आर्थिक परिवर्तनों से सामाजिक बदलाव आते हैं तथा सामाजिक परिवर्तन होने पर आर्थिक परिवर्तन भी तदानुसार करने ही पड़ते हैं।

5.2.3 समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र में अंतर

एक दूसरे से इतनी गहराई से संबंधित होने तथा एक दूसरे पर इतने निर्भर होने के बावजूद इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि दोनों के बीच कुछ अंतर हैं जिनका विवरण नीचे दिया जा रहा है-

1) समाजशास्त्र समाज तथा सामाजिक संबंधों का अध्ययन करता है जबकि अर्थशास्त्र धन तथा उससे मिलने वाली सुविधाओं का अध्ययन करता है।

2) समाजशास्त्र का विकास समाज से उसके एक विज्ञान के रूप में हुआ है जबकि अर्थशास्त्र पहले से ही समाज के विज्ञान के रूप में मौजूद रहा है।

3) समाजशास्त्र अनुमान आधारित विज्ञान है जबकि अर्थशास्त्र आंकड़ों के आधार पर चलने वाला एक ठोस विज्ञान है जिसका सामाजिक विज्ञानों के बीच अपना महत्वपूर्ण स्थान है।

4) समाजशास्त्र प्रायः सामाजिक विज्ञान के सभी पहलुओं से संबंध रखता है जबकि अर्थशास्त्र सामाजिक विज्ञान के आर्थिक पक्ष को लेकर चलता है।

5) समाजशास्त्र का क्षेत्र व्यापक एवं विस्तृत है जबकि अर्थशास्त्र का क्षेत्र सीमित है।

6) समाजशास्त्र मनुष्यों की सामाजिक गतिविधियों से सरोकार रखता हैजबकि अर्थशास्त्र मनुष्यों की केवल आर्थिक गतिविधियों से सरोकार रखता है।

7) समाज शास्त्र के अध्ययन में समाज को इकाई माना जाता हैं जबकि अर्थशास्त्र के अध्ययन में व्यक्ति को इकाई माना जाता है।

8) समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र के अध्ययन की विधियां तथा तकनीक अलग-अलग हैं।

5.2.4 विभिन्न अर्थशास्त्रियों की परिभाषाएं तथा उनका समाजशास्त्र से संबंध

सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री ए सी पिगौ के अनुसार अर्थशास्त्र सामाजिक हित के केवल उस पक्ष का अध्ययन करता है जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से धन से संबंधित होता है। इस परिभाषा में अर्थशास्त्री ने पूरे समाज को ही आधार बनाया है। व्यक्तियों की आवश्यकताओं व सरोकारों को नहीं। यहां वह यह कहना चाहता है कि सामाजिक संबंध धन के कारण बनते हैं जोकि अर्थशास्त्र का क्षेत्र है। यदि हम सामाजिक संबंधों पर नजर डालें तो स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि धनवान प्रायः धनवानों के साथ संबंध बनाते हैं और उनके साथ ही अधिक समय बिताना पसंद करते हैं। गरीबों के लिए वहां कोई जगह नहीं होती। इसके अलावा अमीर लोग गरीबों की तुलना में अपने आप को उच्च मानते हैं क्योंकि उनके पास अधिक धन होता है जिससे वे बहुत से संसाधन इकट्ठे कर सकते हैं। जबकि गरीबों के पास धन नहीं होता। अमीरों के संपर्क में आते समय गरीब झिझकते हैं क्योंकि कम संसाधन होने के कारण उनके अंदर हीनता की भावना होती हैं। इससे स्पष्ट है कि सामाजिक संबंधों के निर्माण में समाज में धन की विशेष भूमिका होती है।

अर्थशास्त्री जॉन स्टूअर्ट मिल (1844) सामाजिक संदर्भ में अर्थशास्त्र के दखल पर जोर देते हुए कहता है कि,"अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो समाज के उन कार्यों के बारे में नियमों का निर्धारण करता है जो धन एवं उत्पादन से संबंधित है।" उक्त परिभाषा में स्पष्टतः आर्थिक

क्रियाओं पर समाज के प्रभावों को रेखांकित किया गया है। हर समाज में ऐसे प्राकृतिक नियम पहले से ही मौजूद रहते हैं जो आर्थिक लाभ के लिए आधार तैयार करते हैं।

सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री अलफ्रेड मार्शल के अनुसार मानव जीवन के उद्यमों के क्षेत्र का अध्ययन अर्थशास्त्र के अंतर्गत आता है। अर्थशास्त्र उन वैयक्तिक एवं सामाजिक गतिविधियों का अध्ययन करता है जो आवश्यकताओं की पूर्ति तथा हितों के संरक्षण से संबंधित हैं। इससे पता लगता है कि अर्थशास्त्र के अध्ययन के केंद्र में मनुष्य तथा उसकी सामाजिक गतिविधियां हैं। एक तरफ वह मनुष्यों का अध्ययन करता है तथा दूसरी ओर आर्थिक गतिविधियों से संबंधित आर्थिक क्रियाओं के सामाजिक प्रबंधन की बात कहता है। ऐसा कहकर उसने वैयक्तिकता व सामाजिकता के बीच सम्बन्ध स्थापित किया है। अथवा यह कह सकते है कि सामाजिक सन्दर्भ में व्यक्तियों के आर्थिक प्रयासों पर अधिक ज़ोर दिया है। जैसे एक चर्च केवल उन पत्थरों का समुच्य मात्र नहीं है जिनसे वह बनी है। जैसे एक व्यक्ति भावनाओं और विचारों के अलावा भी बहुत कुछ होता है वैसे ही समाज का जीवन उसमें रहने वाले सभी लोगों की जिंदगियों का जोड़ मात्र नहीं है।

सच्चाई यह है कि पूरे समाज के कार्य उसमें रहने वाले लोगों के कार्य ही होते हैं। यही कारण है कि किसी समाज की आर्थिक समस्याएं उसमें रहने वाले लोगों की ही होती हैं। समाज के लोगों के किसी न किसी व्यापार अथवा औद्योगिक संस्थान से जुड़े होने के कारण उनकी व्यक्तिगत आर्थिक समस्याएं भी आर्थिक नीतियों एवं कार्यक्रमों का हिस्सा बन जाती हैं। पूरे समाज के हितों को केंद्र में रखते हुए अल्फ्रेड मार्शल यह मानकर चलता है कि समाज के सदस्य प्रथक तथा प्रतिस्पर्धी व्यक्ति मात्र नहीं है, उन्हें आपस में संपर्क में रहते हुए ऐसी आर्थिक नीतियों का निर्माण करना चाहिए जिनके कारण व्यक्तियों के हितों में टकराव की स्थिति उत्पन्न न हो।

प्रमुख ब्रिटिश अर्थशास्त्री सर जेम्स स्टुअर्ट (1767) राजनैतिक अर्थव्यवस्था शब्द का इस्तेमाल करते हुए कहते हैं - जैसे परिवार की अर्थव्यवस्था सामान्यतः परिवार के सभी सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है, उसी प्रकार किसी देश की राजनैतिक अर्थव्यवस्था आर्थिक मदद के लिए इस तरह कदम उठाती है कि समाज में रहने वाले सभी लोगों की आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके, लोगों को योग्यतानुसार समुचित रोजगार मिल सके, उनके बीच आपसी समझ व सहयोग के संबंध इस प्रकार विकसित होते रहे कि वे एक दूसरे की रुचियों व आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए परस्पर सहयोग करते रहें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने समाज के विभिन्न घटकों- परिवार, नागरिक, सामाजिक संपर्क, आदान प्रदान अदि का उल्लेख किया है जो निश्चित रूप से समाज के विषय हैं। इस प्रकार उनके अनुसार ये साबित हो जाता है कि अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र एक दूसरे से सीधे जुड़े हैं।

5.2.5 विभिन्न समाजशास्त्रियों की परिभाषाएं तथा उनका अर्थशास्त्र से संबंध

सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री मैक्स वेबर के अनुसार "समाजशास्त्र वह विज्ञान है जो सामाजिक क्रियाओं की पूरी समझ रखता है ताकि वह उनके कारणों और परिणामों की संक्षिप्त व्याख्या कर सकें।" समाजशास्त्र द्वारा अपनाया जाने वाला कारण व प्रभाव का सिद्धांत अर्थशास्त्र से संबंधित है। इसके आधार पर विभिन्न आर्थिक नीतियों का प्रादुर्भाव होता है। फ्रांसीसी क्रांति का उल्लेख करते हुए मैक्स वेबर कहता है कि, फ्रांस की क्रांति वहां के आम लोगों को दी गयी यातनाओं तथा उन पर होने वाले अन्याय का परिणाम थी। जब फ्रांस के लोग बड़ी संख्या में गरीबी और बेबसी का शिकार होने लगे और उनकी समझ में आ गया कि

उन्हीं के समाज के कुछ लोग सत्ताधीशों से ताकत पाकर उन्हें नरकीय जीवन जीने पर विवश कर रहे है तो उन्होंने मिलकर सत्ता के खिलाफ बगावत कर दी और क्रांति का जन्म हुआ। स्पष्ट है कि फ्रांसीसी क्रांति के पीछे आर्थिक व सामाजिक कारण थे क्योंकि अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र एक दूसरे से संबंधित हैं तथा एक में घटित होने वाला कारण दूसरे को प्रभावित करता है और यदि दोनों एक साथ मिल जाए तो प्रभाव परिवर्तनकारी होता है। अनेकानेक आर्थिक कारण समाज पर अपना प्रभाव डालते हैं और उसके परिणाम आते हैं।

मॉरिस जींस बर्ग के अनुसार, "समाजशास्त्र व्यापक रूप से समाज में रहने वाले लोगों के परस्पर व्यवहारों तथा संबंधों, उनकी दशाओं एवं परिणामों का अध्ययन है।" अनेक सामाजिक एवं व्यक्तिगत घटक मनुष्य के आपसी संपर्क और व्यवहार को नियंत्रित करते हैं। इनमें भावनाएं, व्याहारिक गतिविधियां एवं आर्थिक कारण विशेष रूप से भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के लिए माता-पिता अपने बच्चों की अधिक से अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं, कम से कम तब तक जब तक कि वे स्वयं अपना जीवन चलाने के लिए धन अर्जित करने के काबिल नहीं हो जाते। परिवार व सामाजिक संस्थान भी बच्चों के लिए उपयोग की समस्त वस्तुएं उपलब्ध करवाते हैं तथा उन्हें समुचित सेवाएं प्रदान करते हैं। पति अपनी पत्नी की सभी प्रकार की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। उसका यह कार्य पारिवारिक एवं सामाजिक व्यवहार के अंतर्गत आता है। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि मनुष्यों के सामाजिक व्यवहारों व कार्यों में आर्थिक पक्ष विशेष रूप से सम्मिलित रहता है।

बोध प्रश्न

1) समाजशास्त्र के अर्थशास्त्र से संबंधों की व्याख्या कीजिए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) उन सामान्य समस्याओं की व्याख्या कीजिए जो अर्थशास्त्र व समाज शास्त्र दोनों के अंतर्गत आती हैं ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र में क्या अंतर है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5.3 आर्थिक समाजशास्त्रः समाजशास्त्र की एक उप शाखा

5.3.1 आर्थिक समाजशास्त्र का इतिहास

आर्थिक समाजशास्त्र की जड़ें प्राचीन दार्शनिक तथा सामाजिक विज्ञान की परंपराओं में देखी जा सकती हैं जबकि समाज विज्ञान की सुनियोजित व सुव्यवस्थित उपशाखा के रूप में आर्थिक समाजशास्त्र का इतिहास एक शताब्दी से अधिक पुराना नहीं है। अपने स्रोत से निकलने तथा विकसित होने के बाद आर्थिक समाजशास्त्र ने आर्थिक मामलों में समाज का विश्लेषण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सुप्रसिद्ध विद्वान कार्ल मार्क्स के लेखों में आर्थिक समाजशास्त्र के अभ्युदय की झलक मिलती है।स्मेल्सर, एन, जेव स्वेडबर्ग, आर के अनुसार "आर्थिक समाजशास्त्र" शब्द का प्रयोग 1879 में हुआ। सबसे पहले ब्रिटिश अर्थशास्त्री डब्लू स्टैन लेजेवनॉयस ने 1879 में "आर्थिक समाजशास्त्र" का उल्लेख किया। यहां से समाजशास्त्रियों ने इसे पकड़ा और 1890 तथा 1920 के बीच दुर्खेइम तथा वेबर ने समाजशास्त्र में इसका प्रयोग किया। इन्हीं दशकों में आर्थिक समाजशास्त्र का जन्म हुआ।

1893 में दुर्खेइम ने द डिवीज़न ऑफ़ लेबर इन सोसाइटी में इसका उल्लेख किया हैं तथा सिम्मलने अपनी पुस्तक द फिलॉसोफी ऑफ मनी (1900) में तथा वेबरने अपनी पुस्तक इकोनामी एंड सोसायटी (1908-20) में आर्थिक समाजशास्त्र का उल्लेख किया है। इससे समाज शास्त्र के क्षेत्र में एक नई चेतना जागी, एक नई धारा के अभ्युदय की नींव पड़ी। आरंभ में वेबर तथा उनके अन्य साथियों को ऐसा लगा था कि उन्होंने ही सबसे पहले आर्थिक समाजशास्त्र शब्द का प्रयोग किया है। उन्होंने उसके क्षेत्र पर अपने आप को केंद्रित करते हुए यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि समाज में अर्थव्यवस्था की क्या भूमिका है तथा अर्थव्यवस्था का सामाजिक विश्लेषण अर्थशास्त्र से किस प्रकार भिन्न है? आर्थिक क्रिया क्या है? इसमें यह जोड़ना भी आवश्यक है कि प्राचीन समय में एकत्रित किए गए आंकड़े पूर्वाग्रह से युक्त थे। इसका समाज पर प्रभाव पड़ा और समाज में एक बड़ा परिवर्तन आया।

5.3.2 समकालीन आर्थिक समाजशास्त्र

विशेष रूप से 1980 के बाद आर्थिक समाजशास्त्र ने अपनी उल्लेखनीय पहचान बना ली। कुछ समाजशास्त्री जो बाजार तथा समाज के संबंधों पर घनघोर अनुसंधान कर रहे थे उन्होंने बाजार तथा समाजशास्त्र पर अनेक लेख लिखे। इसका परिणाम यह हुआ कि आर्थिक समाजशास्त्र ने समाजशास्त्र में अब अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया। के 1980 अभियान में मार्क ग्रानोवेटर का विशेष योगदान रहा। मार्क ग्रानोवेटर ने ठोस सामाजिक

संबंधों में आर्थिक क्रियाओं की अंतर्निहितता पर विशेष जोर दिया। अपने लेख इकनोमिक इंस्टीटूशन्स ऐज़ सोशल कंस्ट्रक्शंस में मार्क ग्रानोवेटर ने तर्क दिया है कि, संस्थान वास्तव में संगठित सामाजिक नेटवर्क हैं क्योंकि अधिकतर आर्थिक क्रियाएं इन्हीं नेटवर्क पर घटित होती हैं। अतः यह आवश्यक है कि समाज विज्ञानी अर्थव्यवस्था का अध्ययन करते समय मनुष्यों के आपसी संबंधों पर विचार अवश्य करें। वह तर्क देता है कि समकालीन आर्थिक समाजशास्त्र में बाजारों को उत्पादकों का ऐसा नेटवर्क माना जाता है जो एक दूसरे पर पूरी तरह नजर रखते हैं तथा कदम कदम पर दबाव बनाते रहते हैं। ऐसे नेटवर्क का समकालीन आर्थिक समाजशास्त्र में महत्वपूर्ण स्थान है।

कार्ल पोलानई का भी आर्थिक समाजशास्त्र में विशेष योगदान रहा है। उसका तर्क है कि स्वतंत्र बाजार का जन्म संस्थागत परिवर्तनों से संभव हुआ तथा सरकार ने इन्हें विशेष रूप से बढ़ावा दिया है। आर्थिक समाजशास्त्र के क्षेत्र में इसे सामान्यतः स्वीकार कर लिया गया है।

5.3.3 नए आर्थिक समाजशास्त्र का उदगम

कन्वर्ट, बी तथा हेलब्रोन, जेने अपने लेख व्हेयर डिड न्यू इकनोमिक सोशलॉजी कम फ्रॉम में नए आर्थिक समाजशास्त्र का विस्तृत वर्णन किया है। वे तर्क देते हैं कि नए समाजशास्त्र ने अपनी वैज्ञानिक प्रमाणिकता अपने अंदर दो नयी सशक्त धाराओं को एक साथ उतारते हुए स्थापित की है - नेटवर्क विश्लेषण तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर अवस्थित आधुनिक संस्था पर कता। इस से नया आर्थिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र का सबसे जीवंत अंग बन गया है।

आर्थिक समाजशास्त्र

ब्रिटानिका एनसाइक्लोपीडिया के अनुसार आर्थिक समाजशास्त्र उत्पादन, वितरण, विनिमय तथा वस्तुओं एवं सेवाओं के उपभोग के बीच संबंधों को समझने के लिए सामाजिक क्रियाओं का उपयोग करता है। आर्थिक समाजशास्त्र आर्थिक क्रियाओं व सामाजिक तथा संस्थागत परिवर्तनों के प्रति विशेष रूप से सतर्क है।

5.4 समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र की सामान्य समस्याएं

5.4.1 बेरोज़गारी

जब हम बेरोज़गारी के बारे में बात करते हैं तो प्रायः यही समझते हैं कि यह एक आर्थिक समस्या है। परंतु यदि हम बेरोज़गारी के असली कारणों को तलाशने का प्रयास करें तो इसका सही उत्तर समाजशास्त्र दे सकता है। समाज शास्त्रियों की दृष्टि में बेरोज़गारी एक सामाजिक समस्या है। उनका तर्क है कि बेरोज़गारी के पीछे वास्तव में सामाजिक कारण होते हैं। समाज का पिछड़ापन, बढ़ती जनसंख्या, शिक्षा प्रणाली की खामियां तथा लोगों में मौजूद जड़ता व आलस्य की प्रवृत्ति आदि बेरोजगारी के प्रमुख कारण हैं। कुछ समाजशास्त्री बीमारी, विकलांगता, अयोग्यता, अनुभव हीनता तथा व्यावसायिक निपुणता के अभाव आदि व्यक्तिगत कारणों को भी बेरोजगारी के लिए जिम्मेदार मानते हैं।

जबकि अर्थशास्त्रियों के लिए बेरोजगारी एक आर्थिक समस्या है। अर्थव्यवस्था का वैश्वीकरण, पूंजीवादी समाजों का औद्योगिक समाजों में बदल जाना आदि बेरोजगारी की समस्या के लिए विशेष रूप से जिम्मेदार हैं। अर्थशास्त्रियों का तर्क है कि बेरोजगारी मजदूरों की मांग पर निर्भर करती है। जब मजदूरों की संख्या की तुलना में रोजगार के अवसर कम पड़ जाते

हैं तो बेरोजगारी का जन्म होता है। बढ़ी हुई जनसंख्या भारत में बेरोजगारी का प्रमुख कारण है। क्योंकि यहां काम की तलाश में घूमने वाले लोगों की संख्या जिस तेजी से बढ़ी है उस अनुपात में रोजगार उत्पन्न नहीं किए जा सके हैं। परिणामतः बड़ी संख्या में यहां ऐसे लोग मौजूद हैं जिन्हें काम नहीं मिल पाता और वे निराशा व हताशा का जीवन जीने के लिए विवश हैं। इससे देश में मानव संसाधन तथा मानव हितों की रक्षा में गिरावट आ रही है।

5.4.2 बाल मजदूरी

भारत जैसे अनेक विकासशील देशों में बाल मजदूरी का चलन आम हो गया है। हजारों की संख्या में किशोर अवस्था में पहुंच रहे बच्चे काम पर लगा दिए जाते हैं। इससे उनसे उनका बचपन छिन जाता है। वे पढ़ लिख नहीं पाते। विषम परिस्थितियों में काम करने के कारण उनका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, उनके मौलिक अधिकारों का हनन होता है। बाल मजदूरी का कारण केवल यह नहीं है कि बच्चे स्कूल नहीं जाना चाहते और काम पर चले जाते हैं। सच तो यह है कि उनके अभिभावक तथा उनका पालन पोषण करने वाले लोग ही यह फैसला ले लेते हैं कि वे स्कूल न जा कर काम पर जाएं और बाल मजदूर बन कर रह जाए। बच्चों को उनके काम के बदले पर्याप्त पगार भी नहीं दी जाती। ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक परिवारों में बच्चे खेती के कामों में लगा दिए जाते हैं, कुछ छोटी मोटी दुकानों पर या उद्यम केंद्रों में काम पर लग जाते हैं। नगरों में लड़कियों को वयस्क होने से पहले ही घरेलू नौकरानियां बना दिया जाता है। वे बर्तन धोने, घर साफ करने, बच्चों की देखभाल करने या फिर खाना बनाने के कामों में लग जाती हैं। आर्थिक संसाधनों की कमी, गरीबी और पिछड़ापन आदि अनेक कारण बच्चों को बाल मजदूर बनने पर विवश कर रहे हैं।

5.4.3 असमानता

असमानता का प्रश्न अर्थशास्त्र के सामने भी मुंहबाये खड़ा है और समाजशास्त्र के सामने भी। अर्थशास्त्रियों के लिए यह आर्थिक असमानता तथा समाजशास्त्रियों के लिए सामाजिक असामनता है। अर्थशास्त्रियों का काम है आर्थिक असमानता से निपटना तथा समाज शास्त्रियों का काम है कि वे सामाजिक असमानता का पता लगाएं और उसके कारणों को तलाशते हुए उसका समाधान तलाशे। आर्थिक व सामाजिक असमानताओं पर निम्न अवतरणों में विचार किया जा रहा है-

5.4.3.1 आर्थिक असमानता

समाज में आर्थिक असमानता के अनेक कारण है। आर्थिक संसाधनों के वितरण में, आमदनी के साधनों में, वेतन आदि अनेक आय स्रोतों में असमानता आर्थिक असमानता कहलाती है। आर्थिक असमानता तीन प्रकार की होती है- असमान आय, असमान वेतन तथा असमान वित्तीय संसाधन। लोगों के बीच आय के वितरण की असमानता आय आधारित असमानता को जन्म देती है। आय के अंतर्गत कार्य अथवा उद्यम के बदले होने वाली आमदनी में पगार, वेतन, बोनस आदि सब आते हैं।

वेतन असमानता दूसरे प्रकार की आर्थिक असमानता है। वेतनमानों में विभिन्नता कार्य स्थलों की विभिन्नता के कारण होती है जो अंततः वेतन आधारित आर्थिक असमानता को जन्म देती है। तीसरे प्रकार की आर्थिक असमानता वित्तीय संसाधनों के असमान वितरण के कारण उत्पन्न होती है। किसी व्यक्ति को प्राप्त समस्त वित्तीय संसाधनों से होने वाली आय इस श्रेणी में आती है। इसमें चल व अचल संपत्ति, स्टॉक, पेंशन आदि सब शामिल है।

5.4.3.2 सामाजिक असमानता

जब सामाजिक संसाधनों का वितरण असमान होता है तब सामाजिक असमानता का जन्म होता है। जाति, वर्ग, लिंग आदि के आधार पर सामाजिक संसाधनों के वितरण से सामाजिक असमानता उत्पन्न होती है। सामाजिक स्तर के आधार पर मिलने वाले धन कमाने के अवसर व पुरस्कार पाने के अवसर सामाजिक असमानता पैदा करते हैं। अपनी चर्चित पुस्तक सोशियोलॉजी थीम्स एंड पर्सपेक्टिव्स में एम. हरलाम बोसने सामाजिक अथवा प्राकृतिक असमानता का वर्णन किया है। अंग्रेजों का काले लोगों के साथ रंगभेद का बर्ताव और उन पर आधिपत्य जमा कर उनके शोषण से अधिक आय पैदा करना सामाजिक असमानता का उदाहरण है।

बोध प्रश्न

1) आर्थिक समाजशास्त्र को समाजशास्त्र की उपशाखा क्यों कहा जाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) अर्थशास्त्र तथा समाजशास्त्र की सामान्य समस्याएं क्या है उनकी व्याख्या कीजिए। समुचित उदाहरण से अपने उत्तर की पुष्टि कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

5.5 सारांश

इस इकाई में हमने समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र के बीच संबंधों का अध्ययन किया और जाना कि किस प्रकार समाज आर्थिक मानकों से प्रभावित होता है तथा सामाजिक स्थितियां कैसे आर्थिक नीतियों व योजनाओं के निर्माण का आधार बनती हैं। समाज में व्याप्त घृणा व लड़ाई झगड़ों की जड़ें पारिवारिक संपत्ति के बंटवारे को लेकर माता पिता व उनकी सन्तानों के बीच की कलह में विद्यमान रहती हैं।

आर्थिक जगत की अधिकतर गतिविधियां सामाजिक आवश्यकताओं व स्तरों अदि पर होने वाले व्यय तथा सामाजिक स्तरों को ऊँचा उठाने के अन्यान्य प्रयास आदि से प्रभावित होती है। धनवान दूसरों की दृष्टि में अपने आप को उच्च दिखने के लिए कीमती चीज़ो की खरीदारी करते है तथा विलासिता का जीवन जीते है। किसी व्यक्ति का सामाजिक जीवन

जैसे उसका परिवार, उसकी शिक्षा, उसका पद, विवाह, रहन सहन का स्तर यह तय करता है कि वह परिवार पर कितना खर्च करें, विवाह आदि उत्सव के अवसरों पर कितना खर्च करें। इस प्रकार आर्थिक मानक व्यक्ति की जीवन शैली तथा आवश्यकताओं को प्रभावित करते हैं। समाज की आर्थिक आवश्यकताएं प्रायः सामाजिक संस्थानों द्वारा पूरी की जाती हैं। इससे स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र व समाजशास्त्र दोनों एक दूसरे से कुछ इस तरह जुड़े हैं कि यदि किसी एक का अध्ययन करना हो तो दूसरे को भी साथ लेकर चलना पड़ेगा।

5.6 सन्दर्भ

अहूजा, राम. 1992 सोशल प्रॉब्लम्स इन इंडिया, रावत पब्लिकेशंस।

अप्पादुरई, ए. 1986 द सोशल लाइफ ऑफ थिंग्स कमोडिटीज इन कल्चरल पर्सपेक्टिव,कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस भवन।

बोर्दियू, पिएर्रे .1984 डिस्टिंक्शन सोशल क्रिटिक ऑफ द जजमेंट ऑफ टेस्टहार्वर्डः यूनिवर्सिटी प्रेस हार्वर्ड।

गिलबर्ट, पास्कल. 1973 फंडामेंटल्स ऑफ सोशियोलॉजी, ओरियंट लोंगमैन प्राइवेट लिमिटेड।

हरलामबोस, एम. 2005 सोशियोलॉजी थीम्स एंड पर्सपेक्टिव्स, नई दिल्ली, ओयू पी।

इन्कलेस, अलेक्स.1979 व्हाट इस सोशियोलॉजी?ः इन इंट्रोडक्शन टू डिसीप्लिन एंड प्रोफेशन, प्रेन्टिस हॉल।

ओंकार नाथ, जी. 2012 इकोनॉमिक्स, प्राइमर फॉर इंडिया, ओरियंट ब्लैकस्वान।

स्मेल्सर, ए मार्टिनेली. इकोनामी एंड सोसाइटीज, ओवरव्यू इन इकोनामिक सोशियोलॉजी, लंदनः सेज।

स्वेडबर्ग, नील जे एंड रिचर्ड. 2005 द हैंडबुक ऑफ इकोनॉमिक्स सोशियोलॉजी प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयॉर्क।

इकाई 6 समाजशास्त्र का राजनीति विज्ञान के साथ संबंध*

संरचना

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 राजनीति विज्ञान के साथ समाजशास्त्र का संबंध

6.2.1 राजनीति विज्ञान की परिभाषा

6.2.2 राजनीति विज्ञान की प्रकृति में बदलाव

6.2.3 समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच संबंध

6.3 समाजशास्त्र के उप-विषय के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र

6.3.1 राजनीति समाजशास्त्र और राजनीतिशास्त्र के समाजशास्त्र के बीच अंतर

6.3.2 राजनीतिक समाजशास्त्र में इस्तेमाल की जाने वाली अवधारणाएं

6.3.2.1 राजनीतिक संस्कृति

6.3.2.2 राजनीतिक समाजीकरण

6.3.2.3 राजनीतिक पूंजी

6.4 सारांश

6.5 संदर्भ

6.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप, निम्न बातों को समझने के लिए सक्षम हो पाएंगे :

- राजनीति विज्ञान की परिभाषा और समाजशास्त्र के साथ इसके संबंध;
- समाजशास्त्र के विकसित होते हुए उप-विषय के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र को समझना; तथा
- राजनीतिक समाजशास्त्र के क्षेत्र में इस्तेमाल की जाने वाली अवधारणाएं।

6.1 प्रस्तावना

इस इकाई में राजनीति विज्ञान के साथ समाजशास्त्र के संबंध की व्याख्या की गई है। समाजशास्त्र, जिसके अंतर्गत समाज और सामाजिक जीवन का अध्ययन किया जाता है उसमें मानव जीवन के विभिन्न राजनीतिक पहलुओं को भी रेखांकित किया जाता है। ये दोनों विषय एक-दूसरे से अलग अलग रूपों में रोजमर्रा की जिंदगी के विभिन्न मुद्दों और बातों एवं नीतिगत मामलों से जुड़े हुए सवालों का उपयोगी उत्तर प्रदान करने का प्रयास करते हैं अथवा उन मुद्दों के बारे में उपयोगी उत्तर प्रदान करने का प्रयास करते हैं जिनके बारे में हम यह सोचते हैं वे समाज और उसके कार्यों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। उदाहरण के लिए शासन, नागरिक समाज, सामाजिक वर्ग एवं सामाजिक पूंजी, मतदान व्यवहार, विभिन्न समूहों के बीच सत्ता का संबंध, सहभागिता लोकतंत्र, स्वैच्छिक संगठन, सरकारी नीतियां और समाज पर उनका प्रभाव इत्यादि महत्वपूर्ण मुद्दे हैं। वास्तविकता यह है कि बहुत से महत्वपूर्ण मुद्दे होते हैं जो समाजशास्त्र और राजनीतिक विज्ञान दोनों की सीमाओं को पाटकर उन्हें नजदीक लाते हैं। इस प्रतिच्छेदन के फलस्वरूप, बहुत सारे उप-विषय

*डॉ. शाहिद, मानू, हैदराबाद

मानव जीवन के सामाजिक-राजनीतिक पहलुओं को एक अंतःविषयक संरचना के रूप मे अध्ययन करने के लिए उभर कर सामने आए हैं जैसे कि राजनीतिक समाजशास्त्र, राजनीतिक मानव विज्ञान एवं राजनीतिक अर्थव्यवस्था ।

अनिवार्य रूप से समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान दोनों ही मानव के सामाजिक जीवन से जुड़े हुए हैं और व्यापक रूप से अपनी कॉमन रुचि साझा करते हैं। हालांकि, हम इस तथ्य को भी मान सकते हैं कि दोनों विषयों के दृष्टिकोण एक दूसरे से भिन्न-भिन्न होते हैं तथा सामाजिक जीवन और उसकी गतिशीलता के बारे में अलग-अलग विचार प्रस्तुत करते हैं। इसलिए समाजशास्त्र और राजनीतिक विज्ञान के बीच संबंधों को देखना महत्वपूर्ण है जिससे इस बात को स्पष्ट किया जा सके कि दोनों विषय सामाजिक समस्याओं को किस प्रकार निपटते हैं और दोनों विषयों कि अभिरुचि कहाँ पर के दूसरे से मिलती है तथा उनमें कहाँ अंतर है ।

6.2 राजनीति विज्ञान के साथ समाजशास्त्र का संबंध

6.2.1 राजनीति विज्ञान की परिभाषा

समान्यतः राजनीति विज्ञान को राज्य, सरकार और राजनीति के वैज्ञानिक अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जाता है। समान्यतः यहां सबसे अधिक इस्तेमाल की जाने वाली अवधारणाएं हैं - राजनीति, राज्य, सत्ता, राजनीतिक सामाजिककरण, नेतृत्व, शासन, निर्णय लेना, नीति बनाना और इसके प्रभाव। राजनीति राजनीतिक विज्ञान की मुख्य अवधारणा है। वास्तविकता यह है कि कई बार दोनों का उपयोग एक दूसरे के लिए किया जाता है। समान्यतः राजनीति को एक प्रक्रिया के तौर पर भी परिभाषित किया जाता है जिसके द्वारा लोग खुद को नियंत्रित करने वाले सामान्य नियमों को बनाते हैं, उनका संरक्षण करते हैं और उनमें संशोधन करते हैं। समान्यतः इस तरह की प्रक्रिया में सहयोग और संघर्ष दोनों ही सम्मिलित होते हैं। इस तरह शासन करने कला के रूप में राजनीति विभिन्न मामलों में सार्वजनिक संबंध, संघर्ष, कई प्रकार के निर्णय लेने, समझौता करने और सर्वसम्मति के मुद्दों से संबन्धित है, और इस तरह राजनीति सत्ता एवं संसाधनों के वितरण से संबंधित बातों का अनिवार्य रूप से वर्णन करती है। आइए राजनीति नामक शब्द से जुड़े कुछ अर्थों का अवलोकन करें।

सर्व प्रथम राजनीति को आम तौर पर सरकार के एक कला के रूप में माना जाता है। फिर भी यह तर्क देते हैं कि राजनीति विज्ञान है या नहीं, जैसा कि हम आम तौर पर समाजशास्त्र के वैज्ञानिक स्तर पर वाद-विवाद करते हैं यदि वास्तव में विभिन्न विद्वान नोट करते हैं कि राजनीति शब्द 'पोलिस' से लिया गया है जिस का अर्थ है '' शहर 'जिसका शाब्दिक अर्थ है' नगर राज्य '। प्राचीन काल में, यूनानी समाज को स्वतंत्र नगर राज्यों में विभाजित किया गया, जिनमें से प्रत्येक का अपना शासन शासन था। इस संदर्भ में, राजनीति या राजनीति विज्ञान को आम तौर पर 'पोलिस'- के मामलों में जाना जाता है यानी राज्य और उसके मामलों से संबंधित शैक्षिक विषय के रूप में राजनीतिक विज्ञान को राजनीति या राजनीतिक विज्ञान की इस परिभाषा को अपनाया गया है।

दूसरी बात यह है कि राजनीतिक और इसकी प्रकृति को परिभाषित करने वाला सबसे जरूरी पहलू वह है जिसे हम आम तौर पर सार्वजनिक संबंधों या जनता से जोड़ते हैं। वास्तव में, राजनीतिक विज्ञान का दायरा और परिभाषा राजनीतिक विज्ञान की संकुचित परिभाषा से परे है जिसे सिर्फ सरकार या राज्य के अध्ययन के रूप में माना जाता है। इसके अतिरिक्त , उपरोक्त वर्णित शब्द को 'निजी' शब्द से चुना जा सकता है। ये अंतर आम तौर

पर मानव जीवन के दो अलग-अलग विचारों पर आधारित होते हैं। वही वर्गीकरण आगे राज्य और नागरिक समाज के बीच दो वैचारिक श्रेणियों के बीच अंतर के अनुरूप है। उदाहरण स्वरूप राज्य के विभिन्न संस्थान जैसे कि नौकरशाही मशीनरी, मंत्रालय, अदालत और ट्रिब्यूनल, पुलिस, सेना, सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था इत्यादि को इस अर्थ में सार्वजनिक माना जा सकता है कि ये बड़े पैमाने पर समाज के लिए जिम्मेदार होते हैं और वह भी राज्य में अपने संगठन, प्रबंधन, और सामाजिक जीवन के सुचारू कामकाज के लिए। इसके अतिरिक्त, उन्हें मुख्य रूप से करदाताओं के पैसे से सार्वजनिक खर्चों पर वित्त पोषित किया जाता है । इसके विपरीत, नागरिक समाज में विभिन्न सामाजिक संस्थान शामिल हैं जैसे कि परिवार, संबंध समूह, ट्रेड यूनियन, क्लब, सामुदायिक समूह, निजी व्यवसाय आदि। वे इस अर्थ में निजी हैं कि उन्हें कई बार नागरिक समाज की बजाय अपनी खुद की जरूरतों और रुचि को पूरा करने के लिए व्यक्तिगत नागरिकों द्वारा वित्त पोषित और स्थापित किया जाता है। इस तरह, उनका स्वरूप निजी या व्यक्तिगत केंद्रित होती है।

तीसरी बात यह है कि राजनीति को आम तौर पर समझौता करने, निर्णय लेने और सर्वसम्मति के महत्वपूर्ण मुद्दों से निपटने में उसकी विशिष्ट स्वरूप के संदर्भ में परिभाषित किया जाता है। मतभिन्नता को हल करने के उद्देश्य से राजनीति आम तौर पर सामाजिक ढ़ांचा से संबंधित होती है जिसमें सत्ता और निरा शक्ति के बजाय समझौता, सुलह और बातचीत के माध्यम से मतभेद को हल किया जाता है। मुख्य रूप से यह इस संदर्भ में है कि विभिन्न विद्वान आम तौर पर राजनीति और इसकी संबंधित प्रक्रियाओं को 'संभवतः कला' के रूप में परिभाषित करते हैं जो मुख्य रूप से राजनीति में संवाद, बहस और मध्यस्थता के माध्यम से संघर्ष को सुलझाने हेतु सैन्य समाधान के विपरीत वैकल्पिक साधनों के रूप में शांतिपूर्ण समाधान है। इस तरह राजनीति सत्ता और संसाधनों के प्रसार के रूप में परिभाषित किया जाने योग्य है क्योंकि समाज को अपने समुदाय के जीवन को सुचारू रूप से और शांतिपूर्वक चलाने की आवश्यकता होती है।

अंततः राजनीति आम तौर पर शक्ति और प्रभाव के प्रयोग से जुड़ी होती है। इस तरह राजनीति को विद्वान द्वारा सभी सामाजिक समूहों एवं संस्थानों में औपचारिक और अनौपचारिक, सार्वजनिक तथा निजी दोनों से जुड़े सभी सामूहिक सामाजिक गतिविधियों के केन्द्र के रूप में परिभाषित किया जाता है । इस संदर्भ में, समाज में सामाजिक संपर्क के प्रत्येक स्तर पर राजनीति होती है। क्षेत्रीय और वैश्विक स्तर पर परिवारों, सहकर्मियों और संबंध समूहों, संगठनों और राष्ट्र-राज्यों में राजनीति पाई जा सकती है। व्यापक अर्थ में राजनीति अनिवार्य रूप से ताकत से जुड़ी हुई है जो दूसरों को प्रभावित करने की क्षमता है और जो कुछ भी संभव हो, राजनीति वांछित परिणाम प्राप्त करने की क्षमता भी है। प्रतिस्पर्धी मांगों और सीमित संसाधनों को ध्यान में रखते हुए मनुष्य आम तौर पर प्रतिस्पर्धा के दावे और प्रतिदावे करते हैं। अतः राजनीति को आम तौर पर सीमित संसाधनों पर मतभेद के रूप में देखा जाता है। साथ ही शक्ति को ऐसे साधनों के रूप में देखा जा सकता है जिसके द्वारा इस प्रकार के संसाधनों हेतु संघर्ष होते हैं। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि राजनीति विज्ञान मुख्य रूप से एक बौद्धिक विषय है जो कि राजनीति, सत्ता, शासन और राज्य कि संरचना और कार्य के बारे में ज्ञान की एक संस्था है। समाजशास्त्र की तरह, इसका विशिष्ट कार्य राजनीति के बारे में शिक्षार्थियों को व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान करने के स्थान पर राजनीति के बारे में जानकारी प्रदान करना है। हालांकि समय के साथ साथ राजनीतिक विज्ञान के स्वरूप और दायरे में बदलाव आया है जिसका मुख्य कारण अन्य विषयों की अवधारणाओं, शर्तों और विधियों को अपनाना है और वह भी समाजशास्त्र से बहुत कुछ ग्रहण करने के कारण तथा इस तरह यह अंतःविषय दृष्टिकोण के साथ एक बौद्धिक विषय बन गया है । समाजशास्त्र और राजनीतिक विज्ञान के अंतर-संबंधों की जांच करने से पूर्व इस तरह के बदलाव को समझना और इसकी प्रशंसा करना महत्वपूर्ण है ।

6.2.2 राजनीति विज्ञान के केन्द्र बिन्दु में बदलाव

राजनीतिक विज्ञान के स्वरूप में एक शैक्षणिक विषय के रूप से समय के साथ कई परिवर्तन एवं बदलाव आये हैं। इसलिए अतीत में राजनीति से राजनीतिक व्यवस्था में बदलाव शासन करने के लिए सरकार एवं सामाजिक निर्धारकों के राजनीतिक कारण से हुए हैं। राजनीतिक विज्ञान में यह बदलाव समाज के अलग-थलग पड़ने से नहीं हुआ है। समसामयिक भूमंडलीकृत और अंतः संबन्धित संसार में बदलाव अनिवार्य रूप से बदलते दायरे और विषय की प्रकृति में प्रतिबिम्बित होते हैं। राजनीति विज्ञान ने अपना ध्यान न सिर्फ केंद्रित किया है अपितु अभिविन्यास और दृष्टिकोण में विशिष्ट सामाजिक विज्ञान बौद्धिक विषय के अधिक होने की दिशा में इसने अपनी अवधारणाओं और दृष्टिकोणों में संशोधन किया है। यद्यपि इसकी ऐतिहासिक जड़ें गहरी हो सकती हैं, शीत युद्ध की अवधि राजनीतिक वैज्ञानिकों को लोकतांत्रिक पूंजीवाद और सत्तावादी समाजवाद, राष्ट्रीय सदस्यता, वर्ग, स्थिति और अधिपत्य पर केंद्रित राजनीतिक पहचान जैसे मुद्दों पर विचार करने के लिए प्रेरित किया है जिसे बाद में विश्व भर में राजनीतिक विज्ञान विभाग में शिक्षण और अनुसंधान के मुद्दों के रूप में विकसित किया गया।

इसके अतिरिक्त, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि वास्तव में शीत युद्ध के वर्षों में राजनीतिक दुनिया को देखने के दृष्टिकोण में तेजी से बदलाव आया। वास्तव में, राजनीति विज्ञान में बड़े बदलाव द्वितीय विश्व युद्ध के बाद आचरणवाद के आगमन के साथ हुये। तब से राजनीति विज्ञान ने राजनीतिक प्रक्रिया और व्यवहार का अध्ययन शुरू किया (स्मिथ 2004)। राजनीति विज्ञान का उद्देश्य अधिकांश राजनीतिक व्यवस्था में राजनीति, राजनीतिक नेतृत्व, निर्णय लेने और व्यक्तियों के व्यवहार पद्धति और समूहों की प्रकृति का परीक्षण करके राजनीतिक घटनाओं का अध्ययन और विश्लेषण करना बन गया। इसके अतिरिक्त, 1990 के दशक से द्वितीय विश्व युद्ध तक का समय पश्चिमी यूरोपीय शक्तियों का प्रभुत्व के लुप्त होने का था तथा अफ्रीका और एशिया के महाद्वीपों में नए देशों के उदय का था। साम्राज्य का यह ध्वंस अंततः सोवियत संघ और उस समय के अन्य कई कम्यूनिस्ट ताकतों के पाटन से मेल खाता है।

इसके उपरांत शीत युद्ध की अवधि में पुराने यूरोपीय बाजार, उत्तरी अमेरिकी मुक्त व्यापार समझौते, विश्व व्यापार संगठन, और यूरोपीय संघ, गैर-निरपेक्ष आंदोलन, अफ्रीकी संघ जैसे क्षेत्रीय राजनीतिक निकायों के विकास जैसे अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक संस्थाओं का प्रसार हुआ। दक्षिणपूर्व एशियाई राष्ट्रों (एशियान देशों) का संघ जैसे कि पर्यावरण, श्रम और मानवाधिकार समूहों जैसे आंदोलन संगठनों के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय/बहुराष्ट्रीय निगमों के विकास भी हो सकते हैं। राजनीतिक समुदाय, राजनीतिक पहचान और इस तरह के अधिकार, पहचान, धर्म, और राजनीति विकास के रूप में विभिन्न समाज विज्ञान की दृष्टि से महत्वपूर्ण मुद्दों पर महत्वपूर्ण चिंताओं में से वाद-विवाद नए रूपों में उत्पन्न हुए। इसके अलावा, 1990 के दशक में और बाद में हम पहचान की राजनीति या पहचान की राजनीति के विकास में गति को महसूस कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, नस्लीय और जातीय मुद्दों लैंगिक न्याय, सांप्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता, आप्रवासी राजनीति, पारिस्थितिकी और विकास, स्वदेशी लोगों की राजनीति, राजनीति और लेस्बियन, समलैंगिक के मुद्दों, उभयलिंगी, विपरीतलिंगी (एलजीबीटी), एक प्रमुख प्रवचन के रूप में वैश्वीकरण के साथ चारों ओर राजनीति; महानगरीय नागरिकता, अंतरराष्ट्रीय सामाजिक आंदोलन हुआ जो राजनीति विज्ञान विषय से पहले अनुपस्थित थे वे सब जबरदस्ती उभकर सामने आए (स्मिथ 2004)। परिणामस्वरूप, इस विषय के कार्यक्षेत्र और प्रकृति में इस समयावधि में विस्तार किया गया अपितु इसमें अंतःविषय मुद्दों, वाद-विवाद को अधिक शामिल करके एक नया और आधुनिक रूप में एक

पारंपरिक आधार से बदल गया है और इस प्रकार इस विषय ने अपनी वैचारिक श्रेणियों को परिष्कृत किया। इस संदर्भ में जैसा की पहले उल्लेख किया गया है कि राजनीति विज्ञान ने मोड़ ले लिया है और इस तरह के नृजातियता, पहचान, धर्म, आदि के रूप में समाज विज्ञान की दृष्टि से और अधिक प्रासंगिक मुद्दों को शामिल किया। वैश्वीकरण, अंतर्राष्ट्रीयकरण, धर्मनिरपेक्षता, सांप्रदायिकता, पहचान की राजनीति और न्यू मीडिया के मुद्दों और विकास से संबन्धित कई अन्य समसामयिक मुद्दों पर बहस ने राजनीतिक विज्ञान को अधिक परिपक्व बना दिया है और उसे सामाजिक विज्ञान विषय के रूप में संशोधित किया है।

6.2.3 राजनीति विज्ञान के साथ समाजशास्त्र का संबंध

समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान बारीकी से कई मामलों में एक दूसरे से संबंधित हैं। यह कहा जाता है कि समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के विषयों को सत्ता, अधिकार संरचनाओं, प्रशासन और शासन के अपने विश्लेषण में बारीकी से बुने हैं (लिपसेट 1964)। समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच कई समानताएं हैं। सबसे पहले, राजनीति विज्ञान अपने बुनियादी सिद्धांतों और तरीकों के लिए समाजशास्त्र पर अधिक निर्भर है। उदाहरण के लिए 20वीं शताब्दी के मध्य में मिशिगन सामाजिक मनोवैज्ञानिक और हरवर्ड में पार्सोनियन ने क्रमशः राजनीतिक व्यवहार और राजनीतिक विकास में राजनीतिक विज्ञान मुद्दों को नया स्वरूप प्रदान किया। दूसरी बात यह है कि दोनों केन्द्रित विशिष्टताओं को अर्थशास्त्र, इतिहास, मानव विज्ञान और मनोविज्ञान जैसे समान तृतीय पक्ष वाले विषयों से ग्रहण किया गया। तीसरी बात यह है कि मार्क्स, वेबर, ग्रामस्की, पैरेतो , पार्सन्स और मोस्का इत्यादि जैसे अनेक विद्वानों ने समान रूप से दोनों विषयों के विकास और उन्नयन में योगदान दिया है।

इसी प्रकार हारोल लेसवेल के ग्रंथ, 'पॉलिटिक्स : हू गेट्स वॉट, वेन एंड हाउ ' (1936) एक महत्वपूर्ण कार्य था जिससे समाजशास्त्री और राजनीतिक वैज्ञानिक दोनों ही प्रेरित होते हैं और एक अंतःविषय संरचना (लिपसेट 1964) में कार्य करने का नेतृत्व करते हैं। इस बात पर ध्यान दिया जा सकता है कि समसामयिक विश्व में बदलती सामाजिक जरूरतों और आकांक्षाओं को सामाजिक समस्याओं को समझने और आधुनिक समाज की समस्याओं के उत्तर खोजने हेतु अंतःविषय दृष्टिकोण जरूरी है।

समाजशास्त्र को अक्सर समाज के वैज्ञानिक अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जाता है। हम यह भी नोट कर सकते हैं कि समाज कुछ भी नहीं है, बल्कि विभिन्न समूहों, संस्थानों, समुदायों, संघों, लोगों और उनकी रोजमर्रा की जीवन की गतिविधियों का एक जटिल नेटवर्क है। राजनीति और शक्ति गति की मानव जीवन की इन सभी अवधारणाओं के अभिन्न अंग हैं। विशेष रूप से, राजनीति या राजनीतिक रूप हमेशा किसी भी मानव समाज के आवश्यक घटक रहे हैं। आधुनिक समय में, किसी भी समाज की राजनीति, राजनीतिक संस्थाओं या राजनीतिक जीवन के किसी भी रूप के बिना कल्पना नहीं की जा सकती है। राज्य और शासन अपने कार्य, विकास और सामाजिक जीवन की आवश्यक आवश्यकताओं जैसे कानून और व्यवस्था, सुरक्षा और विकास दोनों के संदर्भ में किसी भी समाज के लिए बुनियादी हैं। सामाजिक विज्ञान भी सामाजिक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करने के साथ सामाजिक दुनिया की स्थिति पर अनिवार्य रूप से प्रतिबिंबित करता है और मानव समाज की स्थिति पर, तेजी से वैश्विक रूप से जुड़े दुनिया में सामाजिक रिश्तों का नेटवर्क, राजनीतिक परंपराओं, जाति और राजनीति, जातीयता, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की बढ़ती विविधता, आर्थिक स्थिति और भाषाई संबद्धता। समाजशास्त्र उनके सामाजिक निहितार्थों पर विशेष ध्यान देने के साथ राजनीतिक व्यवहार के विभिन्न पहलुओं की जांच करता है।

यह वास्तव में समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच गहरे संबंध को इंगित करता है। हालाँकि दोनों विधाएँ उनके दृष्टिकोण में भिन्न हैं। राजनीतिक वैज्ञानिक सरकारों और उनके नेताओं के उदय, पतन और परिवर्तनों की जांच करते हैं जबकि समाजशास्त्री सरकारों को सामाजिक संस्थाओं, राजनीतिक व्यवहार को सामाजिक गतिशीलता और नेतृत्व के रूप में देखते हैं क्योंकि सामाजिक घटनाएं सामाजिक विकास के लिए विविध निहितार्थ हैं।

समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान दोनों ही कई बिंदुओं पर चलते हैं और सामाजिक यथार्थ का व्यापक विश्लेषण करते हैं। इस प्रकार, दोनों के बीच समानता, विद्वानों द्वारा अच्छी तरह से सराहना की जाती है। हालाँकि, दोनों ही विषयों में बहुत अंतर है जिसका गंभीर रूप से आकलन करने की भी आवश्यकता है। समाजशास्त्री सबसे महत्वपूर्ण रूप से बातचीत प्रणाली की बात करते हैं, यह समूहों, संस्थानों या संगठनों के भीतर हो, जबकि राजनीतिक विज्ञान ऐसे समूहों या संगठनों के भीतर नियंत्रण तंत्र के बारे में बात करता है। इसलिए, समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के संदर्भ या दृष्टिकोण का ढ़ांचा अलग-अलग हैं। पूर्व मुख्य रूप से अंतःक्रियात्मक विचारों के बारे में चिंतित है, जबकि बाद में शक्ति संरचना, आदेश और नियंत्रण तंत्र पर केंद्रित है। विद्वानों का तर्क था कि जब बातचीत प्रणाली के समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य को राजनीतिक घटनाओं के विश्लेषण के लिए लागू किया जाता है तो यह राजनीतिक समाजशास्त्र बन जाता है।

जैन और दोशी (1974) के अनुसार, जब राजनीति विज्ञान की शब्दावली को समाजशास्त्रीय विश्लेषण की शब्दावली में अनुवादित किया जाता है, तो इसे हम राजनीतिक समाजशास्त्र कहते हैं। यह इस अर्थ में है कि हम कह सकते हैं कि अलमंड कोलमैन के द पॉलिटिक्स ऑफ डेवलपिंग एरियाज़ (1960) और रजनी कोठारी के पॉलिटिक्स इन इंडिया (1970) पहले के राजनीतिक समाजशास्त्र के बढ़ते उदाहरण हैं। इसके परिणामस्वरूप, राजनीतिक समाजशास्त्र, जो मूल रूप से समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच अंतर का एक परिणाम है, समाजशास्त्र की अपेक्षाकृत एक नई शाखा है, जो समाज में विभिन्न राजनीतिक अंतर्ज्ञान, संघों, संगठनों, रुचि समूहों और शक्ति की गतिशीलता का अध्ययन करती है। राजनीतिक समाजशास्त्र, जिसे हम इस इकाई में बाद के खंड में विस्तृत करेंगे, अध्ययन के अपने क्षेत्रों के रूप में रुचि समूहों, राजनीतिक दलों, प्रशासनिक और नौकरशाही व्यवहार, सामाजिक विधानों, राज्य नीतियों, सुधारों और राजनीतिक विचारधाराओं का भी अध्ययन करते हैं।

बोध प्रश्न 1

1) पिछले कुछ दशकों में राजनीति विज्ञान में बदलाव की चर्चा।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच संबंधों पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) निम्नलिखित में से कौन सा मुद्दा समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान दोनों द्वारा सम्मिलित किया गया है :

क) धर्म

ख) जातीयता

ग) भाषा की बहस

क) उपरोक्त सभी

6.3 समाजशास्त्र के उप-क्षेत्र के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र

राजनीतिक समाजशास्त्र अक्सर समाजशास्त्र के विषय के भीतर एक नए, बढ़ते और बोझिल उप-क्षेत्र के रूप में देखता है। इसे समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच एक संपर्क सेतु माना जाता है। समाजशास्त्री दोनों के बीच दो तरह के रिश्ते देखते हैं (राठौर 1986)। दोनों में एक लेने देने का रिश्ता है। विभिन्न दूसरे विद्वान राजनीतिक समाजशास्त्र को समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच एक विवाह के रूप में देखते हैं जो अध्ययन करता है और गंभीर रूप से महत्वपूर्ण और नए क्षेत्रों का उल्लेख करता है जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है और जो समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान दोनों को छूता है, लेकिन दोनों में से एक द्वारा पर्याप्त रूप से अध्ययन नहीं किया जा सकता है।

इसके अलावा, राजनीतिक घटनाओं के विश्लेषण के समाजशास्त्रीय उपकरणों के आवेदन ने हमारे राजनीतिक व्यवहार की समझ को जोड़ा है (शर्मा 1978)। दोनों विधाओं के इस क्रॉस-बॉर्डरिंग ने न केवल राजनीतिक समाजशास्त्र को महत्वपूर्ण उप-क्षेत्र के रूप में विकसित किया है, बल्कि दोनों विषयों ने खुद को परिष्कृत किया है, अवधारणाओं के भंडार में जोड़ा है और सामाजिक विषयों को समझने और विश्लेषण करने के लिए अपने विषयों और मुद्दों और अनुप्रयोगों को चौड़ा किया है। मानव समाज के इस क्षेत्र/प्रदेश/सीमा में अनुसंधान के क्षेत्रों में सामाजिक एजेंसियों के एजेंट के रूप में सार्वजनिक एजेंसियों, समूहों और परिवार के कामकाज का विश्लेषण शामिल है। कुछ अन्य क्षेत्रों जैसे मतदान व्यवहार, राजनीतिक पारिस्थितिकी और राजनीतिक समुदाय राजनीतिक कामकाज के विषयों पर प्रतिबिंबित करते हैं। यह वास्तव में राजनीतिक प्रक्रियाएं हैं जिनके माध्यम से राजनीतिक सदस्यता, निष्ठा, वैचारिक प्रतियोगिता, समूहों और पहचान के मूल्य उन्मुखीकरण की अवधारणा बनती है और बदल जाती है, और एक बौद्धिक विषय के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र की बढ़ती परिपक्वता में जोड़ा जाता है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों और यूरोपीय अध्ययनों पर एंथोनी गिदेंस के सामाजिक सिद्धांत, जीवन के क्षेत्रों के वेबर का विश्लेषण

और राजनीति के बोरदिएऊ का विश्लेषण जैसे कि सामाजिक गतिविधि जैसे शिक्षा और अर्थशास्त्र आदि के किसी भी अन्य क्षेत्रों में कुछ उदाहरण हैं जो प्रक्षेपवक्र का संकेत देते हैं जैसे विषय की वृद्धि।

2.1 राजनीतिक समाजशास्त्र

राजनीतिक समाजशास्त्र में उप-क्षेत्र के रूप में व्यवहारवाद की कमी को दूर करने के प्रयास के रूप विकसित होता है, जो मानव व्यवहार के मनोवैज्ञानिक स्पष्टीकरण पर अत्यधिक महत्व को सही करके 1960 के दशक में राजनीतिक विज्ञान में उभरता है। राजनीतिक समाजशास्त्र अनिवार्य रूप से सामाजिक निर्धारकों, सामाजिक संदर्भ और राजनीति और समाज के बीच एक जैविक संबंध को राजनीति और इसके प्रक्रियाओं के सामाजिक पहलुओं को अनपैक करने के लिए देखता है। यह वास्तव में इस अर्थ में है कि राजनीति के समाज और सामाजिक अंगों की संरचनाएं राजनीतिक समाजशास्त्र के विषय में विश्लेषण की प्राथमिक इकाई बन गईं।

6.3.1 राजनीतिक समाजशास्त्र और राजनीति के समाजशास्त्र के बीच अंतर

राजनीतिक समाजशास्त्र की तरह, राजनीति का समाजशास्त्र समाजशास्त्र का एक उपक्षेत्र है। राजनीति का समाजशास्त्र राजनीतिक प्रक्रियाओं और संस्थागत तंत्र के समाजशास्त्रीय मूल्यांकन पर भी प्रकाश डालता है। इसके विपरीत, राजनीतिक समाजशास्त्र, राजनीतिक निर्णयों को समझने के लिए राजनीतिक घटनाओं और प्रक्रिया को समझाने और समझने पर ध्यान केंद्रित करता है। जैसा कि पहले भी चर्चा की जा चुकी है, राजनीतिक समाजशास्त्र वास्तव में राजनीति और समाज के बीच, सामाजिक संरचना और राजनीतिक संरचना के बीच तथा राजनीतिक व्यवहार और सामाजिक व्यवहार के बीच संबंधों को भी रेखांकित करता है। राजनीतिक समाजशास्त्र यह समझाते हुए कि लोग किस प्रकार से कार्य करते हैं। अनिवार्य रूप से एक घटना के सामाजिक कारणों और प्रासंगिक पहलुओं के साथ काम करता है, राजनीति के समाजशास्त्र के विपरीत राजनीतिक समाजशास्त्र एक क्रॉस-डिसिप्लिनरी महत्वपूर्ण खोज है जिसने विचाराधीन किसी भी मुद्दे को एक प्रासंगिक उपचार दिया।

इसके अलावा, यदि हम पार्टी प्रणाली का एक उदाहरण लेते हैं, तो राजनीतिक समाजशास्त्र न केवल एक राजनीतिक पार्टी के कार्यों की जांच करता है, बल्कि विचार के तहत महत्वपूर्ण मुद्दों को अनपैक इसके सामाजिक अनुकूलन स्थान को भी रेखांकित करता है। इसी तरह राजनीति का समाजशास्त्र, भारतीय राजनीति को जाति से ग्रस्त समाज के संदर्भ में देखता है, जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र इस बात पर गौर करता है कि राजनीति ने भारतीय जाति व्यवस्था को किस तरह प्रभावित किया है, इसने देश में जाति या जाति व्यवस्था के राजनीतिकरण को प्रोत्साहित किया है। संक्षेप में, राजनीति का समाजशास्त्र मुद्दों का सतही उपचार प्रदान करता है जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र एक परिधिगत विश्लेषण है जो अनिवार्य रूप से सामाजिक संदर्भ में इस मुद्दे की परीक्षा को अंतर्निहित करता है।

6.3.2 राजनीतिक समाजशास्त्र में प्रयुक्त अवधारणाएं

6.3.2.1 राजनीतिक संस्कृति

यह राजनीतिक समाजशास्त्र में सबसे अधिक उपयोग और अक्सर उल्लिखित अवधारणाओं में से एक है। यह कहा जाता है कि शब्दों की उत्पत्ति और विकास 1950 के दशक तक

तक जाती है जब शब्द लोकप्रिय रूप से उपयोग किए जाते थे और सामाजिक मुद्दों और प्रक्रियाओं को परिभाषित करने के लिए विषयात्मक वैचारिक उपकरणों का हिस्सा बन जाते थे विशेष रूप से, प्रत्येक राष्ट्र के कुछ राजनीतिक मानदंड, मूल्य और विश्वास होते हैं, जो निदेशित करते हैं कि लोग किस प्रकार सोचते हैं और उन्हें राजनीति के बारे में किस प्रकार कार्य करना चाहिए। ये सभी एक विशेष राष्ट्र की राजनीतिक संस्कृति का निर्माण करते हैं। प्रत्येक राष्ट्र की अपनी अलग राजनीतिक संस्कृति भी होती है। परिभाषा के संदर्भ में, राजनीतिक संस्कृति मानदंडों, विश्वास प्रणालियों और मूल्यों के एक समूह को संदर्भित करती है, जो अनिवार्य रूप से राजनीतिक प्रणाली के प्रति उन्मुख हैं। ऐसे सांस्कृतिक तत्व समाज द्वारा साझा किए जाते हैं और संबंधित समाज या राष्ट्र के संबंधित राजनीतिक व्यवस्था के लिए अपेक्षाकृत विशिष्ट होते हैं। राजनीतिक संस्कृति को एक विशेष राजनीतिक मनोविज्ञान (विश्वास/अनुभूति), राजनीतिक विचार (विचारधारा), और राजनीतिक संस्थानों (एक निश्चित शासन प्रणाली के लिए प्राथमिकता) के एक व्यक्तिपरक अभिविन्यास के रूप में भी परिभाषित किया गया है। इस अर्थ में, राजनीतिक संस्कृति यह सोचने का एक विशिष्ट और प्रतिरूपित तरीका है कि लोगों के राजनीतिक और आर्थिक जीवन को कैसे संचालित किया जाना चाहिए। यह इस बात पर भी निर्भर करता है कि समाज कैसा है, अपने लोगों के साथ कैसा व्यवहार करता है और इससे भी महत्वपूर्ण राजनीतिक संस्कृति यह है कि लोग कैसे सोचते हैं, उनकी क्या मान्यताएं और मूल्य हैं जो राजनीतिक परंपराओं को निर्धारित करते हैं और उनके राजनीतिक लक्ष्यों को निर्देशित करते हैं। उदाहरण के लिए, स्वतंत्रता, समानता, धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र भारत की राजनीतिक संस्कृति के तत्व हैं। यहां, हमें विचारधारा और संस्कृति के बीच अंतर करना चाहिए। यहां संस्कृति सरकार के बारे में आम धारणाओं, मूल्यों और परंपराओं को संदर्भित करती है जबकि विचारधारा विचारों या नीतियों का एक समूह है जिसे सरकार को आगे बढ़ाने के लिए चाहिए। उदारवाद, नव-उदारवाद, पूंजीवाद या साम्यवाद विचारधाराओं के समूह हैं जो कुछ राज्यों को वांछनीय के रूप में देखते हैं और तदनुसार अपनी राजनीतिक व्यवस्था को व्यवस्थित करते हैं। उदाहरण के लिए, आजादी के बाद भारत ने लोकतंत्र को अपनी वांछित प्रणाली के रूप में राज्य व्यवस्था और मिश्रित अर्थव्यवस्था के रूप में अपनाया और देश में धीरे-धीरे इसे राजनीतिक संस्कृति के रूप में अपनाया गया। हालांकि, यह 1990 के दशक के बाद था कि राज्य की विचारधारा के रूप में नव-उदारवाद भारत में पहले की राजनीतिक अभिविन्यासों पर तरजीह व वरीयता लेता है। इस अर्थ में, राजनीतिक संस्कृति गतिशील है क्योंकि यह राज्य की समय और सुविधा और उसके नीतिगत उद्देश्यों की आवश्यकता के अनुसार बदलती रहती है।

1.2 राजनीतिक संस्कृति

पॉलिटिकल कल्चर शब्द का इस्तेमाल जोहान गॉटफ्रीड हेर्डर, एलेक्सिस डी टॉकविल और मॉन्टेसक्यू के अग्रणी कार्यों से शुरू होता है। हाल में और आधुनिक शब्दों का उपयोग, एलमंड के सेमिनल लेख के साथ राजनीति विज्ञान में शुरू होता है, जिसका शीर्षक था "तुलनात्मक राजनीतिक प्रणाली' जो 1956 में प्रकाशित हुई। एलमंड के शब्दों में राजनीतिक संस्कृति किसी भी राजनीतिक कार्रवाई के लिए अभिविन्यास की प्रणाली को संदर्भित करती है (फॉर्मिन्सन 2001) , पेज नंबर 6)।

6.3.2.2 राजनीतिक समाजीकरण

राजनीतिक समाजीकरण शब्द का इस्तेमाल अक्सर राजनीतिक समाजशास्त्र में किया जाता है। सामाजिक रूप से, समाजीकरण एक आजीवन सीखने की प्रक्रिया है। राजनीतिक समाजीकरण शब्द राजनीतिक भूमिका या व्यवहार के सीखने से संबंधित है। लोगों को शिक्षित किया जाता है और इस प्रकार बड़ी राजनीतिक संस्कृति का अछम हिस्सा बनाया

जाता है जो पीढ़ी दर पीढ़ी जारी रहता है। राजनीतिक समाजीकरण इस प्रकार मूल रूप से एक सामाजिक प्रक्रिया है कि कैसे लोग अपने राजनीतिक दृष्टिकोण को बनाते हैं, अपनी राजनीतिक भूमिका सीखते हैं और इस प्रकार अपनी राजनीतिक संस्कृति बनाते हैं। सरल शब्दों में, राजनीतिक समाजीकरण एक सामाजिक प्रक्रिया को संदर्भित करता है जिसके तहत लोग या समूह कुछ अपेक्षित राजनीतिक भूमिका को पूरा करने के लिए राजनीतिक व्यवहार सीखते हैं। अधिकांश बच्चे अपने राजनीतिक मूल्यों और परंपराओं को कम उम्र में ही सीख लेते हैं। हालांकि, समय-समय पर दृष्टिकोण और मानदंड विकसित होते रहते हैं और बदलते रहते हैं, क्योंकि लोग विभिन्न एजेंसियों के माध्यम से व्यापक समाज के संपर्क में आते हैं जो सामाजिक एजेंटों के रूप में कार्य करते हैं। उदाहरण के लिए, परिवार, पड़ोस, स्कूल और सहकर्मी समूह बच्चों को कम उम्र के नजरिए से प्रभावित करते हैं और कम उम्र में अपने विचारों को आकार देते हैं, जबकि बड़े पैमाने पर मीडिया, राजनीतिक दल, राज्य, नागरिक समाज, रुचि समूह जैसी एजेंसियां बाद के युग में लोगों के रवैये को आकार देती हैं। ऐसी एजेंसियां लोगों के रवैये को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उदाहरण के लिए, समकालीन वैश्वीकृत और अतः संबंधित विश्व मास मीडिया में लोगों की सोच और विचारों को आकार देने के लिए काफी प्रभाव है। सूचना प्रौद्योगिकी संचालित मीडिया को एक अत्यधिक सशक्त इकाई माना जाता है जो बहुत कम समय में बहुत सी जानकारी फैलाता है और साझा करता है और लोगों की राय और राजनीतिक दृष्टिकोण को बहुत प्रभावित करता है।

राजनीतिक समाजीकरण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष और एकीकरण या विभाजनकारी हो सकता है। उदाहरण के लिए, समाजीकरण व्यक्तिगत अनुभव के माध्यम से या ऊपर बताए गए किसी एजेंट या एजेंसी के माध्यम से हो सकता है। इसी तरह, समाजीकरण कुछ समूहों के खिलाफ एकीकरण या 'दूसरों' की भावना पैदा करता है। इस प्रकार यह विभाजनकारी भी हो सकता है। समाजीकरण की प्रक्रियाएं वैचारिक रूप से निर्देशित हो भी सकती हैं और नहीं भी। उदाहरण के लिए, कुछ राजनीतिक दल अपने कैडरों को प्रशिक्षित करते हैं या आबादी को अपने एजेंडे की तर्ज पर लक्षित करते हैं, जबकि नागरिक/मानवाधिकार समूह, किसी विशेष राजनीतिक विचारधारा या पार्टी की राजनीति के साथ नहीं, बस लोगों को उनके अधिकारों के बारे में जागरूक करने का प्रयास करते हैं।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक भूमिका को आकार देने में मदद करता है। राजनीतिक दल, हित समूह और ऐसे अन्य संगठन अपने कैडर या सदस्यों को अपने एजेंडा की लाइन पर प्रशिक्षित करते हैं। एक अवधारणा के रूप में, राजनीतिक भूमिका राजनीतिक व्यवहार से संबंधित है। सामाजिक रूप से बोलना, एक भूमिका एक सामाजिक रूप से अपेक्षित व्यवहार है। राजनीतिक भूमिका शब्द एक प्रक्रिया को संदर्भित करता है जब किसी व्यक्ति को राजनीतिक क्षेत्र के भीतर प्रदर्शन करने के लिए स्थिति और जिम्मेदारियों के सेट के साथ जोड़ा जाता है। समाज को यह उम्मीद है कि सदस्य किसी दिए गए राजनीतिक व्यवस्था के भीतर ही प्रदर्शन करेंगे। दी गई भूमिका का यह प्रदर्शन राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रियाओं के साथ-साथ चलता है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति गुजरता है। यह आगे राजनीतिक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाने में मदद करता है।

6.3.2.3 राजनीतिक पूंजी

राजनीतिक पूंजी, संसाधन का प्रकार है जो एजेंटों को राजनीति के क्षेत्र में दूसरों के निर्णय और कार्रवाई को प्रभावित करने के लिए संदित करता है, संघर्ष और अभ्यास करता है (कौप्पी 2003)। राजनीतिक पूंजी वास्तव में राजनीति के क्षेत्र में एक प्रतीकात्मक पूंजी है।

सामान्य प्रतिमान में, राजनीतिक पूंजी एक प्रकार की सद्भावना, विश्वास और प्रतिष्ठा है जो व्यक्ति या राजनेता जनता के साथ राजनीतिक लाभ प्राप्त करने के लिए कमाते हैं। इस तरह की सद्भावना और राजनेता या व्यक्ति जिस पर विश्वास करते हैं वह वास्तव में सार्वजनिक पक्ष हासिल करने के लिए उनके साथ संपत्ति है।

राजनीतिक पूंजी को समझने और उसका आकलन करने के लिए, किसी भी इकाई जैसे कि राजनीतिक दल, एक क्षेत्रीय राजनीतिक गठन जैसे कि एक रुचि समूह, एक जाति संघ, राष्ट्र-राज्य के एक संघ का विश्लेषण किया जा सकता है ताकि सामाजिक संबंध में निहित सत्ता की गतिशीलता, प्रभुत्व, आधिपत्य और नियंत्रण तंत्र को समझा जा सके। अमीर राजनीतिक पूंजी वाले लोग अक्सर अधिक शक्ति और प्रभुत्व को नियंत्रित कर सकते हैं। वे अधिक समय तक उसी पर पकड़ बना सकते हैं। विशेष रूप से, राजनीतिक पूंजी चुनाव जीतने के दौरान उत्पाद और प्रक्रिया दोनों के रूप में कार्य कर सकती है, एक निर्वाचित कार्यालय को बनाए रखने और लोगों को प्रभावित कर सकती है या जुटा सकती है।

बोध प्रश्न

1) समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के एक चौराहे के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्भव पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

२) राजनीतिक समाजीकरण क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) राजनीतिक समाजीकरण की एजेंसियां क्या हैं?

ए) मास मीडिया

इ) राजनीतिक दल

ब) रुचि समूह

क) उपरोक्त सभी

6.4 सारांश

इस इकाई में, हमने राजनीति विज्ञान के अर्थ और समाजशास्त्र के साथ इसके संबंध के बारे में बताया है। हमने वर्णन किया है कि कैसे दोनों विषयों को आपस में जोड़ा गया है और कैसे दोनों विषयों ने समय की अवधि में अपनी शर्तों और अवधारणाओं को उधार, परिष्कृत और समृद्ध किया है। हम समझ गए कि समाज और उसके मुद्दों को समझने के लिए समाजशास्त्र किस तरह अंतःविषय ढांचे को विकसित करने में राजनीति विज्ञान के साथ मिला है।

जैसा कि हमने राजनीतिक समाजशास्त्र नामक उप-क्षेत्र पर भी चर्चा की है जो मुख्य रूप से चौराहे की एक शाखा है, और समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच वैचारिक आदान प्रदान है। पहचान, सांप्रदायिकता, नागरिक समाज, मतदान व्यवहार आदि जैसे मुद्दे कुछ महत्वपूर्ण चिंताएँ हैं जो राजनीति विज्ञान और समाजशास्त्र दोनों के करीब हैं। ये मुद्दे राजनीतिक समाजशास्त्र में शामिल हैं, समाजशास्त्र के उप-क्षेत्र के रूप में, समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच मौजूदा चौराहे पर प्रतिबिंबित करते हैं।

6.5 संदर्भ

फॉर्मिसानो, रोनाल्ड पी (2001)। राजनीतिक संस्कृति की अवधारणा, द जर्नल ऑफ इंटेर्डिस्सीप्लिनरी , खंड - 31, नंबर 3, पृ. - 393-426।

गिडेंस, एंथोनी (1995)। पॉलिटिक्स , सोशियोलॉजी एंड सोश्ल थ्योरी : एन्काउंटर्स विथ क्लासिकल एंड कॉन्टेम्पररी सोशल थॉट, स्टैनफोर्ड, स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

जैन, सी.एम. और दोशी, एस.एल. (1974)। बेयरिंग ऑफ सोशियोलॉजी। खंड 35, नंबर 1, पृ. 50-59।

कौप्पी, निलो (2003)। बॉर्डियू की राजनीतिक समाजशास्त्र और यूरोपीय एकता, थ्योरी एंड सोसाइटी , खंड 32, नंबर 5/6, प्रतीकात्मक शक्ति के समाजशास्त्र पर विशेष अंकः पियरे बॉर्डियू की स्मृति में एक विशेष अंक, पृ. 775-789।

लिपसेट, एस एम (1964)। समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञानः एक ग्रंथ सूची, अमेरिकन सोशिओलोजिकल रिव्यू , खंड- 29, नंबर 5, पृ. 730-734

राठौर, एल.एस. (1986)। राजनीतिक समाजशास्त्रः अर्थ, विकास और दायरा , द इंडियन जर्नल ऑफ़ पॉलिटिकल साइंस, खंड 47, नंबर -, पृ. 119-140

शर्मा, एल.एन. (1978)। राजनीतिक समाजशास्त्रः तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन का परिप्रेक्ष्य, द इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, खंड 39, नंबर 3, पृ. 390-405।

स्मिथ रोजर्स एम (2004)। पहचान, रुचि, और राजनीति विज्ञान का भविष्य, पर्सपेक्टिब्स ऑन पॉलिटिक्स , खंड 2, 2 (जून, 2004), पृ. 301-312

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड 3

बुनियादी अवधारणाएँ

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 7 संस्कृति और समाज*

संरचना

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 संस्कृति और जीव विज्ञान

7.3 संस्कृतिः लक्षण एवं स्वरूप

7.4 संस्कृति की विशेषताएं

7.5 संस्कृति के प्रकारः भौतिक संस्कृति एवं अभौतिक संस्कृति

7.6 संस्कृति के तत्व

7.7 संस्कृति एवं सभ्यता

7.8 सांस्कृतिक परिवर्तन

- 7.8.1 सांस्कृतिक नवीनीकरण
- 7.8.2 सांस्कृतिक विसरण
- 7.8.3 संस्कृति सम्मिश्रण
- 7.8.4 सांस्कृतिक समीकरण

7.9 सांस्कृतिक विविधता

- 7.9.1 उपसंस्कृतिया
- 7.9.2 प्रतिरोधी संस्कृतियां
- 7.9.3 सांस्कृतिक आघात

7.10 सांस्कृतिक कट्टरता

7.11 सांस्कृतिक उदारता

7.12 बहुसंस्कृतिवाद

7.13 वैश्वीकरण एवं संस्कृति

7.14 संस्कृतिःभारतीय परिप्रेक्ष्य

- 7.14.1 सांस्कृतिक विविधता
- 7.14.2 सांस्कृतिक एकता एवं अखंडता

7.15 सारांश

7.16 संदर्भ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप पढ़ेंगे :

- संस्कृति और समाज में संबंध;
- संस्कृति और समाजशास्त्र में संबंध;
- संस्कृति की प्रमुख विशेषताएं, संस्कृति और जीव विज्ञान, संस्कृति और सभ्यता, संस्कृति के तत्व, संस्कृति के लक्षण एवं सांस्कृतिक स्वरूप

*रोमा रानू दाश, शोधार्थी, जे.एन.यू

- सांस्कृतिक परिवर्तन तथा उसके कारण;
- सांस्कृतिक विविधता, बहुसंस्कृतिवाद;
- संस्कृति का वैश्विक प्रवाह अथवा वैश्वीकरणएवं सांस्कृतिक परिवर्तन; तथा
- संस्कृतिः भारतीय परिप्रेक्ष्य, विविधता तथा विविधता में एकता।

7.1 प्रस्तावना

संस्कृति और समाज परस्पर निर्भर है। हर समाज की एक संस्कृति होती है जो समाज के सदस्यों का मार्गदर्शन करती है। समाज और संस्कृति के बीच संबंध को समझने के लिए हमें यह जानना जरूरी है कि समाज आखिर है क्या? राल्फ लिंटन के अनुसार,"समाज व्यक्तियों का व्यवस्थित समूह है। संस्कृति किसी समाज के जिम्मेदार तथा समझदार लोगों की विशेषताओं का समुच्चय अथवा संकलन है" (लिंटन 1955-29)। समाज का क्षेत्र बड़ा है तथा संस्कृति उसका एक महत्वपूर्ण घटक है। संस्कृति के माध्यम से समाज के लोग अपने जीवन को महसूस करते हैं। दूसरे शब्दों में समाज व्यक्तियों व उनके समूहों से मिलकर बनता है जबकि संस्कृति समाज में रहने वाले लोगों की व्यवहार पद्धतियां हैं जो उस समाज के जीवन से सीधी जुड़ी होती हैं। संस्कृति मनुष्य की वह विशेषता है जो उसे जानवरों, पशु-पक्षियों आदि अन्य जीवो से अलग करती है। संस्कृति हमारे दृष्टिकोण, विश्वासों, मूल्यों और रहन-सहन की पद्धतियों का प्रतिनिधित्व करती है। इस प्रकार संस्कृति और समाज आपस में एक दूसरे से सीधे जुड़े हैं और उन्हें एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता।

गिड्डेन्स तथा सुत्तोंन (2014) के अनुसार सामाजिक संबंधों तथा सामाजिक संरचना को जोड़ने वाले सूत्र को समाजशास्त्र में संस्कृति माना जाता है।

संस्कृति के बारे में विभिन्न विद्वानों की अलग-अलग परिभाषाएं हैं। अल्फ्रेड क्रोएबेर तथा क्लीड क्लूकहोन ने संस्कृति की 150 परिभाषाओं की पहचान की है। संस्कृति की पहली परिभाषा ई.बी. टॉयलर ने की है। उसके अनुसार, "संस्कृति ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, नियम, रीति रिवाज तथा उन अन्य सभी विशेषताओं का संचय है जो किसी समाज के सदस्यों में अंतर्निहित होती है"(टॉयलर,1871:1)। मैलिनोवस्की अरुंटा समाज का उल्लेख करते हुए कहता है कि रीति-रिवाज, भाषा, विश्वास तथा सोचने, महसूस करने व कार्य करने की पद्धतियां संस्कृति के महत्वपूर्ण घटक हैं जो हर समाज में मौजूद रहते हैं।

अब्राहम (2006) के अनुसार सामाजिक समूह या समुदाय के जीवन जीने कि पद्दतियां उनकी प्रकृति, क्रिया-कलाप, भाषा तथा तकनीक आदि सब का समुच्चय संस्कृति कहलाता है। सामाजिक सन्दर्भ में संस्कृति का स्वरूप सामान्य सन्दर्भ में संस्कृति के स्वरूप से बिलकुल अलग है।

सुथरलैंड एट अल (1961) के अनुसार किसी समाज की व्यवहार पद्धतियों, रीति-रिवाजों, विश्वासों, मान्यताओं, भाषा तथा सोचने व महसूस करने तथा कार्य करने के तरीकों आदि को संस्कृति कहा जाता है। मनुष्यों की अनुवांशिकता एक सतत प्रक्रिया है। जीव विज्ञान से संस्कृति की तुलना करने पर यह सत्य स्पष्ट हो जाता है।

7.2 संस्कृति तथा जीव विज्ञान

संस्कृति और जीव विज्ञान में पूरी तरह विपरीतता है। संस्कृति की अपनी विशेषताएं हैं तथा जीव विज्ञान की अपनी। जब मानव समाज की तुलना पशु पक्षी तथा जानवरों के झुंडों से

की जाती है तब सांस्कृतिक विशेषताएं ही मनुष्य को जानवरों से अलग खड़ा करती हैं। फिर भी कुछ ऐसी आधारभूत जैविक विशेषताएं भी है जो मनुष्यों और जानवरों में एक जैसी पाई जाती हैं जैसे भूख, प्यास, भय, मैथुनद्य मनुष्यों की तरह जानवर में भी व्यवहार करने के अपने तरीके होते हैं परंतु दोनों की व्यवहार पद्धतियों में जबरदस्त अंतर होता है जैसे भूख तथा मैथुन की इच्छा सभी जीवों में होती हैं। परंतु संस्कृति यह तय करती है कि मनुष्य इन दोनों इच्छाओं को अनुशासन में रखते हुए किस प्रकार पूरा करें। यही अनुशासन मनुष्य की संस्कृति है जो उसे एक प्रकार की गरिमा व सौंदर्य प्रदान करती है।

मानव समाज में सामाजिक व्यवहार पीढ़ी दर पीढ़ी संपर्क के माध्यम से समझदारी पूर्वक संप्रेषित होता रहता है जबकि पशु पक्षी आदि अन्य जीवो में है यह सब अनुवांशिकता के माध्यम से संप्रेषित होता है। पशु पक्षी आदि जीव प्राकृतिक प्रवृत्तियों से जीवन जीते हैं, वे मनुष्य की तरह व्यवहार नहीं सीख सकतेद्य पशु पक्षी आदि जीव प्रायः कुछ सार्थक ध्वनियों के माध्यम से अपना संदेश दूसरों तक पहुंचाते हैं। वे भाषा को जन्म नहीं दे सकते जबकि मनुष्य समाज ने अनेक भाषाओं को जन्म दिया है। मनुष्य समाज की एक संस्कृति होती है जो उन्हें सृष्टि के शेष जीव धारियों से अलग करती है। दूसरे शब्दों में पशु पक्षी अदि सभी प्रणियों का जीवन, प्रवृतियों पर निर्भर करता है और मनुष्यों का संस्कृति पर।

वॉर्स्ली (1970) के अनुसार संस्कृति को वर्गीकरण, भाषा तथा सांकेतिक चिन्हों के माध्यम से संप्रेषित किया जा सकता है।संकेतों का प्रयोग केवल मनुष्य ही कर सकते हैं। अन्य जीव जंतु संकेतों का इस्तेमाल करना नहीं जानते। सांकेतिक भाषा संस्कृति को विशेष रूप से संपन्न व सक्षम बनाती है। संकेत अथवा प्रतीक मनुष्य के लिए विशेष महत्व रखते हैं। किसी वस्तु विशेष का मूल्य प्रतीक के कारण मनुष्य के लिए विशेष हो जाता है जैसे, राष्ट्रीय ध्वज यद्यपि कपड़े का बना होता है परंतु किसी देश के लोगों के लिए वह कपड़े का टुकड़ा मात्र नहीं होता, वह उनकी राष्ट्रीयता का प्रतीक होता है। इसी प्रकार ईसाइयों के लिए क्रॉस एक चिन्ह मात्र नहीं है, वह निर्वाण का प्रतीक है।

7.3 संस्कृति के लक्षण एवं सांस्कृतिक स्वरुप

लक्षण संस्कृति के सबसे छोटे घटक हैं। हर संस्कृति के अनेक लक्षण होते हैं जैसे- रीति रिवाज, त्यौहार मनाना आदि जो मिलकर संस्कृति को आस्तित्व में लाते है तथा उसकी एक अलग पहचान बनाते हैं। चरण स्पर्श, हाथ मिलाना, भोजन व उसके करने के तरीके, पहनावा आदि सब संस्कृति के द्योतक हैं। किसी संस्कृति के सारे लक्षण मिलकर समूची संस्कृति का निर्माण करते हैं। मजूमदार तथा मदान (2008) मानते हैं कि कोई भी संस्कृति एक स्वतंत्र संस्थान नहीं होती अथवा यह कहें कि संस्कृति अपने आप में स्वतंत्र आस्तित्व नहीं हैं बल्कि यह विभिन्न सांस्कृतिक लक्षणों तथा उनके अन्तर्सम्बन्धों से निर्मित संरचना है। किसी संस्कृति के सारे लक्षण जैसे प्रथाएं, मान्यताएं व चलन आदि मिलकर उसे एक विशिष्ट स्वरुप प्रदान करते हैं जिसके कारण वह दूसरी संस्कृतियों के बीच अलग पहचानी जा सकती हैं। सुथरलैंड एट अल के अनुसार सामोआ के निवासी कावा पीते हैं और कावा पीना उनकी सांस्कृतिक पहचान बन गई है। कावा शराब नहीं है परंतु एक प्रकार का मादक पेय है और सामोआ में इस पेय को त्योहारों व उत्सवों के अवसरों पर विशेष रूप से तैयार करने और परोसने की प्रथा प्रचलित है। समोअन समाज में अन्य अनेक प्रथाओं की तरह कावा पीने की प्रथा भी समाहित हो गई है और वह इस समाज की एक विशेष सांस्कृतिक पहचान बन गई है। किसी भूभाग के लोगों अथवा क्षेत्र विशेष के निवासियों में कुछ आदतें यां प्रथाएं ऐसी रच बस जाती हैं कि वे उनकी सांस्कृतिक पहचान बन जाती हैं। ऐसे सभी क्षेत्र उस संस्कृति विशेष के लिए जाने जाते हैं। अपनी इन विशेषताओं के कारण वे विशेष

सांस्कृतिक क्षेत्र कहलाते हैं। भारत के पूर्वोत्तर राज्यों जम्मू कश्मीर तथा दक्षिण में तमिलनाडु राज्य की अपनी विशिष्ट संस्कृति के कारण अलग पहचान बन गई है।

7.4 संस्कृति की विशेषताएं

संस्कृति और समाज

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। जिस समाज में वह रहता है उसकी एक सामाजिक संस्कृति होती है जो उसके जीवन में गहराई तक उतर जाती है। परस्पर सामाजिक संपर्क के कारण एक प्रकार की संस्कृति किसी समाज के लोगों के जीवन का अनिवार्य अंग बन जाती है। संस्कृति मनुष्य के व्यवहारों को नियंत्रित करती है तथा उसकी रोटी, कपड़ा और मकान आदि मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

क्लीड क्लूकहों के अनुसार संस्कृति जीवन की एक विशेष शैली का निर्माण करती है। उसे उस समाज में स्थापित करने तथा उसके विशिष्ट वातावरण में रहने के अनुकूल बनाती है।

संस्कृति को सीखा जाता है तथा उसका आदान-प्रदान भी होता है।

संस्कृति एक व्यवहार पद्धति है जिसे मनुष्य अपनी जन्मस्थली से, अपने परिवार व समाज से सीखता है। जन्म के समय बच्चे की अपनी कोई पहचान नहीं होती। संस्कृति उसके जन्म के समय उसके साथ नहीं आती, न ही वह उसके अंदर से प्रकट होती है। जिस परिवार, परिवेश तथा समाज के बीच वह जन्म लेता है उन्हीं से सीखता है और उसे सीखकर वह उस समाज का सभ्य सदस्य बन जाता है। धीरे-धीरे अपने समाज के मूल्य व नियमों की आदत डाल लेता है और वह सुसंस्कृत कहलाता है। मनुष्य को सभ्य प्राणी कहा जाता है। धीरे-धीरे वह अपने समाज के मूल्यों तथा नियमों के अनुसार स्वयं को ढाललेता है। इसी लिए उसे सभ्य कहा जाता है। जिस समाज में मनुष्य रहता है उसकी संस्कृति का प्रभाव उसके अंदर गहरा उतर जाता है। समाज के लोग एक दूसरे से सांस्कृतिक प्रभाव ग्रहण करते हैं तथा एक दूसरे को अपने सांस्कृतिक गुणों से प्रभावित करते हैं। इस प्रकार सांस्कृतिक मूल्यों का आदान-प्रदान जीवन भर चलता है।

सांस्कृतिक आदान-प्रदान

मनुष्य अपनी आने वाली हर पीढ़ी को अपनी संस्कृति प्रदान करता है। जीवन भर एक देश के लोग दूसरे देश के लोगों को अपने सांस्कृतिक मूल्य प्रदान करते रहते हैं तथा उनके सांस्कृतिक मूल्यों को ग्रहण करते रहते हैं। माता पिता, अभिभावक, शिक्षक, मित्र आदि सभी भूमिकाओं में मनुष्य अपनी परंपराओं व रीति-रिवाजों से एक दूसरें को परिचित कराते रहते हैं। अनुवांशिक विशेषताओं के आदान प्रदान तथा संस्कृति के आदान प्रदान में मौलिक अंतर है। अनुवांशिक विशेषताएं आवश्यक रूप से स्वतः ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुंचती रहती हैं। अनुवांशिक विशेषताएं जैसे- त्वचा का रंग, बालों की प्रकृति, आंखों का रंग, आदि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में जाते रहते हैं। समाज में मनुष्य की आदतें, विचार, सोच, माता पिता के दृष्टिकोण आदि सांस्कृतिक आदान प्रदान की क्रिया द्वारा प्राप्त करते हैं।राल्फ लिंटन के अनुसार, "संस्कृति समाज के सदस्यों की जीवन शैली है।" विचारों, रीति-रिवाजों, परंपराओं आदि सांस्कृतिक मूल्यों को लोग एक दूसरे से सीखते व सिखाते रहते हैं तथा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुंचाते रहते हैं।

संस्कृति प्रतीकात्मक है

संकेतों तथा प्रतीकों को हम सदा महत्व देते आए हैं। सांस्कृतिक हस्तक्षेप से संकेतों तथा प्रतीकों को सार्थकता प्राप्त होती है। जैसे राष्ट्रीय ध्वज मात्र कपड़े का टुकड़ा नहीं है अपितु

उसकी अपनी एक संस्कृति है। जैसे ईसाइयों के लिए क्रॉस निर्वाण का प्रतीक है वैसे ही किसी देश के निवासियों के लिए राष्ट्रीय ध्वज उनकी प्रभुसत्ता एवं गरिमा का प्रतीक है।

संस्कृति गतिशील एवं परिवर्तनशील है

संस्कृति स्थिर नहीं है। यह राजनैतिक सत्ता के प्रभाव से पूरी तरह मुक्त स्वयं में सुव्यवस्थित है। यह सदा बदलती रहती है और बाहरी प्रभावों को सदा ग्रहण करती रहती है। यह अंदर से भी बदलती है और बाहर से भी। अनेक सांस्कृतिक मूल्य अथवा तत्व या घटक मिलकर संस्कृति को समग्रता प्रदान करते हैं।

7.5 संस्कृति के प्रकारःभौतिक संस्कृति एवं अभौतिक संस्कृति

भौतिक तथा अभौतिक दोनों प्रकार के तत्व संस्कृति में शामिल है। घर, यातायात के साधन, कारखाने, खाद्य सामग्रियां आदि भौतिक सांस्कृतिक तत्व कहलाते हैं तथा रीति रिवाज, परंपरा, विचार, विश्वास, आस्थाएं, संपर्क प्रविधियां आदि संस्कृति के अभौतिकतत्व हैं। इस बात पर बहुत चर्चाएं हुई हैं कि संस्कृति के क्षेत्र में क्या-क्या शामिल किया जाए और क्या-क्या न किया जाए। कुछ विद्वान यह मानते हैं कि केवल उन्हीं चीजों को संस्कृति के दायरे में लाया जा सकता है जिन्हें व्यवहार में आदान प्रदान करते हैं लेकिन अन्य विद्वान भौतिक वस्तुओं को भी संस्कृति के अंतर्गत मानते हैं। गिड्डेन्स व सुटॉन्स (2014) के अनुसार संस्कृति के दायरे में केवल अभौतिक तत्व ही आते हैं। इमारतें, फर्नीचर आदि भौतिकवस्तुएं संस्कृति के दायरे में नहीं आतीं। लेकिन सभी समाजशास्त्री इस तर्क पर टिके नहीं रहे हैं।वे उपयोग में आने वाली भौतिक वस्तुओं को भी संस्कृति के अंतर्गत मानते हैं। इस प्रकार भौतिक तथा अभौतिक दोनों प्रकार के तत्व संस्कृति के अंतर्गत माने जाने लगे हैं। अतःसंस्कृति के दायरे में केवल ज्ञान, आस्था, कर्मकांड ही नहीं आते परंतु मानव निर्मित चीजें जैसे उपकरण, इमारतें, यातायात के साधन, संपर्क के माध्यम भी संस्कृति के अंतर्गत आते हैं। ग्रीन (1964) के अनुसार,"समाज द्वारा दिया जाने वाला ज्ञान, आदान प्रदान की आदर्श प्रणालियाँ, कर्मकांड, आस्थाएं व जानकारियां तथा उनमें होने वाले संशोधन एवं परिवर्तन भी संस्कृति के अंतर्गत आते हैं।"

7.6 संस्कृति के तत्व

भाषा

भाषा संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग है। जो भाषा हम दैनिक जीवन में दूसरे लोगों के संपर्क में आते समय इस्तेमाल करते हैं उसमें हमारी संस्कृति झलकती है। भाषा से मनुष्यों की प्रजातियों की पहचान होती है। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में सांस्कृतिक परंपराएं भाषा के माध्यम से ही पहुंचती हैं क्योंकि भाषा में उनके अर्थ अंतर्निहित होते हैं।सपीर-व्होर्फ हाइपोथिसिस के अनुसार,"भाषा प्रदान नहीं की जाती बल्कि सांस्कृतिक रूप से उसका निश्चयन किया जाता है और उसके माध्यम से विभिन्न विधियों द्वारा सांस्कृतिक सत्यता एवं मूल्यों का आदान प्रदान किया जाता है" (स्कैफेर और लम्म 1999)।

उदाहरण के लिए, अरब देशों में यातायात के लिए लोग अब भी अधिकतर ऊंटों पर निर्भर रहते हैं, यही कारण है कि वहां की भाषा में ऊंटों से संबंधित 3000 शब्द पाए जाते हैं। उसी प्रकार भारत में सहजन तथा करेला आदि सब्जियों के पहले भारतीय भाषाओं में विशेषण लगाने की परंपरा नहीं है। परंतु अंग्रेजी में सब्जियों के लिए ऐसे शब्द इस्तेमाल किए जाते हैं जिनमें या तो उन सब्जियों के स्वाद प्रतिध्वनित होते हैं या उनके आकार की झलक मिलती है। भाषा एवं संस्कृति एक दूसरे के साथ अंदर से जुड़े होते हैं।

विश्वास

अब्राहम (2006) के अनुसार सच्चाई के बारे में वे कथन अथवा विचार जिन्हें लोग स्वीकार करते हैं,विश्वास कहलाते हैं। जैसे भारत में बड़ी संख्या में लोग ईश्वर में विश्वास करते हैं तथा विवाह व अन्य महत्वपूर्ण अवसरों के लिए शुभ मुहूर्त निकलवाते हैं। इतना ही नहीं कुछ परिवारों में तो लड़का और लड़की की कुंडलियां मिलाये बिना उनकी शादी भी नहीं की जा सकती। फिर भी विश्वास सदा ऐसे स्थिर नहीं रहते, समय के साथ बदल भी जाते है। विश्वास संस्कृति का मूल्य है। जब हम एक संस्कृति में जीते हैं तो हमारा विश्वास कुछ और होता है परंतु जब हम दूसरी संस्कृतियों के संपर्क में आते हैं तो उनके अनुसार हमारे विश्वास भी बदल जाते हैं। जैसे गांव में रहने वाले लोग प्रायः ग्रामीण संस्कृति में जीते हैं और काफी हद तक अंधविश्वासी होते हैं परंतु जब वे शहरों में आ जाते हैं तब उनके अंधविश्वास समाप्त हो जाते हैं। लेकिन कभी-कभी हमारे विश्वास हमारे अंदर इतनी गहराई से उतर जाते हैं कि हम उन्हें कभी छोड़ नहीं पाते।

मान्यताएं

मान्यताएं समाज द्वारा स्वीकृत नियम है जो समाज के सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित करते हैं। सुथरलैंड (1961) के अनुसार सामाजिक नियम किसी समुदाय विशेष द्वारा विकसित किये जाते हैंऔर उस समुदाय के सदस्यों के व्यवहार के स्तर को तय करते हैं। वे समाज के सदस्यों के व्यवहार को दिशा देते हैं अथवा यह कहें कि सही व्यवहार कराने के लिए उन्हें निर्देश देते हैं। हरलामबोस और हेल्ड (2016) के अनुसार मान्यताएं कार्य की विशिष्ट मार्ग दर्शिकाएं हैं। वे विभिन्न स्थितियों में मनुष्य किस प्रकार व्यवहार करें इसे तय करती हैं। उदाहरण के लिए हर समाज में विभिन्न अवसरों पर वस्त्र धारण करने के लिए कुछ मान्यताएं होती हैं जैसे उत्सव में जाने के लिए हम अलग तरह के कपड़े पहनते हैं, किसी की मृत्यु हो जाने पर शोक प्रकट करने के लिए अलग तरह के कपड़े पहनते हैं, काम पर जाने के लिए अलग तरह के तथा अस्पताल जाने के लिए अलग तरह के। हर समाज में मान्यताएं अलग-अलग होती हैं उदाहरण के लिए जैसे कपड़े आदिवासी पहनते हैं वैसे अन्य समाजों में नहीं पहने जाते। मान्यताएं दो प्रकार की होती हैं औपचारिक मान्यताएं तथा अनौपचारिक मान्यताएं। औपचारिक मान्यताएं लिखित होती हैं तथा उनका उल्लंघन करने पर दंडित भी किया जा सकता है। अनौपचारिक मान्यताएं लिखित नहीं होतीं परंतु वे समाज द्वारा स्वीकृत होती हैं। इनका पालन न करने पर दंड का विधान नहीं है। अब्राहम के अनुसार औपचारिक मान्यता अनिवार्य रूप से लागू की जाती है जैसे- स्कूल की यूनिफार्म। अनौपचारिक मान्यताएं वे मान्यताएं हैं, जिनमें लोगों से उम्मीद की जाती है कि वे उन्हें माने जैसे सबके सामने प्यार नहीं करना तथा सलीके से कपड़े पहनना।

मान्यताओं को उनके लागू करने की अनिवार्यताओं के आधार पर फिर से वर्गीकृत किया जा सकता है। पहले वर्ग में वे मान्यताएं आती हैं जो अनौपचारिक होती हैं। यह हमारे कार्यों को दिशा देती हैं। इन्हें सामान्य मान्यताएं भी कहा जा सकता हैं जैसे- जब बड़े बोल रहे हों तो बीच में नहीं बोलना चाहिए और यदि छींक आये तो अपनी नाक ढक लेनी चाहिए। दूसरी श्रेणी में वेमान्यताएं आती है जिन्हें अधिक शक्ति से लागू किया जाता है क्योंकि उनसे समाज अथवा समुदाय के हित सीधे जुड़े होते हैं। इन्हें अनिवार्य मान्यताएं कह सकते हैं। किसी देश के कानून इन अनिवार्य मान्यताओं के आधार पर बनाए जाते हैं। इनमें मानव विवेक निहित होता है। अनिवार्य मान्यताएं सामान्य मान्यताओं व कानून के बीच के स्तर की होती हैं।

सांस्कृतिक मूल्य मनुष्य के अंतर्जगत से जुड़े होते हैं और वे मनुष्य के लिए क्या सही है और क्या गलत है उसके आधार पर मनुष्य को दिशानिर्देश देते हैं जबकि मान्यताएं बाहर से मनुष्य को अनुशासित करती हैं।

अब्राहम (2006) के अनुसार सांस्कृतिक मूल्य समाज में रहने वाले लोगों के बीच इस आधार पर एक समझौता होता है कि सभ्य समाज में क्या ठीक है और क्या ठीक नहीं है। वे समाज में ऐसे सामान्य मानक पैदा करते हैं जो इस बात की व्याख्या करते हैं कि कौन सी चीजें सामाजिक जीवन को सुंदर बना सकती हैं और कौन सी चीजें उसके नैतिक स्तर को गिरा सकती हैं। समाज में लोग जिस तरह का व्यवहार करते हैं उनके व्यवहार करने के तरीकों को मूल्य कहा जाता है। हर समाज के कुछ नैतिक लक्ष्य होते हैं जिन्हें प्राप्त करने में व्यक्तियों तथा उनके समूहों के मूल्य समाज की सहायता करते हैं। उदाहरण के लिए-जब राष्ट्रीय गीत बज रहा हो तो उसके सम्मान में खड़े हो जाना तथा अपने से आयु में बड़े लोगों को सम्मान देना आदि क्रियाओं के मूल में सांस्कृतिक मूल्य ही होते हैं। स्कैफेर तथा लम्म (1999) दुनिया के एक छोटे से देश पापुआ की संस्कृति का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि वहां सार्वजनिक हित के लिए किए जाने वाले कार्यों को व्यक्तिगत हितों के लिए किए जाने वाले कार्यों की तुलना में श्रेष्ठ माना जाता है। ऐराशोव एवं सिंह (2006) कहते हैं कि परिवार, संबंधी तथा पुरानी पीढ़ियां किसी संस्कृति के लिए सांस्कृतिक मूल्यों की पृष्ठभूमि तैयार करते हैं।

प्रतिबंध एवं स्वीकृति

जो व्यवहार समाज के लिए अच्छे नहीं होते समाज उनकी स्वीकृति नहीं देता और ऐसे व्यवहारों के लिए संबंधित व्यक्तियों को किसी न किसी रूप में दंडित किया जाता है। जो व्यवहार समाज के अनुकूल होते हैं उनके लिए व्यवहार करने वालों को पुरस्कृत भी किया जाता है। इस प्रकार प्रतिबंधात्मक तथा स्वीकारात्मक दोनों ही रूपों में मनुष्य के व्यवहारों को समाज में देखा जाता है। जो व्यवहार नैतिक स्तर पर खरे उतरते हैं तथा समाज के लिए सहयोगी होते हैं उनके लिए लोगों को पुरस्कृत किया जाता हैं परंतु जो सांस्कृतिक मान्यताओं के विरुद्ध व्यवहार करते हैं उन पर जुर्माना किया जा सकता है या उनके लिए उन्हें जेल भी भेजा जा सकता है। स्कैफेर तथा लम्म (1999) कहते हैं कि किसी संस्कृति की मान्यताएं तथा उनमें किन कार्यों के लिए लोगों को पुरस्कृत किया जाता है और किन के लिए दंडित, यह बताते हैं कि किसी संस्कृति के मूल्य और उसकी प्राथमिकताएं क्या है। सबसे अधिक महत्व के सांस्कृतिक मूल्यों का अनुवीक्षण इस दृष्टि से अधिक गंभीरता से किया जाता है कि वे पुरस्कार के योग्य हैं अथवा प्रतिबंधों के। जबकि कम महत्व के मामलों को हल्के से लिया जाता है अथवा उन पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता।

7.7 संस्कृति एवं सभ्यता

संस्कृति और सभ्यता प्रायः एक दूसरे के विरोधी समझे जाते हैं। प्रसिद्ध विद्वान ऑगबर्न तथा निम्कॉफ (1947) के अनुसार सभ्यता संस्कृति का अगला चरण है। सभ्यता उच्चस्तरीय, विकसित एवं सामाजिक रूप से स्वीकृत मनुष्यों के आचरण का प्रतिनिधित्व करने वाला सुसंस्कृत संगठन है जिसमें उच्च कोटि के सांस्कृतिक मूल्य समाहित हैं। जब मानव समाज सामाजिक एवं राजनैतिक रूप से विकास के उच्च सोपानों पर पहुंच जाता है तो उसे सभ्य समाज कहा जाता है। उसके इस गुण व स्तर को सभ्यता कहते हैं। संस्कृति मनुष्य के आंतरिक स्तरीकरण एवं आंतरिक उपलब्धियों का संचय है जबकि सभ्यता मनुष्य के बाह्य

स्तरीकरण एवं उपलब्धियों का प्रतिनिधित्व करती है। सभ्यता संस्कृति का भौतिक पक्ष भी है जैसे किसी समाज की वैज्ञानिक एवं तकनीकी उपलब्धियां। मजूमदार एवं मदान (2000) के अनुसार संस्कृति मनुष्य की नैतिक, आध्यात्मिक एवं बौद्धिक उपलब्धियों का समुच्चय है। संस्कृति उसके संकेतों और प्रतीकों व मूल्यों से जानी जाती है जबकि सभ्यता संस्कृति के बाद आती है तथा मनुष्य की बाह्य उपलब्धियों से जानी जाती है। सभ्यता मनुष्य के सांस्कृतिक जीवन के उपादानों का समग्र समुच्चय है।

टॉय (2003) के अनुसार,"सभ्यता व्यक्तियों व समाज के सर्वांगीण विकास का प्रतिनिधित्व करती है और संस्कृति पर विशेष ज़ोर देती है।" संस्कृति की तुलना में सभ्यता का क्षेत्र व्यापक है क्योंकि यह मानव समाज का प्रतिनिधित्व करती है। सभ्यता का क्षेत्र बहुत बड़ा है परंतु फिर भी संस्कृति सभ्यता की तुलना में समाज में उच्च स्थान पाती है।

बोध प्रश्न

1) संस्कृति एवं समाज में क्या संबंध है? चार पंक्तियों में व्याख्या कीजिए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) सांस्कृतिक संदर्भ में मनुष्य तथा पशुओं में अंतर स्थापित कीजिए। केवल चार पंक्तियों में उत्तर दीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

7.8 सांस्कृतिक परिवर्तन

संस्कृति गतिशील है। समय-समय पर संस्कृति के तत्व बदलते रहते हैं। आधुनिकता के दौर में दुनियाभर के समाजों की संस्कृति में भारी बदलाव आया है। भोजन शैली, कपड़े पहनने के ढंग, पारिवारिक आकार एवं संगठन, शिक्षा, जातीय पहचान, धार्मिक व सांप्रदायिक पहचान आदि मामलों में नई पीढ़ी में सांस्कृतिक बदलाव देखने को मिला है। संस्कृति में परिवर्तन सामान्यतः सांस्कृतिक नवीनीकरण, सांस्कृतिक सम्मिश्रण, सांस्कृतिक विसरण, सांस्कृतिक समीकरण आदि के कारण आते हैं।

7.8.1 सांस्कृतिक नवीनीकरण

नवीनीकरण तथा नव-निर्माण का नयेपन के अवतरण से सीधा संबंध है। चाहे भौतिक पक्ष हो या कलात्मक पक्ष, कहानी सुनाने की प्रथा, नए विचार, नई-नई जानकारियां आदि। उदाहरण के लिए मंदिर की नक्काशी हो या ताजमहल के सफ़ेद संगमरमर पर की जाने वाली नक्काशी का सन्दर्भ हो या अंतरिक्ष में उपग्रह के प्रतिस्थापन का मामला, यह सब सांस्कृतिक नवीनीकरण के अंतर्गत आता है। कुछ महत्वपूर्ण मामलों में संशोधन या सामान्य समयानुसार परिवर्तन भी नवीनीकरण के अंतर्गत आता है। इस प्रकार नवीनीकरण सांस्कृतिक परिवर्तन का महत्वपूर्ण अंग है। नवीनीकरण के बिना नतो सांस्कृतिक विसरण संभव है, न सांस्कृतिक सम्मिश्रण और न ही सांस्कृतिक समीकरण।

7.8.2 सांस्कृतिक विसरण

सांस्कृतिक विसरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी संस्कृति के तत्व एक समाज से दूसरे समाज में पहुंचते हैं। यह एक प्रकार का सांस्कृतिक विस्तार है जो एक समुदाय से दूसरे समुदाय तक होता है। यातायात के साधनों तथा संपर्क के माध्यमों और लोगों के एक स्थान से दूसरे स्थान पर यात्रा करने अथवा जाकर बस जाने से बिना किसी रोक-टोक के एक समाज की संस्कृति के भोजन, वस्त्र, जीवन शैली, शिक्षा आदि से जुड़े सांस्कृतिक तत्व दूसरे समाजों में पहुंच जाते हैं।

सांस्कृतिक विसरण प्रायः दो स्तरों पर होता है- भौतिक संस्कृति का विसरण तथा अभौतिक संस्कृति का विसरण। वीलियम ऑगबर्न (1966) के अनुसार अभौतिक संस्कृति के तत्व इतनी आसानी से नहीं बदलते जितनी आसानी से कि भौतिक संस्कृति के तत्व बदल जाते हैं। अभौतिक सांस्कृतिक तत्वों के तुलनात्मक रूप से, कठिनाई से बदलने अथवा न बदल पाने की प्रक्रिया को सांस्कृतिक व्यवधान (cultural lag) कहा जाता है। उदाहरण के लिए पूर्वी दुनिया के देशों को पश्चिमी तकनीक को अपनाने में अधिक समय नहीं लगता परंतु पश्चिमी संस्कृति को आत्मसात करना उनके लिए मुश्किल हो जाता है। कुछ मामलों में तो यह संभव ही नहीं हो पाता। सांस्कृतिक व्यवधान के कारण तेजी से बदलती तकनीक के युग में सांस्कृतिक मूल्यों का न बदल पाना तनाव पैदा करता है जबकि तकनीक के स्तर पर तब तक बहुत कुछ बदल चुका होता है। इससे सामाजिक संतुलन व सामाजिक समरसता स्थापित करने में बड़ी कठिनाई आती है। सुप्रसिद्ध समाज विज्ञानी ऐमाइल दुर्खेइम के अनुसार लंबे समय तक सांस्कृतिक व्यवधान की स्थिति बनी रहे तो विभ्रमों तथा विद्रोहों की स्तिथि उत्पन्न हो जाती हैं और सामाजिक विघटन की क्रिया आरम्भ हो जाती हैं तथा आपसी समझदारी वसद्भाव को गंभीर खतरा पैदा हो जाता है।

7.8.3 सांस्कृतिक सम्मिश्रण

दो संस्कृतियों के परस्पर संपर्क में आने से सांस्कृतिक विसरण की स्थिति उत्पन्न होती है। जब दो संस्कृतियां मिलती हैं तब वे एक दूसरे से विचारों एवं मूल्यों का आदान-प्रदान करती हैं। इससे दोनों संस्कृतियों का विस्तार होता है। इस विस्तार की क्रिया को सांस्कृतिक विसरण कहा जाता है। जब एक संस्कृति दूसरी संस्कृति के प्रभाव में आकर बदलने की प्रक्रिया आरंभ कर देती है तब उसे सांस्कृतिक सम्मिश्रण कहा जाता है। इससे सांस्कृतिक स्तर पर नवीकरण भी होता है और भारी मात्रा में सांस्कृतिक तत्वों का आदान-प्रदान भी। ऐसे में अल्पसंख्यक संस्कृति अपने कुछ सांस्कृतिक तत्वों को बचा कर रख लेती है।

7.8.4 सांस्कृतिक समीकरण

सांस्कृतिक सम्मिश्रण की स्थिति में बड़ी संस्कृति प्रायः छोटी संस्कृति को निगल ही जाती है। अपने अस्तित्व को समाप्त होता देख अल्पसंख्यक संस्कृति वाले लोग अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं को इस भय से समेटने और संजोकर रखने में लग जाते हैं कि कहीं उनका सांस्कृतिक अस्तित्व ही समाप्त न हो जाए। उदाहरण के लिए विकास की बड़ी-बड़ी योजनाएं लागू की जाती हैं और बड़े- बड़े जंगल साफ किये जाने लगते हैं तो कबीलाई संस्कृति अथवा आदिवासियों की संस्कृति खतरे में पड़ने लगती है और आदिवासियों के लिए दूसरी संस्कृति वालों के साथ घुल मिल पाना मुश्किल हो जाता है। वे अपनी सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने के लिए संघर्ष करने लग जाते हैं। परन्तु धीरे धीरे वे मुख्य संस्कृति के साथ सामंजस्य बैठाना शुरू कर देते हैं। इस स्थिति को सांस्कृतिक समीकरण कहा जाता हैं

7.9 सांस्कृतिक विविधता

किसी भी समाज में प्रायः विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों वाले लोग निवास करते हैं। एक समुदाय की संस्कृति दूसरे समुदाय से भिन्न होती है और वह उसकी अलग पहचान बनाती है। पूरे समाज की संस्कृति एक व्यापक संस्कृति होती है जिसमें विभिन्न उपसंस्कृतियों व प्रतिरोधी संस्कृतियां भी समाहित रहती हैं, जो कभी-कभी सिर उठाती हैं तो समाज में सांस्कृतिक टकराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

7.9.1 उपसंस्कृतियां

किसी समाज की प्रमुख संस्कृति बहुसंख्यक लोगों की संस्कृति होती है और अल्पसंख्यकों की संस्कृति उपसंस्कृति कहलाती है। बड़ी जनसंख्या वाले देशों में प्रायः अनेक संस्कृतियों के लोग निवास करते हैं जिनमें कुछ उपसंस्कृतियां भी होती हैं।स्केफर और लेम (1999) के अनुसार उपसंस्कृति समाज की पूरी संस्कृति के एक अवयव की तरह होती है जो अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रखने के लिए सदैव संघर्ष करती सी दिखती है। इस संस्कृति के अपने कुछ औपचारिक तौर तरीके होते हैं, कुछ मूल्य होते हैं तथा कुछ ऐसी मान्यताएं भी होती हैं जिनका पालन इस संस्कृति वाले लोग सख्ती से करना चाहते हैं जिससे उनका सांस्कृतिक अस्तित्व बचा रहे। उपसंस्कृति के मूल्य एवं मान्यताएं पूरे समाज की व्यापक संस्कृति की तुलना में अधिक सख्त होते हैं। अल्प संस्कृति वाले लोगों में व्यापक संस्कृति वाले लोगों की तुलना में अपनी संस्कृति के प्रति, अपने सांस्कृतिक मूल्यों एवं मान्यताओं के प्रति पूर्वाग्रह अधिक रहता है।

अब्राहम (2006) के अनुसार उपसंस्कृतियां पूरे समाज की संस्कृति का अंग मात्र नहीं होती बल्कि वे अपने आप में सम्पूर्ण संस्कृति होती हैं जो समाज में अपनी विशिष्ट स्थिति को बनाए रखने के लिए सजग रहती हैं। उदाहरण के लिए नीलगिरि के पर्वतीय क्षेत्र की टोडा संस्कृति, केरल की नैयर और इज़ाबा संस्कृति, राजस्थान की राजपूत संस्कृति, असम की बोडो संस्कृति उपसंस्कृतियां होते हुए भी अपने आप में पूर्ण संस्कृतिया हैं। कुछ विशिष्ट संस्कृतियां व्यवसायों के आधार पर भी विकसित हो जाती हैंजैसे औद्योगिक समाज की संस्कृतियां तथा राजनैतिक दलों की संस्कृतियां। इसके अलावा कुछ विसामान्य उपसंस्कृतियां भी होती हैं जैसे अपराधियों, माफियाओं तथा नशेड़ियों की संस्कृतियां। अमेरिकन समाज में इंग्लैंड से आए अंग्रेजों की न्यू इंग्लैंड संस्कृति,साउथर्न संस्कृति तथा टेक्सॉन संस्कृति भी ऐसी ही उपसंस्कृतियां हैं। जब हम उपसंस्कृतियों की बात करते हैं तो

युवाओं की संस्कृति तथा युवाओं की उपसंस्कृति का भी जिक्र आता है। युवाओं की उपसंस्कृति का अर्थ है एक ऐसी संस्कृति जो केवल युवाओं से संबंधित होती है जिसमें उन्हें विशेष प्रकार के मूल्यों, स्तरों, व्यवहार पद्धतियों आदि का प्रशिक्षण दिया जाता है जिससे वे अपने से बड़े लोगों के समाज के बीच अपनी अलग पहचान बनाये रख सकें।

7.9.2 प्रतिरोधी संस्कृतियां

यद्यपि समाज में विभिन्न उपसंस्कृतियों का अस्तित्व रहता है परंतु इनमें से कुछ उपसंस्कृतियां जो खास वर्ग के लोगों की होती हैं, समाज की प्रमुख संस्कृतिके साथ हमेशा ताल मेल बिठाकर नहीं चलतीं। वे समाज की व्यापक संस्कृति को चुनौती देती हैंऔर कभी-कभी उनके ठीक विरुद्ध जाती हुई सी दिखती हैं। उदाहरण के लिए- डकैतों का जीवन स्तर, उनकी मान्यताएं एवं विचार पारंपरिक समाज के लोगों से बिल्कुल भिन्न होते हैं। प्रतिरोधी उपसंस्कृतियों में युवाओं की संस्कृति भी होती है जो पुरानी पीढ़ी के लोगों की संस्कृति से तालमेल बैठाना नहीं चाहते। कुछ देशों में तो युवा अपनी अलग संस्कृति बनाने में लगते दिख रहे हैं जिनमें केवल युवा ही शामिल हो सकते हैं। विभिन्न तकनीकों के विकास, राजनीति में अतिवादियों का उदय तथा हिप्पी संस्कृति आदि इसके सटीक उदाहरण है। स्कैफेर और लेम (1999) ब्रिटेन में 1968 में पैदा हुई एक नई उपसंस्कृति का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। इस सांस्कृतिक समूह में केवल वे युवा शामिल थे जो अपना सिर मुड़ा लेते थे, पूरे शरीर पर टैटू खुदवाते थे, इस्पात के नुकीले जूते पहनते थे और वे ब्रिटिश समाज की प्रमुख सांस्कृतिक धारा के प्रति विद्रोही थे। उनकी सोच में रंगभेद, लूटमार, हिंसा और हत्या जैसे मानवता विरोधी मूल्य शामिल हो गए थे। इस प्रकार की विद्रोही उपसंस्कृतियों को विसंगत अथवा विरोधी संस्कृतियां भी कहा जाता है।

7.9.3 सांस्कृतिक आघात

जब लोग किसी अपरिचित संस्कृति के संपर्क में आते हैं और उसके साथ संतुलन नहीं बैठा पाते तो वे एक प्रकार की परेशानी तथा विचलन का अनुभव करते हैं। इससे उन्हें सांस्कृतिक स्तर पर आघात पहुंचता है। हमारे समाज में बहुत सारी ऐसी उपसंस्कृतियां भी हैं जिनसे हम ठीक से परिचित तक नहीं हैं। जब हम किसी ऐसी संस्कृति के लोगों के संपर्क में आते हैं जिनका रहन-सहन, तौर-तरीके चौंकाने वाले हों तो हमें एक धक्का सा लगता है। उदाहरण के लिए जब हम किसी अन्य देश की यात्रा पर जाते हैं तो उनकी जीवनशैली और उनके तौर तरीके हमें इतने विचित्र लगते हैं कि उनके साथ हम तालमेल नहीं बिठा पाते। इस तरह की अजनबी तथा विचित्र संस्कृतियों के संपर्क में आने से जो चोट पहुंचती है उसे सांस्कृतिक आघात कहा जाता है। लोगों का यह स्वभाव होता है कि वे अपनी संस्कृति को दूसरों की संस्कृति से श्रेष्ठ मानते हैं।

7.10 सांस्कृतिक कट्टरता

विलियम ग्रैहम सुन्नेर (1906) के अनुसार जब किसी संस्कृति विशेष के लोग अपने सांस्कृतिक मूल्यों एवं मान्यताओं से बाहर आना ही नहीं चाहते हैं और दूसरों को भी उसी नजरिए से देखते हैं तथा उनसे भी वैसा ही बन जाने की अपेक्षा रखते हैं तो इस स्थिति को सांस्कृतिक कट्टरता कहा जाता है। वे अपनी मान्यताओं पर अडिग रहते हैं तथा दूसरों से अलग दिखाई पड़ते हैं। वे अपने सांस्कृतिक मूल्यों के हिसाब से ही दूसरों का मूल्यांकन करने में लगे रहते हैं। दक्षिण भारत के लोग यह मानते हैं कि उनकी संस्कृति उत्तर भारत के निवासियों की संस्कृति से श्रेष्ठ है। अनेक भू भागों के लोग अभी भी यह मानते हैं कि

अफ्रीका में पाषाण युगीन कबीलाई आदिवासी निवास करते हैं और वह एक अंधेरा महाद्वीप है। सांस्कृतिक पूर्वाग्रह की सोच से ग्रस्त लोग अपनी संस्कृति को इतना ऊंचा मानते हैं कि वे अन्य संस्कृतियों को गलत मानने लग जाते हैं। यह बात स्वीकार नहीं कर पाते कि दूसरों की संस्कृति उनकी संस्कृति से केवल अलग ही है परंतु गलत नहीं है। ऐसी सांस्कृतिक कट्टरता वाले लोग दूसरी संस्कृति वाले लोगों से डरने भी लगते हैं।

7.11 सांस्कृतिक उदारता

जब किसी संस्कृति के लोग यह मान कर चलते हैं कि दूसरी संस्कृति के लोगों का रहन सहन, उनके रीति रिवाज, उनकी संस्कृति के हिसाब से ठीक हैं भले ही वे हम से मेल नहीं खाते, तो इसे सांस्कृतिक उदारता कहते हैं। अब्राहम (2006) के अनुसार किसी संस्कृति का हर तत्व उस संस्कृति से जुड़े लोगों के अनुसार कार्य करता है। अतः विभिन्न संस्कृतियों के रीति-रिवाजों और व्यवहारों को गलत अथवा सही नहीं माना जाना चाहिए। उनका मूल्यांकन उनकी संस्कृति के अनुसार ही किया जाना चाहिए। अनेक अमेरिका निवासी इस बात पर आश्चर्य करते हैं कि भारत के किसान उन गायों का मांस क्यों नहीं खाते जो भूख से मरने पर विवश होती हैं। सांस्कृतिक उदारता कभी-कभी उस सीमा तक पहुंच जाती है कि वह सांस्कृतिक पूर्वाग्रह की विरोधी दिखने लगती है और दूसरी संस्कृतियों को अपने से उच्च मानने लगती है।

7.12 बहुसंस्कृतिवाद

जाति, धर्म, भाषा आदि के आधार पर विकसित कुछ संस्कृतियां ऐसी भी होती हैं कि जिन के नैतिक मूल्य एवं मान्यताएं उन्हें दूसरों से अलग करते हैं। जब इस प्रकार की संस्कृतियों के लोग किसी अन्य देश अथवा समाज में निवास करते हैं तो उन्हें सांस्कृतिक विभिन्नताओं के बावजूद एक दूसरे के साथ तालमेल बिठाना पड़ता है और एक दूसरे के सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति सम्मान व स्वीकार की भावना पैदा करनी पड़ती है। किसी समाज में मौजूद ऐसी सांस्कृतिक स्थिति को बहुसंस्कृतिवाद कहा जाता है। इस प्रकार दो या दो से अधिक संस्कृतियों के मिलने और उससे उत्पन्न होने वाली सांस्कृतिक स्थिति को बहुसंस्कृतिवाद कहा जाता है।

किमलिका (2012) के अनुसार बहुसंस्कृतिवाद एक वैधानिक एवं राजनैतिक समायोजन है। उनके अनुसार पश्चिम में बहुसंस्कृतिवाद का जन्म पुरातन सांस्कृतिक प्रारूपों एवं रंगभेद अथवा नस्लवाद की अनुवांशिक परंपराओं के स्थान पर आधुनिक लोकतांत्रिक नागरिकों के उदार एवं प्रगतिशील विचारों को स्थापित करने के प्रयासों के परिणामस्वरूप हुआ है। अब्राहम (2006) के अनुसार जब विभिन्न संस्कृतियों के लोग किसी देश अथवा समाज में एक साथ निवास करते हैं तो उनकी संस्कृतियों के आपस में मिलने जुलने से उनके बीच एक आपसी समझ विकसित होती है और एक दूसरे के सांस्कृतिक मूल्यों एवं मान्यताओं के प्रति आदर व स्वीकार का भाव उत्पन्न हो जाता है। बहुसंस्कृतिवादी समाज की तुलना सलाद से भरे कटोरे से की जा सकती है। ऐसी स्थिति में विभिन्न समुदाय अपने अपने सांस्कृतिक मूल्यों को बचाए रखने के लिए उस हद तक प्रयास करते हैं कि दूसरों के साथ सांस्कृतिक टकराव की स्थिति उत्पन्न न हो, फिर भी बहुसंख्यकों की संस्कृति प्रायः अल्पसंख्यकों की संस्कृति को निगल जाती हैं अथवा यह कहें कि उन पर भारी पड़ जाती है।जब से समाज में वैश्वीकरण की स्थिति उत्पन्न हुई है तब से विभिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले लोगों की एक साथ रहने और मिलकर काम करने की संभावनाएं बढ़ती गई हैं। इससे बहुसंस्कृतिवाद अस्तित्व में आया है, और यह एक ऐसा विषय है जिस पर

आजकल खूब चर्चाएं हो रही हैं और लोग यह पूछने लगे हैं कि क्या बहुसंस्कृतिवादी समाज की अवधारणा को दुनिया भर में व्यापक रूप से स्वीकृति मिल जाएगी?

7.13 वैश्वीकरण एवं संस्कृति

सुनंदा सेन (2007) का विचार है कि,"वैश्वीकरण सीधा वैश्विक समग्रता से जुड़ा है। जब से बाजारों का अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विस्तार हुआ है तब से बाजारों ने विभिन्न राष्ट्रों व राज्यों की समस्त सीमाओं को लांघते हुए व्यापार, व्यवसाय, वित्तीय विस्तार, तकनीक, ज्ञान, संस्कृति, यहां तक कि जन आंदोलनों के माध्यम से वैश्विक अखंडता व समग्रता की स्थिति उत्पन्न कर दी है।" अब यातायात, संचार एवं संपर्क के माध्यमों के तेजी से विकसित होने के कारण विभिन्न संस्कृतियों के बीच संपर्क एवं संबंध स्थापित होना स्वाभाविक हो गया है और नए मूल्यों, विचारों व सार्थकताओं वाले लोगो के संपर्क में आने के कारण जन आंदोलनों की शैलियों का विश्व स्तर पर आदान-प्रदान संभव हो गया है। वैश्वीकरण ने अर्थव्यवस्था, राजनीति, संस्कृति आदि क्षेत्रों में महत्वपूर्ण परिवर्तनों की स्थिति उत्पन्न कर दी है।

अर्जुन अपदुरई ने वैश्विक संस्कृति के प्रवाह पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि,"वैश्विक संस्कृति पांच आयामों में प्रवाहित होती है। पर्यटकों का एक देश से दूसरे देश में जाना, एक भूभाग के लोगों का दूसरे भूभाग में पलायन, शरणार्थियों का अन्य देशों में प्रवेश तथा लोगों का व्यवसाय, रोजगार, शिक्षा आदि अनेक कारणों से एक जगह से दूसरी जगह जाना। इस सब से किसी देश की राजनीति एवं संस्कृति प्रभावित होती है। वैश्विक संस्कृति का प्रवाह चार माध्यमों से तेजी से हो रहा है। 1) तकनीकी विस्तार - वैश्वीकरण के दौर में एक देश की तकनीक राष्ट्रीय सीमाओं को लांघते हुए अनेक देशों में पहुंच रही है। यह प्रक्रिया तकनीकी विस्तार कहलाती है। 2) वित्तीय विस्तार-धन तथा वित्तीय संसाधनों का मुद्रा बाजार तथा शेयर बाजारों के जरिए वित्तीय विस्तार हो रहा है। 3) संचार माध्यमों का विस्तार-टेलीविजन, फिल्म आदि का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रसार हो रहा है जिनसे सूचनाओं का आदान-प्रदान वैश्विक स्तर पर संभव हो गया है। 4) वैचारिक विस्तार - विचारधाराओं का आदान-प्रदान अब वैश्विक हो गया है जिससे स्वतंत्रता, न्याय, अधिकार, लोकतंत्र, प्रभुसत्ता आदि संबंधी विचारों का प्रवाह वैश्विक स्तर पर होने लगा है।

7.14 संस्कृति : भारतीय सन्दर्भ

7.14.1 सांस्कृतिक विविधता

भारतीय समाज बहुआयामी एवं अत्यधिक जटिल समाज है। इसमें विभिन्न समुदायों व संस्कृतियों के लोग निवास करते हैं। एस.सी.दुबे (1990) के अनुसार भारतीय सभ्यता 5000 वर्ष पुरानी है। इतनी लंबी अवधि में भारत में विभिन्न संस्कृतियों वाले लोगों ने अनेक बार घुसपैठ की है जिनकी भाषाएं भी भिन्न-भिन्न थी। इससे भारतीय समाज में विविधता, संपन्नता एवं विशालता लगातार बढ़ती गई है। भारत में इस समय बड़ी संख्या में भाषाएं तथा बोलियां मौजूद हैं। अनेक प्रकार की आस्थाएं, अनेक प्रकार के रीति रिवाज, अनेक प्रकार की मान्यताएं तथा परंपराएं मौजूद हैं। भारत में 22 राष्ट्रीय स्तर की भाषाएं हैं तथा सौ से अधिक बोलियां हैं। भारतीय समाज वास्तव में दुनिया का एक ऐसा समाज है जिसमें सबसे अधिक धार्मिक तथा सांस्कृतिक विविधताएं मौजूद हैं। कुछ क्षेत्रों की भाषाएं और बोलियां ऐसी भी हैं जिनको अभी तक पहचाना नहीं जा सका है। अकेले नागालैंड में 19 प्रकार की भाषाएं बोली जाती हैं। भारत में जिन धर्मों के लोग निवास करते हैं उनके नाम

हैं- 1) हिन्दू धर्म 2) इस्लाम धर्म 3) ईसाई धर्म 4) सिख धर्म 5) बौद्ध धर्म 6) जैन धर्म 7) पारसी 8) यहूदी 9) बहाई धर्म। हिंदू धर्म बहुसंख्यकों का धर्म है। अन्य सभी धर्मों के लोगों की संख्या कम है। पारसी, यहूदी और बहाई धर्म के मानने वाले लोगों की संख्या तो बहुत ही कम है। हिंदू धर्म और हिंदू संस्कृति की जड़ें बहुत पुरानी हैं। हिंदू सभ्यता तथा हिंदू समाज का अस्तित्व कम से कम पिछले 5000 वर्षों से है। अन्य धर्मों व सभ्यताओं का जन्म अथवा भारत में आगमन बहुत बाद में हुआ है। भारतीय समाज के लोग विभिन्न जातियों, उपजातियों तथा वर्गों में विभाजित हैं। हर जाति की अपनी विशिष्ट मान्यताएं, परंपराएं, रीति-रिवाज हैं। भारतीय समाज तीव्र आंतरिक विरोधों तथा असमानताओं के लिए भी विशेष रूप से जाना जाता है।

एक ओर भारत में अत्यंत संपन्न निवास करते हैं जिन्हें संभ्रांत वर्ग (elite) कहा जाता है। इनकी संख्या बहुत कम है। दूसरी ओर गरीबों, पिछड़ों और मात्र मजदूरी पर निर्भर लोगों की संख्या बहुत अधिक है। इन दोनों के बीच सामान्य वर्ग के लोग भी भारतीय समाज में मौजूद हैं जिनकी संख्या बहुत बड़ी है। इन्हें मध्यमवर्ग कहा जाता है।

इसके अलावा भारत में जनजातियों के लोग भी रहते हैं जिनकी अपनी एक विशिष्ट संस्कृति है। जिनकी पहचान तथा अनुवांशिक परंपरा भी दूसरों से बिल्कुल अलग है। इन्हें प्रायः आदिवासी कहा जाता है तथा उनकी संस्कृति को कबीलाई संस्कृति कहा जाता है। इन्हीं विविधताओं के कारण भारतीय समाज में अनेक प्रकार की सांस्कृतिक परंपराएं मौजूद हैं। जैसे- शास्त्रीय, लोक तथा कबीलाई संस्कृति आदि। इन सभी परंपराओं को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता हैः लघु अथवा सामान्य परंपराएं और व्यापक अथवा विशेष परंपराएं। सुप्रसिद्ध समाज विज्ञानी रॉबर्ट रेडफील्ड ने भारतीय परंपराओं को दो वर्गों में विभाजित किया है- साधारण परंपराएं तथा विशेष परंपराएं। साधारण परंपराओं में वे परंपराएं आती है जिनका लिखित स्वरूप नहीं मिलता, वे केवल एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही हैं। विशेष परंपराएं वे परंपराएं है जिनका उल्लेख साहित्य तथा धार्मिक पुस्तकों में लिखित रूप में पाया जाता है। आधुनिक युग में ये परंपराएं भारतीय समाज में काफी हद तक टूटती दिखाई पड़ रही हैं। इसके अलावा विभिन्न परंपराओं के बीच परस्पर संबंधों में वृद्धि हुई है इससे इनके मूल स्वरूप काफी बदले हैं।

यद्यपि अब रोजगार, बाज़ार तथा संचार मीडिया व सोशल मीडिया के कारण भारत में अनेक प्रकार के परिवर्तन आ रहे हैं। स्पष्टतः भारतीय समाज दो वर्गों में विभाजित दिख रहा है, एक वर्ग में वे लोग आते हैं जो अधिक पढ़े लिखे हैं और उनका जीवन स्तर उच्च कोटि का है। दूसरे वर्ग में वे लोग आते हैं जो कम पढ़े लिखे हैं अथवा पढ़ लिख ही नहीं पाए हैं। वे मजदूरी आदि पर निर्भर करते हैं और उनका जीवन स्तर बहुत साधारण है। शिक्षा का समाज में बहुत महत्व होता है और वह जीवन स्तर को विशेष रूप से प्रभावित करती है। भारतीय समाज में जो विशेष रूप से शिक्षा प्राप्ति कर पा रहे हैं उनका वर्ग अलग है और जो सामान्य शिक्षा से ही काम चला लेते हैं उनका वर्ग अलग है। जो शिक्षा समाज के विकास में विशेष योगदान दे सकती है वहीं शिक्षा भारत में सांस्कृतिक एवं सामाजिक विभाजन का कारण बनी हुई दिख रही है। पियरी बोर्डयू (1986) इस स्थिति को सांस्कृतिक श्रेष्ठता (cultural capital) की संज्ञा देता है। भारतीय समाज में केवल धार्मिक आधार पर ही सांस्कृतिक विविधता की स्थिति नहीं है, अपितु भौगोलिक विभिन्नताओं के कारण भी भाषाओं, व्यवहारों, क्रियाकलापों, मनोरंजन के साधनों आदि की विविधताओं की वजह से भी भारत में सांस्कृतिक विविधता की स्थिति बनी हुई है।

7.14.2 सांस्कृतिक एकता एवं अखंडता

संस्कृति विशेषज्ञ एस सी दुबे का विचार है कि इतनी सारी व्यवस्थाओं के बावजूद भारतीय समाज की खूबसूरती यह है कि यहां विविधताओं में भी एकता समाहित है। भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है जिसका संविधान यह गारंटी देता है कि भारत में रहने वाले सभी लोगों की धार्मिक व सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखा जाएगा। संस्कृति के विभिन्न घटकों- धर्म, संगीत, साहित्य, कला, स्थापत्य कला, चित्रकला, नृत्य कला, नाट्य कला, रीति-रिवाज तथा परंपराएं एवं मान्यताएं सभी का भारत की अखंडता में योगदान है। इसका अर्थ यह भी नहीं है कि भारतीय समाज के सामने समस्याएं नहीं आतीं। अनेक समस्याएं तो इसी दशक में सामने आई है जैसे सांस्कृतिक आंदोलन, धार्मिक कट्टरता, भाषाई संघर्ष, आंचलिकता आदि के आधार पर अनेक विवाद सामने आए हैं। भारत पर अनेक बार विदेशी आक्रमण हुए हैं। इससे यहां के समाज को अनेक प्रकार की आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक समस्याओं का सामना करना पड़ा है। इतनी सारी विसंगतियों व उथल-पुथल के बावजूद भारत के विकास में उदारवाद, निजीकरण तथा वैश्वीकरण का विशेष योगदान रहा है और भारतीय समाज कभी टूटा नहीं। यह कहा जा सकता है कि अनेकानेक विविधताओं, विरोधों व असंतोषों का सामना करते हुए भारत की विशेष संस्कृति ने भारत की एकता को आघात नहीं पहुंचने दिया है और यह साबित कर दिया है कि भारतीय संस्कृति भारतीय समाज की एक प्रबल धुरी है।

बोध प्रश्न

1) सांस्कृतिक परिवर्तन के लिए जिम्मेदार विभिन्न कारणों का उल्लेख कीजिए? उत्तर केवल 4 पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) सांस्कृतिक विविधता से आप क्या समझते हैं? भारतीय समाज में इतना विविध क्यों है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

7.15 सारांश

संस्कृति और समाज का आपस में गहरा संबंध है। समाज का स्वरूप व्यापक है और संस्कृति उसका एक अंश है। समाज व्यक्तियों तथा उनके अनेक समूहों व समुदायों से मिलकर बनता है। संस्कृति मनुष्यों की विभिन्न व्यवहार पद्धतियों, उनके समस्त क्रियाकलापों, विचारों, विश्वासों, दृष्टिकोणों तथा मनुष्य सुलभ सभी विशेषताओं से मिलकर बनती है। संस्कृति के बारे में दुनिया भर के विद्वानों ने अनेकानेक व तरह-तरह के विचार व्यक्त किए हैं क्योंकि विभिन्न समाजों की संस्कृतियां भिन्न-भिन्न होती हैं।

यद्यपि पशु पक्षी व अन्य जीव भी अपने वातावरण के प्रति अनुकूलता विकसित कर लेते हैं परंतु मनुष्यों की अनुकूलता विकसित करने की पद्धतियाँ पशुओं के तरीकों से बिल्कुल अलग है। यही कारण है कि जीव विज्ञान और संस्कृति एक दूसरे से बहुत अलग हैं।

संस्कृतियां भाषाओं के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाई जाती रहती हैं। संस्कृति का आदान-प्रदान रीति-रिवाज़ों, विश्वासों, मान्यताओं, मूल्यों, वर्जनाओं, नियमों, संस्थानों आदि के माध्यम से होता है। इस प्रकार संस्कृति सामाजिक है, प्रतीकात्मक है तथा गतिशील है। संस्कृति के विशिष्ट तत्व है भाषा, रीति-रिवाज, विश्वास, मान्यताएं, वर्जनाएं, मूल्य एवं नियम। सभी संस्कृतियों की आधारभूत संरचना होती है जैसे सांस्कृतिक लक्षण, सांस्कृतिक स्वरूप, सांस्कृतिक क्षेत्र आदि जो समाज में आपसी संपर्क को बढ़ावा देने में सहयोग करते हैं तथा सभ्यताओं को संस्कृति से अलग करते है। सभ्यता संस्कृति के बाद की अवस्था है।

संस्कृति गतिशील है और इसी लिए यह बदलती भी रहती है। इसके बावजूद संस्कृति के अंदर एक स्थायित्व भी है जो उसकी अलग पहचान को बनाए रखता है और उसके कारण एक संस्कृति लंबे समय तक दूसरी संस्कृति से अलग-थलग रह सकती है। जब संस्कृतियां एक दूसरे के संपर्क में आती हैं तो उनमें नवीनीकरण, सम्मिश्रण, विसरण तथा समीकरण आदि क्रियाओं के कारण परिवर्तन आते हैं।विविधिता का गुण भी संस्कृति के मूल में निहित रहता है। सांस्कृतिक विविधता की प्रवृत्ति पाषाण कालीन समाज में भी देखने को मिलती है और तथाकथित आधुनिक समाज में भी।

सांस्कृतिक विविधता की दृष्टि से देखें तो भारतीय समाज इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। सांस्कृतिक विविधता भारत को विश्व भर के देशों में विशेष स्थान प्रदान करती है। यह भारत की पहचान बन चुकी है। यहां यह उल्लेख करना भी जरूरी है कि हर समाज में एक प्रमुख संस्कृति होती है और उसके नीचे अनेक उपसंस्कृतियां तथा प्रतिरोधी संस्कृतियां भी अपना अस्तित्व बनाए रखती हैं। यदि मुख्य संस्कृति अपनी सह संस्कृतियों के साथ समरसता स्थापित करने में असफल हो जाती है तो समाज में सांस्कृतिक टकराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

हर संस्कृति की अपनी एक खास विशेषता होती है। मनुष्य का स्वभाव है कि जब वे दूसरी संस्कृतियों वाले लोगों के संपर्क में आते हैं तो अक्सर अपनी संस्कृति को दूसरों की संस्कृ ति से श्रेष्ठ मानते हैं। सांस्कृतिक विविधता तथा सांस्कृतिक विशेषता के बावजूद विभिन्न संस्कृतियों वाले लोग एक दूसरे के संपर्क में आते हैं और साथ-साथ रहते भी हैं, जिससे बहुसंस्कृतिवादी समाज का जन्म होता है। संस्कृतियों के कुछ मूल्य तथा उनकी कुछ विशेषताएं होती हैं जो समाज में सांस्कृतिक एकता एवं अखंडता की स्थिति स्थापित करने में सहयोग करती है।

आधुनिक वैश्वीकरण के युग में वैश्विक संस्कृति का प्रवाह होने लगा है और इसका परिणाम यह हो रहा है कि दुनिया के लगभग सभी देशों के लोग अपने सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों को त्यागते हुए वैश्विक एवं मानवीय संस्कृति को स्वीकार करते जा रहे हैं।

7.16 सन्दर्भ

अब्राहम, एम.एफ. (2006). कंटेम्पररी सोशियोलॉजीः ऐन इंट्रोडक्शन तो कॉन्सेप्ट्स एंड थ्योरी. दिल्लीः ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

अप्पादुरई, ए (1996). मॉडर्निटी एट लार्जः कल्चरल डायमेंशन ऑफ़ ग्लोबलाइज़ेशन. लंदनः यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिनेसोता प्रेस।

बोर्दियू, पी (1986). द फॉर्म्स ऑफ़ कैपिटल इन इमरे सज़मान एंड टिमोथी कपोसी (एड्स) कल्चरल थ्योरीः ऐन अन्थोलॉजी।

बुरावय, एम., एंड लुकास, जे. (1992). द रेडियन पास्टः आइडियोलॉजी एंड रियलिटी इन हंगरीस रोड टू कैपिटलिज्म. यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस।

डूब, एस. सी. (1990). इंडियन सोसाइटी. नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट।

दुर्खेइम, ई. (2003). अनोमिए. की आइडियाज इन सोशियोलॉजी, 22-26।

ऐरसोव, बी.एस., एंड सिंह, व्हाई. (1991). द सोशियोलॉजी ऑफ़ कल्चर. प्रोग्रेस पब्लिशर्स।

ग्राम्स्की, ऐ, एंड होअरे, क्यू. (1971). सेलेक्शंस फ्रॉम द प्रिजन नोटबुक्स (वॉल. 294). लंदनः लॉरेंस एंड विशारत।

गिड्डेन्स, ऐ.,एंड सुत्तोंन, पी. डब्लू. (2014). एसेंशियल कॉन्सेप्ट्स इन सोशियोलॉजी. पॉलिटी प्रेस।

ग्रीन, ए. डब्लू (1964). सोशियोलॉजी; ऐन एनालिसिस ऑफ़ लाइफ इन मॉडर्न सोसाइटी. मक्ग्रॉ-हिल।

हरलामबोस, म. एच. घ्म एंड हेल्ड, आर.(2006). सोशियोलॉजीः थीम्स एंड पर्सपेक्टिव्स. नई दिल्लीः ओयुपी।

जॉनसन, एच. एम. (1960). सोशियोलॉजीः ए सिस्टेमेटिक इंट्रोडक्शन. अलाइड पब्लिशर्स।

जोसफ, ऐस.(1998). इंटररॉगटिंग कल्चर क्रिटिकल पर्सपेक्टिव्स ऑन कंटेम्पररी सोशल थ्योरी, सेजः नई दिल्ली।

कैमलिका, विल (2012). मल्टीकल्चरलिस्मः सक्सेस, फेलियर एंड द फ्यूचर. यूरोपः माइग्रेशन पालिसी इंस्टिट्यूट।

लिंटन, आर (1955). द ट्री ऑफ़ कल्चर. न्यू यॉर्कः अल्फ्रेड ए. क्नोप्फ़।

मजूमदार, डी. ऐन., एंड मदन, टी. ऐन. (2008). ऐन इंट्रोडक्शन टू सोशल एंथ्रोपोलॉजी. नॉएडाः मयूर पेपरबैक्स।

मेरटोन, आर. के. (1996). ऑन सोशल स्ट्रक्चर एंड साइंस. यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस।

मुरडॉक, जी. पी. (1965). कल्चर एंड सोसाइटीः ट्वेंटी-फोर एसेज. यूनिवर्सिटी ऑफ़ पिट्सबर्ग प्रेस।

ऑगबर्न, डब्ल्यू.एफ़ (1966). सोशल चेंज विद रेस्पेक्ट टू कल्चर एंड ओरिजिनल नेचर. ऑक्सफ़ोर्ड इंग्लैंडः डेल्टा बुक्स।

ऑगबर्न, डब्ल्यू. एफ़ एंड निमकॉफ, एम. घ्फ़. (1947). ए हैंडबुक ऑफ़ सोशियोलॉजी।

पारसंस, टी. (1972). कल्चर एंड सोशल सिस्टम रीविसिटेड. सोशल साइंस क्वार्टरली, 253-266 रोबर्ट, एस. एल., सुथरलैंड, जे. एल. डब्ल्यू., एंड मिल्टन, ए. एम. (1961). इंट्रोडक्टरी सोशियोलॉजी। स्कैफेर, आर. टी., एंड लेम, आर. (2000). सोशियोलॉजीः ए ब्रीफ इंट्रोडक्शन. मक्ग्रॉ-हिल.।

सेन, ऐस. (2007). ग्लोबलाइजेशन एंड डेवलपमेंट. न्यू दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट।

समनेर, डब्ल्यू. जी. (2013). फोल्कवैस-ए स्टडी ऑफ़ द सोशियोलॉजिकल इम्पोर्टेंस ऑफ़ उसगेस, मैनर्स, कस्टम्स, मोर्स एंड मॉरल्स. रीड बुक्स लिमिटेड।

तै, ई. (2003). रिथिंकिंग कल्चर, नेशनल कल्चर, एंड जैपनीज़ कल्चर. जैपनीज़ लैंग्वेज एंड लिटरेचर, 37(1), 1-26।

टॉयलर, एडवर्ड बी. (1871). प्रिमिटिव कल्चरः रिसर्चेस इनटू द डेवलपमेंट ऑफ़ माइथोलॉजी, फिलॉसोफी, रिलिजन, लैंग्वेज, आर्ट एंड कस्टम. लंदनः जॉन मुर्रे, अलबेमर्ले स्ट्रीटद्य।

वॉर्स्ली, पीटर (1970) इंट्रोडूसिंग सोशियोलॉजी. पेंगुइन बुक्सः यू.एस.ए.।

इकाई 8 सामाजिक समूह और समुदाय*

संरचना

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 समुदाय की परिभाषाएं

8.3 समुदाय की विशेषताएं

8.4 सामुदायिक भावना के तत्व

8.5 सामुदाय और संघ

8.6 सामाजिक समूह की परिभाषा

8.7 समूह वर्गीकरण के आधार

8.7.1 प्राथमिक और गौण समूह

8.7.2 जेमिन्सचाफ्ट और जेसेलशाफ्ट

8.7.3 आतंरिक समूह और बाह्य समूह

8.7.4 सन्दर्भ समूह

8.8 सामाजिक समूह और सामुदायिक मतभेद

8.9 सारांश

8.10 संदर्भ

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जानेंगे :

- समुदाय की परिभाषा देना;
- समुदाय के आधार और तत्वों की पहचान करना;
- समुदाय और संघ के बीच संबंधों का वर्णन करना;
- समुदाय की विशेषताओं पर चर्चा करना;
- सामाजिक समूहों और उनके विभिन्न वर्गीकरणों का वर्णन करना;
- सामाजिक समूह की प्रमुख अवधारणा को समझना;
- सामाजिक समूहों की प्रकृति और प्रकारों का वर्णन करना;
- सामाजिक समूहों के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करना;

8.1 प्रस्तावना

जहां भी किसी समूह के सदस्य छोटे या बड़े इस तरह से रहते हैं कि वे इस या उस हित में नहीं बल्कि आम जीवन की बुनियादी स्थितियों को साझा करते हैं, हम उस समूह को एक समुदाय कहते हैं। एक समुदाय अनिवार्य रूप से सामाजिक जीवन का एक क्षेत्र है। यह कुछ हद तक सामाजिक समन्वय द्वारा चिह्नित किया जाता है। इस प्रकार, समुदाय अंतः

*रुक्मिणी दत्ता,शोधार्थी,इग्नू

स्थापित संबंधों का एक चक्र है। एक समुदाय की सीमाओं के भीतर सदस्य अपने आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षणिक और अन्य गतिविधियों को ले जा सकते हैं। इसलिए समुदाय एक निर्धारित सामाजिक स्थान के भीतर सामाजिक जीवन का कुल संगठन है; जैसे कि गांव, जनजाति, शहर, जिला।

समूह का अर्थ उन मनुष्यों का संग्रह है जिनके पूर्ण एक दूसरे के साथ सामाजिक संबंध हैं। सामाजिक संबंध में पारस्परिकता के साथ-साथ पारस्परिकता के बारे में जागरूकता शामिल है। इस मानदंड के आधार पर, आबादी के उन हिस्सों में से कई जिन्हें कभी-कभी सामाजिक समूह नाम दिया जाता है, वे नहीं भी हो सकते हैं। सामान्य समझ के लिए हम दो या दो से अधिक व्यक्तियों के किसी भी संग्रह को समूह मानते हैं, जिनके सदस्य एक दूसरे के साथ व्यक्तिगत तरीके से पहचान करते हैं और बातचीत करते हैं। कुछ समूहों का छोटा आकार (अक्सर 15-20 से अधिक लोग) सभी सदस्यों को साझा मूल्यों और मानदंडों की सहायता से संपर्क करने और बातचीत करने में सक्षम बनाता है। नतीजतन, समूह के सदस्य अपने बीच और समूह के साथ मजबूत अंतर-व्यक्तिगत बंधन महसूस करते हैं। समकालीन समाजों में अनगिनत प्रकार के समूह हैं, जिनमें परिवार, दोस्तों के गुट, कार्य दल, किशोर गिरोह, खेल दल, जूरी, रैप समूह और सभी प्रकार की समितियां शामिल हैं। हम सभी ऐसे कई सामाजिक समूहों के सदस्य हैं जो हमारी दैनिक गतिविधियों को प्रभावित या आकार देते हैं। परिवार हमारे अधिकांश जीवन में एक अत्यंत महत्वपूर्ण समूह है, क्योंकि प्रेम और स्नेह, प्रतिबद्धताएं, विवाह और संबंधों के बंधन हमें परिवार के भीतर निकटता से जोड़ते हैं। यहां तक कि अगर हम भी अपने परिवार के सभी सदस्यों के साथ नहीं रहते हैं या दैनिक आधार पर उनके साथ बातचीत नहीं करते हैं, तो भी हम आम तौर पर पत्र, फोन कॉल और मिलने के माध्यम से इन पारस्परिक संबंधों को बनाए रखते हैं। समूह को प्राथमिक या गौण के रूप में वर्गीकृत करना उनके सामाजिक संबंधों की गहराई और समावेश को इंगित करने का एक सुविधाजनक तरीका है।

8.2 समुदाय की परिभाषाएं

1) बोगार्डस के मुताबिक, समुदाय एक सामाजिक समूह है जिसमें 'हम अपनापन महसूस करते हैं' और 'किसी दिए गए क्षेत्र में रहते हैं।

2) किंग्सले डेविस के लिए, समुदाय सबसे छोटा क्षेत्रीय समूह है जो सामाजिक जीवन के सम्मिलित कर सकता है।

3) गिन्सबर्ग समुदाय को सामाजिक जीवन के एक समूह के रूप में परिभाषित करते हैं जिसमें सभी अनंत विविधता और संबंधों की जटिलता शामिल होती है, जो उस सामान्य जीवन के परिणामस्वरूप होती है।

8.3 समुदाय की विशेषताएँ

सभी समुदायों को आत्मनिर्भर होने की आवश्यकता नहीं है। कुछ समुदाय सभी समावेशी और दूसरों से स्वतंत्र हैं। आदिम लोगों में, सौ से अधिक व्यक्तियों के कुछ समुदाय, (उदाहरणः यूएसए की युरोक जनजाति) जो लगभग अलग-थलग हैं। लेकिन आधुनिक समुदाय, विशेष रूप से बड़े समूह बहुत कम आत्म-निहित हैं। रिश्तेदारी और पारिवारिक संबंधों के बजाय आर्थिक और राजनीतिक निर्भरता, हमारे आधुनिक समुदायों की एक प्रमुख विशेषता है। इसके अलावा, एक समुदाय में निम्नलिखित विशेषताएं हैंः

1) निश्चित क्षेत्र

2) जनसंख्या

3) सामाजिक संबंध

4) सांस्कृतिक समानता

5) हम अनुभव

6) संगठित अन्तःक्रिया

महान और छोटे समुदाय

राष्ट्र और विश्व के आयामों तक समुदाय के विस्तार के बावजूद, छोटे समुदाय अभी भी व्यवहार्य इकाइयों के रूप में बने हुए हैं। राष्ट्र या विश्व राज्य गाँव या पड़ोस को खत्म नहीं करते हैं, हालाँकि उनके चरित्र को बदला जा सकता है। सामाजिक प्राणी के रूप में, हमें समुदाय के छोटे और साथ ही बड़े क्षेत्रों की आवश्यकता है। महान समुदाय हमें अवसर, स्थिरता, अर्थव्यवस्था, समृद्ध विविध संस्कृति के प्रति निरंतर प्रोत्साहित करती है। लेकिन छोटे समुदाय में रहते हुए हम निकट, अधिक अंतरंग संतुष्टि पाते हैं। बड़ा समुदाय शांति और सुरक्षा, देशभक्ति और कभी-कभी युद्ध, ऑटोमोबाइल और रेडियो प्रदान करता है। छोटा समुदाय दोस्त और दोस्ती, गपशप और सामना करने के लिए प्रतिद्वंद्विता, स्थानीय गर्व और निवास प्रदान करता है। दोनों पूर्ण जीवन प्रक्रिया के लिए आवश्यक हैं।

समुदाय के मामले

एक समुदाय का चिह्न यह है कि किसी का जीवन उसके भीतर पूर्ण रूप से व्यतीत हो सकता है। कोई व्यक्ति व्यावसायिक संगठन या एक चर्च के भीतर पूरी तरह से नहीं रह सकता है; एक जनजाति या एक शहर के भीतर पूरी तरह से रह सकते हैं। तब समुदाय की बुनियादी कसौटी यह है कि किसी के सभी सामाजिक संबंध इसके भीतर पाए जा सकते हैं। समुदाय तब सामाजिक जीवन का एक क्षेत्र है जो कुछ हद तक सामाजिक सुसंगतता द्वारा चिह्नित है। समुदाय के आधार हैं। 1) स्थानीयता और 2) सामुदायिक भावना।

1) **स्थानीयता:** एक समुदाय हमेशा एक भौगोलिक क्षेत्र पर कब्जा कर लेता है। स्थानीयता समुदाय का भौतिक आधार है। उदाहरण के लिए, एक घुमंतू समुदाय, जिप्सी का एक बैंड, के पास स्थानीय किंतु परिवर्तित निवास स्थान है। हर क्षण, इसके सदस्य पृथ्वी की सतह पर एक निश्चित स्थान पर एक साथ रहते हैं। अधिकांश समुदाय बस गए हैं और भौतिक निकटता से एकजुटता का एक मजबूत बंधन प्राप्त करते हैं। लोगों का एक समूह केवल तब एक समुदाय बनाता है जब वे एक निश्चित इलाके में निवास करना शुरू करते हैं। समाज के विपरीत, एक समुदाय, एक हद तक, स्थानीय रूप से सीमित है। साथ रहने से लोगों को सामाजिक संपर्क विकसित करने में सुविधा होती है, सुरक्षा, संरक्षा और संरक्षण मिलता है। अधिकांश समुदाय बसते हैं और अपने इलाके की स्थितियों से एकजुटता का मजबूत बंधन बनाते हैं। हालाँकि, कुछ हद तक इस स्थानीय बंधन को आधुनिक दुनिया में संचार की फैली सुविधाओं से कमजोर कर दिया गया है; यह मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी ढांचे के प्रवेश से विशेष रूप से स्पष्ट है। लेकिन संचार का विस्तार स्वयं एक बड़े किंतु क्षेत्रीय समुदाय की शर्त है।

2) **सामुदायिक भावना:** विशिष्ट स्थानीय क्षेत्रों में रहने वाले लोग जिनमें सामाजिक सामंजस्य की कमी होती है, उन्हें आज की दुनिया में सामुदायिक चरित्र प्रदान करना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, एक वार्ड या जिले या बड़े शहर के निवासियों को क्षेत्र के साथ जागरूक पहचान स्थापित करने के लिए पर्याप्त संपर्क या सामान्य हितों की कमी हो सकती है। ऐसा 'पड़ोस' एक समुदाय नहीं है क्योंकि इसमें अपनेपन की

भावना नहीं होती है - इसमें सामुदायिक भावना का अभाव होता है। स्थानीयता हालांकि एक आवश्यक शर्त है, किंतु एक समुदाय बनाने के लिए पर्याप्त नहीं है। एक समुदाय निस्संदेह एक सामान्य जीवन है। सामुदायिक भावना का अर्थ है एक साथ होने की भावना। सदस्यों में 'हम-भावना' विकसित होती है। इसका मतलब है समूह के साथ एक तरह की पहचान। पहचान की भावना के बिना, जागरूकता की भावना, जीवन जीने की भावना और जीवन में कुछ सामान्य हितों को साझा किए बिना कोई समुदाय नहीं हो सकता है।

8.4 सामुदायिक भावना के तत्व

1) **हम-भावनाः** यह वह भावना है जो पुरुषों को दूसरों के साथ खुद की पहचान करने के लिए प्रेरित करती है ताकि जब वे "हम" कहें तो भेद का कोई विचार नहीं है और जब वे कहते हैं "हमारा" तब विभाजन का विचार नहीं आता है। यह 'हम-भावना' पायी जाती है जहां पुरुषों की समान रुचि होती है, और इस प्रकार पूरे समूह के जीवन में, लेकिन यह कहीं अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट होता है जहाँ क्षेत्रीय समुदाय में जहाँ रुचि होती है।

2) **भूमिका की भावनाः** यह भावना व्यक्ति की ओर से पूरे जीवन में अधीनता को सम्मिलित करती है, जीवन के दैनिक अनुशासन में प्रशिक्षण और अभ्यारस से उत्पन्न होती है, जिससे कि हर व्यरक्ति को लगता है कि उसे एक भूमिका निभानी है, जिसे पूरा करने का उसका अपना कार्य है। सामाजिक परिदृश्य के पारस्परिक आदान-प्रदान में अपनी भूमिका निभानी पड़ती है।

3) **निर्भरता की भावनाः** यह समुदाय पर निर्भरता की व्यक्तिगत भावना को अपने जीवन की एक आवश्यक शर्त के रूप में संदर्भित करता है। इसमें शारीरिक निर्भरता दोनों शामिल हैं, क्योंकि उसकी/उसका भौतिक जरूरत उसके पूरा करता हो और एक मनोवैज्ञानिक निर्भरता हो, क्योंकि समुदाय एक बड़ा "घर" है जो उसे/उसके लिए जीवन निर्वाह करता है, उसे भी आत्मसात करते हुए जिसमें वह कम से कम परिचित है, अगर यह पूरी तरह से उसके जीवन के अनुकूल नहीं भी है। समुदाय अकेलेपन और डर के लिए आश्रय है, जो उस व्यक्ति अलगाव के साथ होता है जो हमारे आधुनिक जीवन की विशेषता है।

समुदाय का मानदंड

हम, ज्यादातर, एक बहुत छोटे समुदाय के सदस्य हैं, हालांकि हम बड़े शहरों में रह सकते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारे हितों को एक संकीर्ण क्षेत्र में काट दिया जाता है। इसके विपरीत, हम एक गाँव में रह सकते हैं और फिर भी एक ऐसे समुदाय से संबंधित हो सकता हैं जो हमारी सभ्यता के पूरे क्षेत्र में है या कि व्यापक है। किसी भी सभ्य समुदाय, जैसा कि मैकाइवर बताते हैं, चारों ओर 'दीवारें' नहीं होती जो इसे पूरी तरह से काट देती हैं, जो भी इस देश के शासकों द्वारा तैयार किया जा सकता है। समुदाय बड़े समुदायों के भीतर मौजूद होती हैंः एक क्षेत्र के भीतर शहर, एक राष्ट्र के भीतर क्षेत्र और विश्व समुदाय के भीतर राष्ट्र जो फिर से विकास की प्रक्रिया में है।

एक समुदाय तब सामाजिक जीवन का एक क्षेत्र है जो कुछ हद तक सामाजिक सुसंगतता द्वारा चिह्नित है। मैकाइवर के अनुसार, एक समुदाय का चिह्न यह है कि किसी का जीवन उसके भीतर पूर्णतः जीवंत हो सकता है। एक चर्च के एक व्यावसायिक संगठन के भीतर

पूरी तरह से पंक्तिबद्ध नहीं किया जा सकता है; कोई पूरी तरह से एक जनजाति या एक शहर के भीतर ही रह सकता है।।

कुछ सवाल उठ सकते हैं जैसे, कुछ हालत में कुछ लोग लंबे समय तक इकट्ठा होते हैं, फिर इस सभा को समुदाय कहा जाएगा या नहीं? ऊपर दिए गए शर्त के बारे में प्रश्नों के तीन सेट दिए गए हैं। इन सवालों के बीच पहले दो को सकारात्मक जवाब मिलता है जबकि आखिरी को नकारात्मक -

1) क्या हम अपने अर्थ में मठ या कॉन्वेंट या किसी जेल को समुदाय कहेंगे? ये प्रतिष्ठान क्षेत्रीय रूप से आधारित हैं और वे वास्तव में सामाजिक जीवन के क्षेत्र हैं। हालांकि, कई, निवासियों के कार्यों की सीमित सीमा के कारण उन्हें सामुदायिक स्थिति से वंचित करेंगे। लेकिन क्या मानवीय कार्य हमेशा एक समुदाय के स्वभाव से सीमित होते हैं? हमें इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक रूप में देना चाहिए।

2) क्या हम अप्रवासी समूहों को समुदाय कहेंगे , जो बड़े अमेरिकी शहरों के बीच में अपने स्वयं के रीति-रिवाजों को पालते हैं और अपनी भाषा, बोलते हैं? मैकाइवर के अनुसार ऐसे समूह स्पष्ट रूप से आवश्यकताओं के अधिकारी हैं।

3) क्या हम सामाजिक जाति को जिसके सदस्य अपने साथी नागरिकों को अधिक घनिष्ठ सामाजिक संबंधों, से बाहर करते हैं, समुदाय कहेंगे? यहां नकारात्मक उत्तर अधिक उपयुक्त है, क्योंकि हमारी परिभाषा को पूरा करने के लिए, समुदाय समूह को स्वयं किसी विशेष स्थान को ग्रहण करना चाहिए। एक सामाजिक जाति में सामाजिक सामंजस्य होता है, इसमें कोई संदेह नहीं है, लेकिन इसमें समुदाय के क्षेत्रीय आधार का अभाव है।

निष्कर्ष के रूप में, समुदाय को निम्नलिखित तरीकों से परिभाषित किया गया है -

क) लोगों का समूह।

ख) एक भौगोलिक क्षेत्र के भीतर।

ग) विशेष और अन्योन्याश्रित कार्यों में श्रम के विभाजन के साथ।

घ) एक सामान्य संस्कृति और एक सामाजिक व्यवस्था के साथ जो उनकी गतिविधियों का आयोजन करती है।

ङ) जिनके सदस्य अपनी एकता के प्रति सचेत है और समुदाय से संबंधित हैं।

च) जिसके सदस्य संगठित रूप से कार्य कर सकते हैं।

8.5 समुदाय और संघ

सामाजिक समूहों के सबसे महत्वपूर्ण विभाजनों में से एक संघ है। एक संघ एक विशिष्ट उद्देश्य या सीमित संख्या में उद्देश्यों के लिए एकजुट लोगों का एक समूह है। ऐसी सेना या स्कूल है, जिसका उद्देश्य राष्ट्र की रक्षा करना या ज्ञान प्रदान करना है।

दूसरी ओर एक समुदाय, एक स्थायी सामाजिक समूह है जो किसी प्राप्ति या उद्देश्य की समग्रता को गले लगाता है। इसके विपरीत इसके सदस्यों का जीवन पूरी तरह से उसी में रहता है; यहां उन्हें अपने सभी सामाजिक संबंधों का पता चलता है, जबकि इसके बाहर बहुत कम, लेकिन उसकी जरूरत होती है।

यह तय करने का कार्य कि क्या कोई समूह एक समुदाय है या एक संघ हमेशा आसान नहीं होता है। एक संघ के लक्ष्य की बहुलता जितनी अधिक होती है, वह समुदाय की अवधारणा के निकट आती है, हालांकि वह वहाँ तक कभी नहीं पहुंच सकती है। इस प्रकार भारत में तथाकथित समुदाय, जिन्होंने सांप्रदायिकता की समस्या को जन्म दिया, समाजशास्त्रीय अर्थों में समुदाय नहीं हैं। वे बल्कि जातीय समूह हैं जिनके भीतर कुछ सामाजिक और धार्मिक हित संतुष्ट होते हैं; लेकिन एक दूसरे पर और बड़े प्रांतीय या राष्ट्रीय इकाई पर इन समूहों की निर्भरता के कारण, वे एक समुदाय की परिभाषा को पूरा नहीं कर सकते हैं। उसी कारण से एक धार्मिक समुदाय या एक आश्रमवासी को पूरी तरह से एक समुदाय कहा जाता है, हालांकि यह काफी हद तक आत्म-निहित है। अभी तक संयुक्त राज्य अमेरिका के यूटोपियन समुदायों में से कई आगामी काल में तथा कुछ भारतीय गांवों को वास्तविक समुदाय के रूप में नहीं माना जा सकता है क्योंकि उनके निवासी बाकी लोगों से अलग एक साधारण आत्म-निहित जीवन जीते हैं।

बोध प्रश्न 1

1) समुदाय की अवधारणा को परिभाषित करें। सामुदायिक भावनाओं के विभिन्न तत्वों की व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

2) समुदाय की विशेषताएँ क्या हैं? उदाहरणों के साथ इसके विभिन्न आधारों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

3) समुदाय और संघ के बीच संक्षिप्त में अंतर बतायें।

.....

.....

.....

.....

4) महान और छोटे समुदायों के बुनियादी पहलुओं की व्याख्या करें

.....

.....

.....

.....

8.6 सामाजिक समूह की परिभाषा

सामाजिक समूह की परिभाषा

1) एल्बियन स्मॉल एक समूह को किसी भी संख्या में, बड़े या छोटे लोगों के रूप में परिभाषित करता है, जिनके बीच ऐसे संबंधों की पाए गए है जिन्हें कि उन्हें एक साथ विचार किया होगा।

2) बोगार्डस परिभाषित करता है 'एक सामाजिक समूह को दो या दो से अधिक व्यक्तियों के रूप में विचार किया जा सकता है, जिनके कुछ सामान्य लक्ष्य हैं, जो एक-दूसरे को प्रेरित करते हैं, जिनकी समान निष्ठा है और वे समान गतिविधियों में भाग लेते हैं।'

3) ग्रीन अर्नोल्ड परिभाषित करता है 'समूह व्यक्तियों का एक जमाव है जो समय के साथ बना रहता है जिसमें एक या एक से अधिक हित और गतिविधियां होती हैं और जो संगठित होते हैं।'

4) विलियम्स परिभाषित करता है 'एक सामाजिक समूह अंतर-संबंधित भूमिका निभाने वाले लोगों का एक समुच्चय है और स्वयं या अन्य लोगों द्वारा अन्तःक्रिया की इकाई के रूप में मान्यता प्राप्त है। '

8.7 समूह वर्गीकरण के आधार

समाजशास्त्र मानव समूहों को विश्लेषण की अपनी प्राथमिक इकाई मानता है। यदि उन आधारों का वर्णन करने के लिए कहा जाए जिन पर सामाजिक समूह मौजूद हैं, तो विभिन्न प्रकार के समूहों के लिए अलग-अलग उत्तर मौजूद हो सकते हैं। ऐसे कई मानदंड हैं जिनके द्वारा सामाजिक समूहों को वर्गीकृत किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, उनके हितों की प्रकृति, संगठन का स्तर, उनकी स्थायित्व की सीमा, सदस्यों के बीच संपर्क का प्रकार और इस तरह की चीजें शामिल हैं। गिंसबर्ग भी यही विचार रखते हैं और कहते हैं,' समूहों को कई तरह से आकार और स्थानिक वितरण के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है, रिश्तों की स्थायीता और समावेशिता जिस पर वे बने रहते हैं, गठन का तरीका, संगठन का प्रकार।

इस प्रकार, जबकि कुछ समाजशास्त्री समूहों के वर्गीकरण के लिए एक सरल आधार देते हैं, अन्य लोगों ने एक विस्तृत वर्गीकरण योजना दी है।

जॉर्ज सिमेल ने समूहों के वर्गीकरण के लिए आकार को कसौटी माना। चूंकि अपनी सामाजिक कंडीशनिंग के साथ व्यक्ति, समाजशास्त्र की सबसे प्रारंभिक इकाई है, सिम्मेल ने खानाबदोश के साथ शुरू किया। उन्होंने एकल व्यक्ति को समूह के रिश्तों के केंद्र के रूप में लिया और 'युग्म' और 'त्रय और एक तरफ अन्य छोटी सामूहिकता और दूसरी तरफ बड़े पैमाने पर समूह के माध्यम से अपने विश्लेषण को आगे बढ़ाया।

ड्वाइट सैंडरसन समूहों के वर्गीकरण के आधार के रूप में संरचना को लेते हैं। वह उन्हें अनैच्छिक, स्वैच्छिक और प्रतिनिधि समूहों में वर्गीकृत करते हैं।

सी.एच कुले समूहों को प्रकार के आधार पर, प्राथमिक समूह और द्वितीयक समूह में विभाजित करते हैं।

एफ.एच. गिडिंग्स संबंधों के प्रकार के आधार पर समूहों को आनुवांशिक या समूह में वर्गीकृत करते हैं।

डब्ल्यू.जी. सुमेर प्रकार की चेतना के आधार पर इन-ग्रुप और आउट-ग्रुप के बीच अंतर करते हैं।

जॉर्जहासेन समूहों को अन्य समूहों उनके संबंधों के आधार पर गैर-सामाजिक, छद्म सामाजिक या समर्थक-सामाजिक में वर्गीकृत करते हैं।

मिलर सामाजिक समूहों को क्षैतिज और ऊर्ध्वाधर समूहों में विभाजित करते हैं।

8.7.1 प्राथमिक समूह और गौण समूह

प्राथमिक समूह 'शब्द' को 1909 में अपनी पुस्तक 'सोशल ऑर्गनाइजेशन' में चार्ल्स होर्टन कुले (1864-1929) ने बनाया था। एक प्राथमिक समूह अपेक्षाकृत छोटा होता है। इस समूह के सदस्यों में आम तौर पर आपस मे आमने सामने का संपर्क होता है। उनके पास अंतरंग और सहकारी संबंध होने के साथ-साथ मजबूत निष्ठा भी होती है। उन सदस्यों के बीच संबंध अपने आप में लक्ष्य होते हैं क्योंकि सदस्य केवल एक दूसरे के साथ जुड़कर आनंद प्राप्त करते हैं। उनकी धारणा मे कोई दूसरा लक्ष्य नहीं होता है। प्राथमिक समूह का अंत तब होता है जब एक या एक से अधिक सदस्य इसे छोड़ देते हैं, उन्हें दूसरों द्वारा प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है। प्राथमिक समूह का सबसे अच्छा उदाहरण परिवार या दोस्ती या सहकर्मी समूह है।

गौण समूहः कई मामलों में गौण समूह प्राथमिक समूहों के विपरीत हैं। जैसा कि वे सामान्य बड़े समूहों में होते हैं, गौण समूहों के सदस्य एक दूसरे के साथ अपेक्षाकृत सीमित, औपचारिक और अवैयक्तिक संबंध बनाए रखते हैं। द्वितीयक या गौण समूह विशिष्ट या विशिष्ट रुचि समूह हैं। यह आम तौर पर श्रम का एक अच्छी तरह से परिभाषित विभाजन है। द्वितीयक समूह इस बात पर ध्यान दिए बिना जारी रख सकते हैं कि इसके मूल सदस्य इसके सदस्य हैं या नहीं। एक फुटबॉल टीम, एक संगीत क्लब, एक कारखाना, एक सेना आदि गौण समूहों के उदाहरण हैं।

प्राथमिक और गौण समूह के बीच अंतर

1) प्राथमिक समूह का आकार छोटा है; माध्यमिक समूह बड़ा है।

2) एक प्राथमिक समूह के सदस्यों के बीच एक व्यक्तिगत और अंतरंग संबंध मौजूद होता है जबकि द्वितीयक समूह के सदस्यों के बीच संबंध अपेक्षाकृत अवैयक्तिक है।

3) एक प्राथमिक समूह के सदस्यों के बीच आमने सामने का संचार संचार होता है, जबकि द्वितीयक समूह में सदस्यों के पास आमने-सामने का संचार बहुत कम होता है।

4) प्राथमिक समूह के सदस्यों में 'हम' की भावना के साथ निष्ठा की एक मजबूत भावना होती है लेकिन एक माध्यमिक समूह के मामले में गुमनामी सर्वाधिक होती है।

5) प्राथमिक समूह में अनौपचारिकता सबसे आम है। समूह में आमतौर पर एक नाम, अधिकारी या नियमित बैठक का स्थान नहीं होता है, लेकिन माध्यमिक समूह में ऐसी औपचारिकता होती है।

6) प्राथमिक समूह संबंधोन्मुखी होते हैं लेकिन माध्यमिक समूह लक्ष्य उन्मुख होते हैं।

7) प्राथमिक समूहों में, संबंध समावेशी होते हैं और इसीलिए एक व्यक्ति की अनुपस्थिति दूसरे द्वारा पूरी नहीं की जा सकती है। संबंधों की विशिष्टता माध्यमिक समूहों में नहीं पाई जाती है और इसलिए एक व्यक्ति को दूसरे के लिए बहुत आसानी से प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

8) प्राथमिक समूहों में प्रेम, सहानुभूति, पारस्परिक सहायता आदि जैसे गुण पनपते हैं जबकि माध्यमिक समूह स्वार्थ और व्यक्तिवाद को बढ़ावा देते हैं।

9) समूह के निर्णय प्राथमिक समूह में पारंपरिक और गैर-तर्कसंगत हैं, जबकि माध्यमिक समूह के निर्णय अधिक तर्कसंगत हैं और दक्षता पर जोर दिया जाता है।

10) प्राथमिक समूह में किसी व्यक्ति की स्थिति उसके जन्म-क्रम और आयु के अनुसार तय की जाती है जबकि यह माध्यमिक समूहों में भूमिका के अनुसार तय की जाती है।

11) प्राथमिक समूह समय और महत्व में प्राथमिक हैं। जैसे, वे समाज की आधारशिला हैं, जबकि माध्यमिक समूह हमेशा गौड़ होते हैं।

आधुनिक दुनिया में प्राथमिक और गौण संबंध

आदिम लोगों और गांवों और छोटे शहरों के समुदायों में, व्यक्तियों को प्राथमिक बंधन द्वारा अधिकांश भाग के लिए एक साथ जोड़ा जाता है - समूह के अन्य सदस्यों को व्यक्तियों के रूप में जाना जाता है, न कि केवल औपचारिक क्रम में पदों के प्रतिनिधियों के रूप में। इस प्रकार, उनके प्रशिक्षुओं के लिए मध्ययुगीन संघ के सदस्य "बॉस (मालिक)" से अधिक था; वह एक परामर्शदाता, अनुशासक, अध्यापक, दोस्त (या दुश्मन) वगैरह था।

कार्य समूह

कुछ समूह न तो स्पष्ट रूप से प्राथमिक हैं और न ही माध्यमिक हैं, बल्कि प्रत्येक की कुछ विशेषताओं के साथ मध्यवर्ती हैं। टास्क समूह (या कार्य उन्मुख समूह) कुछ कार्य या कार्य के सेट करने के लिए गठित छोटे समूह हैं (निक्सन, 1979)। इनमें कार्य दल, समितियां और कई तरह के पैनल शामिल हैं। कुछ विद्वान कार्य समूह को हमारे समाज के समूह का सबसे सामान्य रूप मानते हैं (फिशर, 1980)। टास्क समूह छोटे होने के नाते प्राथमिक समूहों से मिलता-जुलता है, केवल छोटे समूह ही कुशल कार्य इकाइयाँ हैं। यही कारण है कि बड़ी श्रमिक सेनाएं छोटी टीमों में टूट जाती हैं। टास्क समूह भी उस बातचीत में प्राथमिक समूहों से मिलता-जुलता है जो आम तौर पर आमने-सामने और अनौपचारिक होते हैं। लेकिन कार्य समूह संपर्क अवैयक्तिक, खंडीय और उपयोगितावादी हैं। सदस्य एक दूसरे के रूप में एक व्यक्ति में अधिक रुचि नहीं रखते हैं और सभी व्यक्तियों के साथ संबंध नहीं रखते हैं, लेकिन सिर्फ कार्य समूह में काम के प्रदर्शन के साथ संबंध रखते हैं।

8.7.2 जेमिन्शाफ्ट और जेसलशाफ्ट

कुछ हद तक प्राथमिक और गौण समूहों की अवधारणा के समान हैं, फर्डिनेंड टोनीज़ (1887) द्वारा विकसित जेमिन्शाफ्ट और गेज़्लेसचफ्ट की अवधारणाएं हैं। ये दो शब्द मोटे तौर पर 'समुदाय' और 'समाज' के रूप में अनुवाद किए जाते हैं। जेमेन्शाफ्ट एक सामाजिक प्रणाली है जिसमें अधिकांश रिश्ते व्यक्तिगत या पारंपरिक होते हैं या अक्सर दोनों होते हैं। एक अच्छा उदाहरण सामंती जमींदारी है, एक छोटा समुदाय व्यक्तिगत संबंधों और स्थिति दायित्व के संयोजन के साथ नियंत्रित होता है। यद्यपि महान असमानता मौजूद होती है, जागीर का स्वामी व्यक्तिगत रूप से अपने विषयों के लिए जाना जाता था, जबकि उसके लिए उसके कर्तव्यों को उनके कल्याण के लिए उनके दायित्व द्वारा संतुलित किया गया था।

जेसल्शाफ्ट में परंपरा के समाज को अनुबंध के समाज के साथ बदल दिया जाता है। इस समाज में न तो व्यक्तिगत लगाव और न ही पारंपरिक अधिकार और कर्तव्य महत्वपूर्ण हैं। लोगों के बीच संबंधों को सौदेबाजी द्वारा निर्धारित किया जाता है और लिखित समझौतों में परिभाषित किया जाता है। रिश्तेदार अक्सर अलग हो जाते हैं क्योंकि लोग अजनबियों के बीच रहते हैं। व्यवहार के सामान्य रूप से स्वीकृत कोड बड़े पैमाने पर लाभ और हानि की तर्कसंगत या 'शीत-रक्त'गणना द्वारा प्रतिस्थापित किए जाते हैं। इस प्रकार जेमिन्शाचफ्ट में, प्राथमिक-समूह संबंध प्रमुख थे, जबकि गेसलस्चाफ्ट में, द्वितीयक-समूह संबंध महत्वपूर्ण थे।

जेमिन्शाफ़्ट और जेसल्शाफ्ट रिश्ते

1) पर्सनल (वैयक्तिक) इंपर्सनल (अवैयक्तिक)
2) अनौपचारिकऔपचारिक, संविदात्मक
3) पारंपरिकउपयोगितावादी
4) भावुकयथार्थवादी, 'सख्त उबला हुआ'
5) सामान्य विशिष्ट

8.7.3 आंतरिक समूह और बाह्य समूह

इस शब्द को डब्ल्यू. जी सुमनर द्वारा रिश्ते के बाहरी लोगों के विपरीत 'हम' संबंध में अंदरूनी सूत्रों का उल्लेख करने के लिए पेश किया गया था। सुमनर ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक फोल्कवेज (1906) में 'इन-ग्रुप' शब्द का इस्तेमाल किया। कुछ समूह ऐसे हैं जिनमें मैं, मेरा परिवार, मेरा धर्म, मेरा विश्वविद्यालय, मेरा धर्म, मेरा पेशा, मेरा लैंगिक, मेरा राष्ट्र - कोई भी समूह जिसके पहले सर्वनाम, "मेरा" पहले से था। ये आंतरिक समूह में हैं, क्योंकि मुझे लगता है, मैं उनसे संबंधित हूं। ऐसे अन्य समूह हैं जिनमें मैं अन्य परिवारों, समूहों, व्यवसायों, जातियों, राष्ट्रीयताओं, धर्मों, अन्य लिंगों से संबंधित नहीं हूं – ये बाह्य समूह हैं, क्योंकि मैं उनके बाहर हूँ।

एक सामान्य समाज छोटे, पृथक बंधनों में रहते हैं जो आमतौर पर रिश्तेदारों के वंशज होते हैं। यह रिश्तेदारी थी जो एक समूह और बाहर समूह में स्थित थी और जब दो अजनबी मिलते थे, तो पहली चीज जो उन्हें करनी होती थी वह थी संबंध स्थापित करना। यदि रिश्तेदारी स्थापित की जा सकती है तो वे समूह में दोनों सदस्य थे। यदि कोई संबंध स्थापित नहीं किया जा सकता था, तो कई समाजों में वे दुश्मन थे और तदनुसार कार्य करते थे। आधुनिक समाज में, लोग इतने अधिक समूहों से संबंधित हैं कि उनके समूह और बाहर के समूह संबंध ओवरलैप हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, एक छात्रावास में विभिन्न समूह हैं जो दूसरों को समूह से बाहर के सदस्यों के रूप में मानते हैं। हालांकि, एक अन्य छात्रावास के खिलाफ एक क्रिकेट मैच में, सभी छात्रावास के सदस्य आंतरिक समूह के रूप में व्यवहार करेंगे और मैदान पर अपनी टीम का हौसला बढ़ाएँगे।

इन-ग्रुप और आउट-ग्रुप तब महत्वपूर्ण होते हैं, जब वे व्यवहार को प्रभावित करते हैं। एक आंतरिक समूह के साथी सदस्यों से हम पहचान, निष्ठा और मदद की उम्मीद करते हैं। बाह्य समूह से हमारी उम्मीद बाहर के समूह की तरह बदलती है। कुछ बाह्य समूह से हम दुश्मनी की उम्मीद करते हैं; दूसरों से, अधिक या कम दोस्ताना प्रतियोगिता; दूसरों से, उदासीनता। समान बाह्य समूह से, हम उम्मीद कर सकते हैं कि न तो शत्रुता है और न ही उदासीनता, फिर भी हमारे व्यवहार मे एक अंतर तो रहता ही है। उदाहरण के लिए, 12 साल का लड़का जो लड़कियों से दूर रहता है वह बड़ा होकर एक रोमांटिक प्रेमी बन जाता

है और अपना अधिकांश जीवन वैवाहिक जीवन में बिताता है। फिर भी जब पुरुष और महिलाएं सामाजिक अवसरों पर मिलते हैं, तो वे सेक्स समूहों में विभाजित हो जाते हैं, शायद इसलिए कि प्रत्येक सेक्स दूसरे के कई संवादात्मक हितों से ऊब जाता है। गुट एक प्रकार का आंतरिक समूह है। इस प्रकार, हमारा व्यवहार एक विशेष प्रकार के इन-ग्रुप या आउट-ग्रुप से प्रभावित होता है, जो इसमें शामिल होता है। हालाँकि, यह भी स्पष्ट होना चाहिए कि इन-ग्रुप और आउट-ग्रुप वास्तव में समूह नहीं हैं, जहां तक लोग उन्हें 'हम' और 'वे' के उपयोग में बनाते हैं और इन समूहों के प्रति एक तरह का दृष्टिकोण विकसित करते हैं। फिर भी, यह अंतर एक महत्वपूर्ण औपचारिक अंतर है क्योंकि यह हमें दो महत्वपूर्ण समाजशास्त्रीय सिद्धांतों का निर्माण करने में सक्षम बनाता है।

क) इन-ग्रुप में बस उन लोगों को स्टिरियोटाइप करते हैं जो आउट-ग्रुप में होते हैं। इस प्रकार दिल्ली के लोगों को बिहार या यूपी में रहने वालों की रूढ़िबद्धता हो सकती है। महत्वपूर्ण बात यह है कि इस तरह के स्टीरियोटाइप आमतौर पर समूह के सदस्यों को दिखाई देने वाले समूहों के सदस्यों में पाए जाने वाले कम से कम सम्मानजनक लक्षणों के रूप में दिखाई देते हैं। भारत के प्रत्येक भाषाई राज्य के लोगों में अन्य भाषाई राज्यों के लोगों की एक रूढ़ि बनने की प्रवृत्ति है। उदाहरण के लिए, एक पंजाबी में स्टीरियोटाइप या एक सामान्यीकृत सोच होती है जिसमें कि एक गुजराती उस रूढ़िबद्धता में उपयुक्त नहीं हो सकता। वास्तव में, सामाजिक दूरी (बोगार्डस द्वारा विकसित एक अवधारणा) इस तरह के वर्गीकरण को प्रोत्साहित करती है और व्यक्तिगत भेदभाव को हतोत्साहित करती है। इस सिद्धांत का ज्ञान स्टीरियोटाइप में ऐसे वर्गीकरण के दुर्भाग्यपूर्ण प्रभावों को कम करने और लोगों के बीच आसान संचार को बाधित करने वाले अवरोधों को ध्वस्त करने में काफी मदद करता है।

ख) किसी आउट-ग्रुप से कोई भी खतरा, वास्तविक या काल्पनिक, आउट-ग्रुप के सदस्यों के खिलाफ इन-ग्रुप के सदस्यों को बांध देता है। इसे परिवार की स्थिति में हमारे अनुभव के संदर्भ में चित्रित किया जा सकता है। चीनी ऋषि, मेकिनस ने कई साल पहले कहा था: "भाई और बहन जो अपने घर की दीवारों के भीतर झगड़ा कर सकते हैं, किसी भी घुसपैठ को दूर करने के लिए खुद को एक साथ बांधेंगे"।

8.7.4 संदर्भ समूह

संदर्भ समूह हमारे निर्णयों और कार्यों के लिए मॉडल या गाइड के रूप में स्वीकृत किसी भी समूह को संदर्भित करता है। हालाँकि, इसे स्पष्टता के लिए और विस्तार की आवश्यकता है। कुछ स्थितियों में, हम उन मानदंडों के अनुरूप नहीं होते हैं, जिनसे हम संबंधित हैं, बल्कि उन समूहों से हैं जिनकी हम पहचान करना चाहते हैं।

एक संदर्भ समूह एक वास्तविक समूह नहीं हो सकता है। यह एक काल्पनिक भी हो सकता है। कोई भी समूह किसी के लिए एक संदर्भ समूह है यदि उसकी यह अवधारणा, जो यथार्थवादी हो सकता है या नहीं भी हो सकता है, वह स्वयं या उसकी स्थिति के आकलन के लिए उसके संदर्भ के ढांचे का हिस्सा है।

इस प्रकार, एक व्यक्ति जो आमतौर पर सामाजिक सीढ़ी को स्थानांतरित करने के लिए उत्सुक है, उसके पास अपने स्वयं के मुकाबले शिष्टाचार और उच्च सामाजिक वर्ग की भाषा के मानदंडों के अनुरूप होने की प्रवृत्ति है क्योंकि वह इस वर्ग के साथ पहचान चाहता है। भारतीय संदर्भ में'संस्कृतिकरण', संदर्भ समूह की अवधारणा का सबसे अच्छा चित्रण है, जहां जाति पदानुक्रम की ऊपरी सीढ़ी में लोगों को 'मॉडल' के रूप में लिया जाता है और उनके

नीचे के लोगों द्वारा नकल की जाती है। किसी विशेष समूह के सदस्यों के लिए, एक अन्य समूह एक संदर्भ समूह है यदि निम्न में से कोई भी परिस्थिति प्रबल हो -

1) जब पहले समूह के सदस्य दूसरे समूह की सदस्यता की इच्छा रखते हैं, तो दूसरा समूह अगले के लिए संदर्भ समूह बन जाता है। उदाहरण के लिए, आई.ए.एस प्रशिक्षु भारत में विश्वविद्यालय के कई छात्रों के लिए संदर्भ समूह के रूप में कार्य करते हैं।

2) जब पहले समूह के सदस्य किसी तरह से दूसरे समूह के सदस्यों की तरह बनने का प्रयास करते हैं, तो दूसरा समूह पहले के सकारात्मक संदर्भ समूह के रूप में कार्य करता है। यहां यह ध्यान रखना है कि पहला समूह दूसरे समूह की तरह बनना चाहता है। उदाहरण के लिए, गैर-ब्राह्मण, भारत के कुछ हिस्सों में ब्राह्मणों के व्यवहार के तरीकों का अनुकरण करने की प्रवृत्ति रखते हैं ताकि ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा प्राप्त हो सके (जैसा कि श्रीनिवास ने उल्लेख किया है)।

3) जब पहले समूह के सदस्य दूसरे समूह के सदस्यों के विपरीत कुछ संतुष्टि प्राप्त करते हैं, और यहां तक कि अपने और दूसरे समूह के सदस्यों के बीच अंतर बनाए रखने का प्रयास करते हैं, तो बाद वाला समूह पहले समूह के लिए नकारात्मक संदर्भ समूह होता है। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में, गोरे अफ्रीकी अमेरिकियों के विपरीत बने रहने का प्रयास करते हैं और इस मामले में अफ्रीकी अमेरिकी गोरों के लिए नकारात्मक संदर्भ समूह बन जाते हैं।

4) जब आवश्यक रूप से दूसरे समूह के समान या इसके विपरीत होने का प्रयास किए बिना, पहले समूह के सदस्य दूसरे समूह या उसके सदस्यों को तुलना के लिए एक मानक के रूप में उपयोग करके अपने स्वयं के समूह या खुद को स्पष्ट करते हैं; दूसरा समूह पहले का संदर्भ समूह बन जाता है। उदाहरण के लिए, कुछ परिस्थितियों में कॉलेजों के गैर-शिक्षण कर्मचारी शिक्षकों के संदर्भ में अपने स्वयं के प्रदर्शन या रिकॉर्ड उपस्थिति का आकलन करते पाए जाते हैं।

कार्यक्षेत्र और क्षैतिज समूह

एक ऊर्ध्वाधर समूह (मिलर द्वारा दी गई अवधारणाएं) जीवन के सभी क्षेत्रों से सदस्यों के होते हैं, जबकि एक क्षैतिज समूह में मुख्य रूप से एक सामाजिक वर्ग के सदस्य होते हैं। डॉक्टर, इलेक्ट्रीशियन, इंजीनियर आदि के व्यावसायिक समूह पहले के उदाहरण हैं, जबकि जाति समूह ऊर्ध्वाधर समूहों के उदाहरण हैं।

संस्थागत और गैर-संस्थागत समूह

संस्थागत समूह वे हैं जो अनुष्ठानों, प्रतीकों, अधिकारियों, आचार संहिता, विनियामक शक्ति सहित दंडित करने के लिए कार्य करते हैं। राष्ट्र एक संस्थागत समूह है। सत्ता के लिए नागरिकों के संघ के रूप में राज्य पिकनिक पार्टी के विपरीत एक संस्थागत समूह है जो एक गैर-संस्थागत समूह है।

संविदात्मक और गैर-संविदा समूह

संविदात्मक समूह की शक्ति और सदस्यों की जिम्मेदारियों के साथ-साथ समूह की एक परिभाषा के भीतर एक अनुबंध होता है। यह एक औपचारिक समूह है जो संस्थागतकरण की ओर निश्चित प्रवृत्ति है। भारतीय संविधान, निगम, एक श्रमिक संघ के संगठन संविदा समूह के कुछ उदाहरण हैं। गैर-संविदा समूह छात्र, एक ट्रेन पर यात्री हैं आदि।

स्वैच्छिक और अनैच्छिक समूह

एक स्वैच्छिक समूह वह है जो एक व्यक्ति अपने स्वयं के साथ जुड़ता है। यह उसका विकल्प है कि वह सदस्य बने रहना चाहता है या नहीं। उदाहरण के लिए, एक क्लब सदस्यता स्वैच्छिक है। एक अनैच्छिक समूह वह है जो रिश्तेदारी या जाति समूह पर आधारित है और यह स्वैच्छिक समूह के सदस्यों का एक उदाहरण है।

अनौपचारिक और औपचारिक समूह

एक अनौपचारिक समूह वह है जिसमें कई व्यक्ति एक समान लक्ष्य प्राप्त करने के लिए एक साथ काम करते हैं। रिश्ते को संचालित करने के लिए औपचारिक नियमों और विनियमों का कोई सेट नहीं है। इसकी कोई निश्चित संरचना नहीं है। क्राउड एक अनौपचारिक समूह का एक उदाहरण है।

एक औपचारिक समूह में अधिकारियों के एक सेट के निर्देशन में नियमों के एक सेट के अनुसार दिए गए लक्ष्य की ओर एक साथ काम करने वाले कई व्यक्ति होते हैं। इसकी एक निश्चित संरचना है। एक नौकरशाही समूह एक औपचारिक समूह का एक उदाहरण है।

8.8 सामाजिक समूह और सामुदायिक मतभेद

सामाजिक समूह	समुदाय समूह
1) समूह एक कृत्रिम निर्माण है।	1) समुदाय एक प्राकृतिक विकास है।
2) समूह का गठन कुछ को महसूस करने के लिए किया जाता है।	2) समुदाय में सामाजिक जीवन का पूरा चक्र शामिल है
3) समूह की सदस्यता स्वैच्छिक है	3) समुदाय की सदस्यता अनिवार्य है।
4) समूह तुलनात्मक रूप से अस्थायी है	4) समुदाय तुलनात्मक रूप से स्थायी है।
5) समूह समुदाय का एक हिस्सा है	5) समुदाय एक संपूर्ण है।

बोध प्रश्न

1) सामाजिक समूह को परिभाषित करें, सामाजिक समूह के उद्देश्य क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) सामाजिक समूहों के विभिन्न प्रकार क्या हैं? उदाहरण सहित बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) इन-ग्रुप और आउट-ग्रुप ग्रुप के बुनियादी पहलुओं को समझाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

4) सामाजिक समूहों के वर्गीकरण के आधार क्या हैं? इसकी व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

8.9 सारांश

इस इकाई ने समुदाय और सामाजिक समूह की कुछ महत्वपूर्ण और बुनियादी अवधारणाओं को स्पष्ट रूप से समझाया है। समुदाय मनुष्यों का सबसे समावेशी समूह है, जो व्यक्तिगत सदस्य द्वारा उसके जीवन को पूरी तरह से जीने की संभावना से चिह्नित है। समुदाय को आत्मनिर्भर होने की आवश्यकता है और वास्तव में इसमे कमी आने से सभ्यता अन्तःनिर्भर हो जाती है। इस इकाई ने संक्षेप में सभी समुदायों के दो आधारों, एक क्षेत्रीय हिस्से के पेशे और एक सामुदायिक भावना को शामिल कर उसे साझा करने की कोशिश की।

सामाजिक समूह की मूल अवधारणाएं, जैसा कि इस इकाई में समझाया गया है, समूह द्वारा इसका मतलब है कि मनुष्य का कोई भी संग्रह जो एक दूसरे के साथ सामाजिक संबंधों में लाया जाता है। सामाजिक रिश्तों में उन लोगों के बीच पारस्परिकता का कुछ अवस्था शामिल है, आपसी जागरूकता के कुछ उपाय जो समूह के सदस्यों के दृष्टिकोण में परिलक्षित होते हैं। इस कसौटी के आधार पर, जनसंख्या के कई उन विभाजनों को सामाजिक समूह नाम दिया गया। समूहों के वर्गीकरण का आधार, फिर, समूह बातचीत का आकार यासमूह अन्तः क्रिया की कुछ गुणवत्ता या समूह हित की कुछ गुणवत्ता या संगठन की अवस्था, या इनमें से कुछ संयोजन। प्रमुख प्रकार के समूहों का वर्गीकरण मुख्य रूप से

हितों की सीमा और प्रकृति और समूह संगठन की स्थिति पर आधारित है, जबकि अन्य कसौटी उपप्रकारों के बीच उभरे भेदों में अंतर्निहित होते हैं।

8.10 संदर्भ

गिंसबर्ग एम 1961. सोसिओलोजी. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

गीसबर्त पी 2010. फंडामेंटल्स ऑफ सोसिओलोजी. न्यू दिल्ली : ओरिएंट लोंगमन

हौर्टन, पॉल बी एंड हंट,चेस्टर एल. 2004. सोसिओलोजी. न्यू यॉर्क : टाटा मैगरा-हिल

मैकइबर, आर. एम 1924. कम्यूनिटी. लंदनः मैकमिलन

टोनीज़,एफ. 1955. कम्युनिटि एंड असोसियेशन. लंदनः रुतलेज एंड किगा पॉल

र्युटर, ई. बी. 1948. हैंडबुक ऑफ सोसिओलोजी. न्यू यॉर्क : द ड्राइडन प्रेस

यंग के. 1949. सोसिओलोजीः ए स्टडी ऑफ सोसिओलोजी एंड कल्चर. न्यू यॉर्क. अमेरिकन बुक कंपनी

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 9 संगठन और संस्थाएँ*

संरचना

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 संस्थान

- 9.2.1 संस्थान का प्रयोजन
- 9.2.2 संस्थानों के प्रकार

9.3 सामाजिक संस्थानों का परिप्रेक्ष्य

- 9.3.1 प्रकार्यवादी परिप्रेक्ष्य
- 9.3.2 संघर्ष संबंधित परिप्रेक्ष्य
- 9.3.3 पारस्परिक अन्तःक्रिया (Social Interaction) संबधित परिप्रेक्ष्य

9.4 संगठन

9.5 संगठनों से संबधित दृष्टिकोण

- 9.5.1 अमिताई एट्जियोनी
- 9.5.2 मैक्स वेबर
- 9.5.3 इरविंग गॉफमेन

9.6 संगठनों का वर्गीकरण

9.7 संगठनात्मक व्यवहार

- 9.7.1 सदस्यों के व्यवहार
- 9.7.2 सदस्यों को सौंपी गई भूमिकाएं

9.8 सारांश

9.9 संदर्भ

9.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप, निम्न के बारे में सक्षम होंगेः

- संस्थानों और संगठनों के अर्थ को समझने में;
- संस्थानों और संगठनों के बीच अंतर को समझने में;
- वर्तमान में समाज की संरचना के विभिन्न प्रकार के संगठनों और संस्थानों की पहचान करने में;
- संगठनों संबंधित परिपेक्ष्य को समझने में;
- विभिन्न प्रकार के संगठनों को समझने में; तथा
- संगठनात्मक व्यवहार को समझने में।

9.1 प्रस्तावना

इस इकाई में संस्थानों और संगठनों को समाज की इकाइयों के रूप में देखा गया है। यह इकाई समाज, संस्थानों और संगठनों के बीच संबंधों पर प्रकाश डालती है। यह इकाई

*स्मृति सिंह, स्वतंत्र विदुषी

संस्थानों, संगठनों और संगठनात्मक व्यवहार से क्या तात्पर्य की विस्तृत जाँच करती है। संस्थानों और संगठनों, और समाज के साथ उनके संबंधों के विचार पर विभिन्न सामाजिक दृष्टिकोणों को भी यह इकाई रेखांकित करती है।

समाज व्यक्तियों और समूहों से बना है और यह उनके बीच मौजूद सभी प्रकार के रिश्तों का योग है। हालांकि समाज को अपने विभिन्न घटकों को व्यवस्थित करते हुए खुद को व्यवस्थित करने की जरूरत है। संस्थाओं और संगठनों के माध्यम से समाज खुद को व्यवस्थित और आदेशित करते हैं। संस्थान और संगठन समाज की स्थिरता और भविष्य हेतु उचित माहौल प्रदान करते हैं जो कि समाज की स्थिरता के लिए जरूरी है।

संस्थान नियमों के समूह हैं जो सामाजिक अन्तःक्रिया (Social Interaction) का ढांचा तैयार करते हैं (जैक नाइट, 1992)। संस्थानों को मानव क्रियाकलाप के लिए आचरण संहिता या नियमों और दिशानिर्देशों के समूह के रूप में जाना जा सकता है। संस्थान निर्धारित अथवा निहित नियमों द्वारा मानव अन्तःक्रिया (Social Interaction) की संरचना करते हैं जो अपेक्षाओं को सृजित करते हैं। संस्थानों के कुछ आदर्श रूप कानून, शिक्षा, विवाह और परिवार हैं।

संगठन विशिष्ट प्रकार के संस्थान होते हैं जिनकी स्पष्ट रूप से परिभाषित और निर्दिष्ट सीमा होती है और जो गैर-सदस्यों को सदस्यों से अलग करते हैं। संगठन विलक्षण होते हैं क्योंकि उनके सदस्य आदेश की श्रृंखला में बंधे हुए होते हैं। संगठन स्पष्ट रूप से जिम्मेदारियों, प्राधिकार और प्रभाव के क्षेत्रों का निर्धारण करते हैं। वे अपने सदस्यों को स्वायत्त प्रभारी की भूमिका प्रदान करके उन्हें एक पदानुक्रम में भी व्यवस्थित करते हैं। संगठनों के कुछ आदर्श रूप ट्रेड यूनियन, विद्यालय और अदालतें हैं।

शिक्षा के उदाहरण के रूप में किसी संस्थान तथा संगठन के उदहारण के रूप में किसी विद्यालय पर विचार करें। सभी गैर समाज कुछ तरीकों को बनाते हैं जिसमें वे अपने युवाओं के संकाय सदस्यों को प्रशिक्षित करते हैं और लाभ उठाते हैं; नए ज्ञान को सृजित करते हैं और मौजूदा ज्ञान को हस्तांतरित करते हैं। ऐसा करते हुए वे समाज के भीतर मानवीय अन्तःक्रिया (Social Interaction) और मानवीय क्रियाकलाप को आयोजित करते हैं। शिक्षा वह माध्यम बन जाती है जिसमें युवाओं को समाज के सदस्यों के रूप में अपनी भूमिका, अपेक्षाओं और कर्तव्यों को बताया जाता है। सभी समाजों (जातियों, जनजातियों, कृषि, औद्योगिक) ने अपने युवाओं तक ज्ञान, मूल्यों और कौशलों को हस्तांतरित करने के लिए किसी न किसी तरीके को तैयार किया है। इस लक्ष्य को विभिन्न तरीकों से अर्जित किया जा सकता है जैसे प्रशिक्षुता, गुरुकुल (भारत की पारंपरिक आवासीय शिक्षा प्रणाली), परामर्श और प्रशिक्षण।

9.2 संस्थान

1) संस्थान समाज के वे घटक हैं जो मानव अन्तःक्रिया (Social Interaction) और क्रियाकलाप को बनाकर उसे आदेशित और स्थिर बनाए रखने में सहायता करते हैं। संस्थान स्वयं को उन अतिव्यापी अथवा निहित नियमों के संदर्भ में प्रकट करते हैं जो मानव अन्तःक्रिया (Social Interaction) को सृजित करते हैं। संस्थाएं समाज के उन सदस्यों के माध्यम से कार्य करती हैं जो उन्हें समाजीकृत करते हैं। यह समाजशास्त्र के क्षेत्र में संस्थानों के अध्ययन को महत्वपूर्ण बनाते हैं। ऐमाइल दुर्खाइम ने समाजशास्त्र को सैद्धांतिक संस्थानों के वैज्ञानिक अध्ययन के रूप में वर्णित किया है। धर्म, परिवार, शिक्षा आदि जैसे संस्थान समाजशास्त्र के लिए आज भी महत्वपूर्ण हैं।

संस्थाओं के अर्थ से परिचित होने के लिए संस्थानों के बारे में कुछ विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं पर आईये विचार करते हैं:

मॉरिस गिन्सबर्ग (1921) के अनुसार, "संस्थान सामाजिक प्राणियों के बीच एक दूसरे अथवा किसी बाह्य वस्तु के साथ निश्चित और स्वीकृत संबंध के स्वरूप या माध्यम हैं।"

रॉबर्ट मॉरिसन मैकाइवर 2 ने "संस्थानों को समूह गतिविधि की विशिष्ट प्रक्रियाओं के स्वरूप या शर्तों के रूप में परिभाषित किया है।"

(2 जेरी डी रोज़. इंट्रोडक्शन टू सोशियोलॉजी. शिकागो, आई.एल.: रेंड मैक्नेली, 1974 पृष्ठ 223 पर उद्धरित।)

विलियम ग्राहम सुमनर (1906:53) यह सुझाते हैं कि "किसी भी संस्थान में अवधारणा, विचार, दशा, सिद्धांत या रुचि और संरचना शामिल होते हैं"।

ब्रोनिस्लाव मैलिनोवस्की 3 तर्क देते हैं कि, "प्रत्येक संस्थान किसी मूलभूत आवश्यकता के आसपास केंद्रित होते हैं, जो सह-परिचालन कार्य में लोगों के समूह को एकजुट करते हैं और उसके विशेष सिद्धांत और तकनीक या शिल्प होते हैं। संस्थान नए कार्यों के लिए प्रत्यक्ष रूप से सहसंबंधित नहीं होते हैं। किसी को किसी संस्थान में किसी की संतुष्टि प्राप्त करने की जरूरत नहीं होती है।"

जोनाथन टर्नर ने संस्थान को इस प्रकार परिभाषित किया है कि किसी दिए गए पर्यावरण के भीतर व्यवहार्य सामाजिक संरचनाएं "विशिष्ट प्रकार के सामाजिक संरचना के पदों, भूमिकाओं, मानदंडों और मूल्यों का एक जटिल और जीवन को बनाए रखने संसाधनों के सृजन में मूलभूत समस्याओं के संबंध में व्यक्तियों को पुनःसृजत करने और सतत बनाए रखने के लिए मानव क्रियाकलाप के अपेक्षाकृत स्थिर स्वरूप आयोजित करना है।" (टर्नर 1997: 6)

उपर्युक्त परिभाषाओं से हमने यह सिखा है कि 1) संस्थान भौतिक संस्थाएं नहीं हो सकते हैं अपितु समाज के सदस्यों के व्यवहार के समन्वित स्वरूप में देखे जा सकते हैं। 2) संस्थान समाज के सदस्यों के व्यवहार की व्याख्या करने में मदद कर सकते हैं। 3) संस्थानों में प्रतिबंधित और सक्षमता दोनों होता है जिसमें यह दोनों व्यक्तियों के लिए उपलब्ध विकल्पों को बाधित करता है और उन तरीकों को परिभाषित भी करता है जिनमें विकल्पों का इस्तेमाल किया जाना है। ऐसी परिस्थिति पर विचार करें जिसमें दो व्यक्ति विवाह जैसी संस्था के द्वारा एक साथ रहने का फैसला करते हैं और इस प्रकार विवाह उन लोगों के एक दूसरे के साथ रहने की इच्छा को परिभाषित एवं नियमित करता है। 4) संस्थान समाज के सदस्यों के बीच एकजुटता लाने का कार्य करते हैं। 5) ये सदस्यों के बीच अन्तःक्रिया (Social Interaction) की संरचना तैयार करते हैं।

संस्थानों की पहचान मानदंडों और प्रतिबंधों द्वारा संरचित व्यवहारों के नियमित और सुसंगत रूप के संदर्भ में की जा सकती है। जबकि दिखाई पड़ने वाले व्यवहार की गणना संस्थान के अवलोकन योग्य रूप के तौर पर की जा सकती है। संस्थानों को संबंधित व्यवहार तक ही सीमित नहीं किया जा सकता है; क्योंकि यदि संबंधित व्यवहार बाधित होता है तो इसका तात्पर्य यह नहीं हो सकता कि संस्थान अस्तित्व में है। इन मानको और संस्थानों के बीच कोई स्पष्ट सीमा रेखा नहीं खींची जा सकती परन्तु संस्थान कुछ भिन्न होते हैं क्योंकि वे सुसंगत होते हैं और उनकी सामान्यकृत मानक अपेक्षाएं होती हैं। इन मानक सामाजिक

अपेक्षाओं को अनिवार्य माना जाता है और उन्हें विचलन के विपरीत मजबूत प्रतिबंधों द्वारा पूरा किया जाता है। उदाहरण के लिए, प्रजनन के जैविक तथ्य को विवाह के रूप में संस्थागत किया गया है और परिवार को संस्थान के रूप में। विवाह और परिवार के स्वीकृत संस्थानों के बाहर मानव प्रजनन को सामान्य तौर पर निराशा प्राप्त होगी और कुछ मामलों में इसका घोर विरोध होगा। इसलिए, संस्थान सामाजिक भूमिका लागू करते हैं और सामाजिक नियम बनाते हैं तथा उन्हें परिभाषित करना चाहते हैं कि किसी विशेष समाज के सदस्यों को उन नियमों का पालन करना चाहिए। अतः संस्थानों को ऐसी भूमिकाओं के एक समूह के रूप में जाना जा सकता है। उदाहरण के तौर पर परिवार नामक संस्था में किसी विषमलैंगिक व्यक्ति से कुछ भूमिकाओं और जिम्मेदारियों तथा किसी विषमलैंगिक महिला से अन्य भूमिकाओं और जिम्मेदारियों को अपनाने की अपेक्षा की जाती है। परिवार के बच्चों के लिए भी सामाजिक रूप से परिभाषित भूमिकाएं और जिम्मेदारियां होती हैं। हालांकि इस प्रकार की भूमिकाएं और जिम्मेदारियां अनंतिम और पूर्ण नहीं होती हैं। परिवार नामी संस्था पर यौन संबंध और श्रम विभाजन के 'पुरुष' और 'महिला' की भूमिकाओं के बारे में उसकी धारणाओं के लिए प्रहार किया गया है।

संस्थान अभी तक अच्छी प्रकार से कार्य करते हैं क्योंकि वे अपेक्षा, विचार और कार्रवाई के स्थिर स्वरूप को कायम रखते हैं। इन तत्वों के बीच सामंजस्य और संकालन संस्थान की स्थिरता को निर्धारित करते हैं। आम तौर पर यह तर्क दिया जाता है कि संस्थानों में गुणों की भांति संतुलन होता है, जिसके बाधित होने पर संस्थान उद्देश्य या वरीयता को कायम करके अपनी स्थिरता को बहाल करते हैं। पुनरावृत और सुसंगत व्यवहार जिसमें नियम-समान गुण होते हैं, वे मानक महत्त्व ग्रहण करते हैं और इस प्रकार से कार्य करते हैं जो संस्था की संतुलित स्थिति को दृढ करते हैं।

समाजशास्त्री संस्थानों को केवल स्थिर अचल घटना के रूप में नहीं अपितु एक प्रक्रिया के रूप में देखते हैं। संस्थानों को संस्थानीकरण, असंस्थानीकरण, और पुनःसंस्थानीकरण की प्रक्रियाओं के संदर्भ में देखा- समझा जा सकता है। सामान्य तौर पर उन्हें "सामाजिक जीवन की अधिक स्थायी विशेषताओं" के रूप में माना जाता है (गिडेंस, 1984:24)।

परिभाषित शब्द की उत्पत्ति

यह शब्द अर्थशास्त्र में इसके प्रयोग से लोकप्रिय हुआ जहां उसने अन्य सदस्यों द्वारा उपयोगिता अधिकता के प्रति समानांतर प्रयासों के कारण उपयोगिता अधिकता के मानव प्रयास पर बाधाओं को प्रतिबिंबित किया। दो अर्थशास्त्री जो इसके उपयोग के साथ जुड़े रहे हैं वे हैं ओलिवर विलियमसन और डीसी नार्थ (संदर्भ दे) हैं। जैसा कि आप अर्थशास्त्र में इसके उपयोग को देख सकते हैं कि समाजशास्त्र में इसके उपयोग से काफी अलग है। जबकि, अर्थशास्त्र में इस शब्द का उपयोग समाजशास्त्र के लिए थोड़ा महत्व का है, संस्थानों की सामाजिक अवधारणा, संस्थागत परिवर्तन और संस्थागतकरण अर्थशास्त्र के अनुशासन के लिए महत्वपूर्ण रहा है। अर्थशास्त्र के लिए समाजशास्त्रीय अर्थों में संस्था की भविष्यवाणी और व्यक्तिगत व्यवहार की व्याख्या मदद कर सकते हैं। अर्थशास्त्र में इसके मूल उपयोग के विरुद्ध कोई संस्था को समझना शुरू कर सकता है और व्यक्तिगत व्यवहार को समझ सकता है, जो संस्था की सामाजिक अवधारणा का सुझाव देता है।

अर्थशास्त्र में इसके प्रारंभिक उपयोग के बाद यह शब्द समाजशास्त्र में आया। इस शब्द के सबसे पहले उपयोग का श्रेय समाजशास्त्री हर्बर्ट स्पेंसर को जाता है। स्पेंसर ने यह सुझाव दिया कि समाज एक जीव है और संस्थाएं समाज का अंग हैं।

9.2.1 संस्थाओं का प्रयोजन

जर्मन समाजशास्त्री अर्नोल्ड गेहलेन (1980) का यह सुझाव है कि मनुष्य एक सांस्कृतिक दुनिया के साथ अपनी सहज दुनिया को पूरक बनाना चाहते हैं। उनका यह सुझाव है कि असंपूर्णता की इस भावना और पूरा करने के प्रयास संस्थानों के प्रादुर्भाव को बताते हैं। थॉमस लखमैन अपनी किताब 'द सोशल कंस्ट्रक्शन ऑफ रियलिटी' (1967) में इस विचार को व्यक्त करती हैं और सुझाव देती हैं कि मनुष्य अपने जैविक अविकसित होने की स्थिति को सामाजिक मंड़प अथवा धर्म के साथ अपने आस-पास द्वारा क्षतिपूर्ति करते हैं। इसलिए संस्थाएं मानव जीवन को उनके प्राकृतिक परिवेश से जोड़कर मध्यवर्ती सामाजिक संबंधों और प्रतीकात्मक संरचनाओं की मदद से मानव को सार्थक बनाती हैं।

9.2.2 संस्थानों के प्रकार

समाजशास्त्री सामान्यतः संस्थानों को प्रमुख संस्थानों के पांच समूहों में वर्गीकृत करते हैं जो इस प्रकार हैं:

- आर्थिक संस्थाएं: ये वे संस्थाएं हैं जो वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन, उपभोग और वितरण के अनुरूप हैं ।
- सामाजिक स्तरीकरण की संस्थाएं: ये वे संस्थाएं हैं जो सामाजिक हैसियत और प्रतिष्ठा के लिए भिन्न भिन्न पहुंच को विनियमित और नियंत्रित करती हैं ।
- रिश्तेदारी, विवाह और परिवारः ये संस्थाएं प्रजनन को नियंत्रित और विनियमित करती हैं ।
- राजनीतिक संस्थाएं: ये सत्ता के नियमन और वितरण पर ध्यान देती हैं ।
- सांस्कृतिक संस्थानः ये धार्मिक, प्रतीकात्मक और सांस्कृतिक प्रथाओं को विनियमित करती हैं ।

9.3 सामाजिक संस्थाओं का परिप्रेक्ष्य

सामाजिक संस्थान व्यवस्थित मान्यताएँ और मानदंड होते हैं जो मूलभूत सामाजिक जरूरतों को पूरा करने पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं। यह सामाजिक जरूरत समाज के सदस्यों के प्रतिस्थापन (प्रजनन और परिवार) और आदेश के संरक्षण से संबंधित है। समाज की संरचना में सामाजिक संस्थाएं अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं। उदाहरण के लिए परिवार की रिश्तेदारी और अनाचार समाज की संरचना को समझने में मदद करते हैं। समाज की संरचना इन शर्तों के माध्यम से स्पष्ट हो जाती है कि ये मानदंड जनादेश के साथ-साथ समाज के सदस्यों के हितों की सेवा करने के लिए उनकी अनुकूल विशेषता है।

सामाजिक संस्थाओं का समाजशास्त्रियों द्वारा विभिन्न तरीकों से अध्ययन किया गया है। जबकि कुछ सामाजिक संस्थानों को अहम हिस्सों के रूप में समझते हैं जिन्हें समग्र समाज के लिए ठीक प्रकार से कार्य करना चाहिए, अन्य आदर्श परिस्थितियों के तहत यथास्थिति की स्थापना रूप में सामाजिक संस्थाओं को देख सकते है जो वैमनस्य का कारण बनती हैं। इन परिप्रेक्ष्यों में से कुछ को हम निम्नानुसार देखते हैं। इन सभी परिप्रेक्ष्यों से सामाजिक संस्थानों के कुछ पहलूओं पर प्रकाश डाला गया है जिससे सामाजिक संस्थानों से संबंधित हमारी जानकारी बढ़ सकती है।

9.3.1 कार्यात्मकता परिप्रेक्ष्य

कार्यात्मकता परिप्रेक्ष्य उन भूमिकाओं और सेवाओं पर प्रकाश डालते हैं जिनका संबंध बड़े समाज से होता है। कार्यात्मकता परिप्रेक्ष्य संस्था को समाज के रूप देखते हैं। किसी संस्था का महत्त्व उसके द्वारा समाज की समग्र भलाई के लिए किए गए कार्यों से पता चलता है। कार्यात्मकता परिप्रेक्ष्य के नजरिए से पता चलता है कि सामाजिक संस्थाएं पांच तरीकों से समाज की जरूरतों को पूरा कर रही हैं। एक समाज की कार्यात्मक आवश्यकताओं कि संस्थाओं को पूरा कर रहे हैः 1) वृद्धावस्था, रोग, युद्ध या प्रवास की वजह से समाज के लोगों की कमी का प्रतिस्थापन। यह कार्य अप्रवासन, विलय या यौन प्रजनन के माध्यम से नए सदस्यों को जोड़ कर किया जाता है। 2) नए सदस्यों की सामाजिकता और शिक्षा। 3) समाज के सदस्यों के बीच वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन, परिसंचरण और वितरण। 4) दिन-प्रतिदिन की अंतःक्रियाओं और शासन को व्यवस्थित करते हुए, साथ ही बाहरी हमलों, जो समाज को नष्ट करने की धमकी देते हैं, उससे बचाकर समाज को संरक्षित करते हुए उसे सुचारू रूप प्रदान करना। 5) लोगों को धर्म, संस्कृति, भाषा, आदि जैसे संगठनों के प्रति निष्ठा बनाने और पुनः पेश करने की अनुमति देकर अपनेपन और उद्देश्य की भावना को बढ़ावा देना।

9.3.2 द्वंद्व परिप्रेक्ष्य

द्वंद्व परिप्रेक्ष्य प्रकार्यवादी परिप्रेक्ष्य से सहमत हैं और वे यह स्वीकार करते हैं कि संस्थान समाज की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। हालांकि संघर्ष परिप्रेक्ष्य वालों का यह तर्क है कि संस्थान पदानुक्रम स्थापित करते हैं और असमानताओं को बरक़रार रखने का कार्य करते हैं। उदाहरण स्वरूप यह देखा जा सकता है कि संघर्ष परिप्रेक्ष्य इस बात पर बल देते हैं कि शिक्षा के रूप में प्रमुख संस्थान ने समाज के शक्तिशाली समूहों को विशेषाधिकार देने के लिए किस प्रकार कार्य किया है। द्वंद्व परिप्रेक्ष्य इस बात पर भी बल देता है कि संस्थान विशेषाधिकार के रखरखाव की दिशा में कार्य करते हैं। इसके साथ-साथ द्वंद्व परिप्रेक्ष्य इस बात पर प्रकाश डालता है कि संस्थान उनके लिए प्रतिरोधी और दमनकारी होते हैं जो संस्थानों को नुकसान पहुंचाते हैं। उदाहरणस्वरूप संघर्ष परिप्रेक्ष्य इस बात पर बल देता है कि परिवारनामी संस्थान में महिलाओं को श्रम संबंधी शोषण का सामना करना पड़ता है। सामाजिक संस्थानों के नस्लवादी, लैंगिक और घोर रूढ़िवादी स्वरूप पर भी इसने प्रकाश डाला है। संस्थानों द्वारा निर्धारित मानदंडों और अपेक्षाओं के निहित धारणाओं पर संघर्ष परिप्रेक्ष्य प्रहार करता है। संस्थानों के प्रबल मानदंडों के अंतर्गत असंगत तरीके से प्राधिकारों को दिया जाता है।

9.3.3 अंतःक्रियावादी परिप्रेक्ष्य

पहले के दोनों (जैसे, कार्यशीलवादी परिप्रेक्ष्य और संघर्ष परिप्रेक्ष्य) के विपरीत पारस्परिक अन्तःक्रिया (Social Interaction) संबधित परिप्रेक्ष्य वास्तविक अन्तःक्रिया (Social Interaction) में संस्थान किस प्रकार भूमिका अदा करता है, इस बारे में सूक्ष्म दृष्टिकोण में रूचि रखता है। यह पारस्परिक अन्तःक्रिया (Social Interaction) और रोजमर्रा के व्यवहार में संस्थानों के ढ़ांचा और सुविधा के स्वरूप पर कब्जा करना चाहता है। पारस्परिक अन्तःक्रिया (Social Interaction) संबधित परिप्रेक्ष्य का यह तर्क है कि संस्थान हमारे दैनिक पारस्परिक अन्तःक्रिया (Social Interaction) और व्यवहार को गठित करते हैं। हमारे दिन-प्रतिदिन के अन्तःक्रिया (Social Interaction) और व्यवहार उन भूमिकाओं और स्थितियों से परिशोधित होते हैं जो दिए गए हैं (जिन्हें हम स्वीकार करते हैं), जिन्हें हमें समूहों में सौंपा गया है (और

वचनबद्धता का वादा लिया गया है) और वह भी उन संस्थानों के अन्दर जिनमें हम कार्य करते हैं। उदाहरण के लिए शिक्षा की संस्था के भीतर एक शिक्षक की भूमिका विशिष्ट तरीकों से अन्तःक्रिया (Social Interaction) को गठित करती है। इसे केवल छात्रों, अभिभावकों और शिक्षा की संस्था द्वारा परिभाषित अन्य हितधारकों की भूमिकाओं के संबंध में समझा जा सकता है। विभिन्न भूमिकाओं और स्थितियों से शिक्षा संस्थान इसका महत्व ग्रहण करता है जिसे लोग अपने दिन-प्रतिदिन के अन्तःक्रिया (Social Interaction) में सुसंगत तरीके से अदा करने और आगे ले जाने के लिए सहमत होते हैं।

9.4 संगठन

संस्थानों को जरूरी नहीं कहा गया है परन्तु वे प्रामाणिक अपेक्षाएं होती हैं जो समाज के सदस्यों के बीच अन्तःक्रिया (Social Interaction) की संरचना करते हैं। दूसरी ओर संगठन ठोस संरचनाओं के साथ औपचारिक निकाय हैं जिसमें गैर-सदस्यों से सदस्यों को अलग करने की परिभाषित सीमाएं शामिल होती हैं। इस कारण जहाँ संस्था औपचारिक रूप से अस्थिर हैं, संगठनों को औपचारिक रूप से निकाय कहा जाता है। संस्थान सामाजिक रूप से नियमों के सुसंगत और व्यवस्थित अंतःस्थापित दल होते हैं। संगठन विशिष्ट सुविधाओं वाले संस्थानों के विशेष मामले होते हैं। इसलिए संस्थाएं फुटबॉल के नियम जैसी होती हैं। वे उस नियम को बनाते हैं जिसमें खेल को खेला जाना है। फुटबॉल के संदर्भ में संगठन का एक अच्छा उदाहरण फेडेरेशन इंटरनेशनल डे फुटबॉल एसोसिएशन (फीफा) जो कि संगठन इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ एसोसिएशन फुटबॉल भी कहलाता है।

हम भारतीय डाक सेवा, भारतीय कॉफी हाउस, केंद्रीय विद्यालय, दिल्ली पुलिस, खादी ग्रामोंद्योग जैसे संगठनों के दूसरे उदाहरणों पर भी विचार कर सकते हैं। इन सभी संगठनों की कुछ सामान्य विशेषताओं के रूप में किन किन बातों की पहचान की जा सकती है?

अपने आकार-प्रकार, विस्तार, दक्षता और लक्ष्यों की विशिष्टता में अंतर के बावजूद, उपरोक्त उल्लिखित संगठन बड़े पैमाने पर संचालन को सुविधाजनक बनाने की दिशा में कार्य करते हैं। उनके बारे में स्पष्ट रूप से कहा गया है और लक्ष्यों को परिभाषित किया है कि वे प्राधिकरण और आदेश की श्रृंखला के एक स्थापित पदानुक्रम का अनुसरण करते हैं। सामाजिक कार्रवाई के संदर्भ में भी संगठनों को देखा जा सकता है क्योंकि संगठन में कम से कम निर्णय लेने और कार्य करने की कुछ क्षमता होती है (कोलमैन, 1982; हिंद, 1989)।

आधुनिक औद्योगिक समाज व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए परिष्कृत बड़े पैमाने पर संगठनों पर अपनी निर्भरता के लिए अनोखे हैं। आधुनिक औद्योगिक और औद्योगिक उपरांत समाजों के संगठन आकार और दायरे के हिसाब से बहुत बड़े हैं। तर्क यह दिया जाता है कि श्रम के विशेष विभाजन के बढ़ाने से संगठन भी अधिक परिष्कृत हो जाते हैं।

9.5 संगठनों का दृष्टिकोण

किसी संगठन की प्रकृति और संगठन संरचना के विभिन्न दृष्टिकोण हो सकते हैं। ये दृष्टिकोण हमें यह समझने में मदद करेंगे कि संगठन क्या हैं और कैसे काम करते हैं।

9.5.1 अमिताई एट्ज़ियोनी

अमिताई एट्जियोनी (1969; पृष्ठ 155) संगठनों को "सामाजिक इकाइयों" के रूप में परिभाषित करते हैं जो विशेष लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु मुख्य रूप से उन्मुख होते हैं। एट्जियोनी संगठनों की विशेषताओं के रूप में निम्नलिखित सुझाव देते हैं :

1) श्रम/शक्ति/जिम्मेदारियों के विभाजन, ऐसे विभाजन जानबूझकर कुछ लक्ष्यों को प्राप्त करने लिए किये जाते हैं।

2) बिजली केंद्रों की मौजूदगी जो कि उत्पादकता को नियंत्रित करे, दक्षता की निगरानी करें और समीक्षा के उपरांत इसकी फिर से संरचना करे, और

3) कर्मियों के प्रतिस्थापन, स्वस्थ कर्मचारी/भागीदार पूल को कायम रखना और दूसरों को जो स्थानांतरित किये गए हैं और/या पदोन्नति पाए हैं (एट्जियोनी, 1964)।

एट्जियोनी (1961) संगठन और निचले स्तर के प्रतिभागियों को व्यवस्थापित करने वाले लोगों के बीच सत्ता संबंध के आधार पर संगठनों को विभाजित करते हैं। संबंध निम्न बातों के आधार पर हो सकता हैः 1) यह अनुपालन पर- यह निचले स्तर के प्रतिभागियों को प्रतिबंधों के भय से उनके वरिष्ठ अधिकारियों की मांगों को पूरा करने के लिए जो इसके लिए सहमत हैं या मजबूर हैं। 2) उपयोगितावादी विचारधारा के कारण, अथार्त वे ऐसी चीजे प्राप्त कर रहे हैं जो उनके लिए कीमती हैं। 3) साझा विचार और मूल्य, अर्थात् प्रशासनिक समूह के साथ-साथ निम्न स्तरीय प्रतिभागी समान धारणाएं, मानदंड, मूल्य और विचार को साझा करते हैं।

एट्जियोनी का वर्गीकरण 'अनुरूपता' के तत्व पर आधारित है, जिसमें एट्जियोनी द्वारा यह बताया गया है कि अनुरूपता दो तत्वों पर आकस्मिक है। उन लोगों द्वारा ताकत का इस्तेमाल होता है जो संगठन में निर्णय लेते हैं और निचले स्तर के प्रतिभागियों को भी शामिल करते हैं। एट्जियोनी सुझाव देता है कि शक्ति तीन प्रकार की होती है : थोपी गई (भय और बल नियोजित), लाभकारी (फायदे वाली) और मानक (मानदंडों और मूल्यों पर पारस्परिक समझौते)। इसके साथ उन्होंने यह भी कहा है कि निचले स्तर के प्रतिभागियों की प्रतिभागिता तीन प्रकार की होती हैः 1) अलगाव 2) गणनात्मक तथा 3) नैतिक। एट्जियोनी का मत है कि किसी प्रकार की शक्ति प्रतिभागी के कुछ रूपों से मिलती जुलती है। थोपी गई शक्ति को केवल विमुख प्रतिभागिता के साथ से लागू किया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर जेल कैदियों और जेल कर्मचारियों के बीच के संबंध में जबरन-अलगाव होने की ही उम्मीद की जा सकती है, कि जेल कर्मचारी आदेश थोपने वाले होते हैं और जेल कैदियों को जेल के काम काज में प्रतिभागिता से अलगाव होता है। इस संयोजन के आधार पर एट्जियोनी संगठनों के रूप में इन संगठनों को अलग करता है कि जिनके पास 'आदेश' लक्ष्य होते हैं।

ऐसे भी संगठन हैं जिनका 'आर्थिक' लक्ष्य हैं और जिनके पास लाभकारी शक्ति एवं गणनात्मक प्रतिभागिता है। उदाहरणस्वरूप इन्डियन कॉफी हाउस में सभी श्रमिक बिक्री को बढ़ाने के लक्ष्य से जुड़े हैं जिसे वे अपनी व्यक्तिगत वित्तीय लक्ष्यों से जुड़ी आय में सुधार के रूप में देखते हैं।

तीसरे प्रकार का संगठन नैतिक प्रतिभागिता के साथ मानक शक्ति को जोड़ता है। ये संगठन ऐसे हैं जिनका लक्ष्य 'संस्कृति' हैं। उदाहरण के लिए चर्च अपने प्रतिभागियों को कोई मेहनताना नहीं देते हैं और न ही वे उन्हें भाग लेने के लिए मजबूर करते हैं। प्रतिभागी चर्च में भाग लेते क्योंकि वे उन मूल्यों, मानदंडों और विचारों पर विश्वास करते हैं जिसे चर्च प्रचारित करते हैं।

9.5.2 मैक्स वेबर

एट्जियोनी का संगठन की परिभाषा और वर्गीकरण मैक्स वेबर के कार्यों पर आधारित है। नौकरशाही का वेबर मॉडल समाज में प्राधिकरण की प्रकृति पर उनके विस्तृत सिद्धांत के

व्यापक संदर्भ में सामने आया है। उन्होंने औद्योगिक समाजों के संगठनों प्रकाश डाला है और बताया है कि जब उन्हें 'नौकरशाही' के तरीके से प्रशासित किया गया तो वे उच्च दक्षता प्राप्त करने में सक्षम थे । वेबर (1964, पृष्ठ 337) ने स्पष्ट किया कि नौकरशाही प्रशासन जिसमें विश्वसनीयता, अनुशासन की कठोरता के साथ साथ स्थायित्व के कारण किसी भी अन्य से बेहतर था।" यह इस प्रकार के परिणाम की गणना की विशेष रूप से उच्च डिग्री संभव बनाता है... और औपचारिक रूप से सभी प्रकार के प्रशासनिक कार्यों के लिए आवेदन करने में सक्षम है। जिस प्रकार से प्रशासन जैसे के बारे में वेबर नौकरशाही प्रशासन के संबंध में अपने विचारों को व्यक्त करता है यह आधुनिक औद्योगिक समाज के सभी प्रमुख बड़े संगठनों व्यापार, धर्मार्थ संगठनों, धार्मिक संगठनों और यहां तक कि राजनीतिक दलों तक फैला हुआ है।

वेबर का तर्क है कि वांछित की प्राप्ति हेतु नौकरशाही प्रशासन मानव संसाधन के आयोजन का सबसे कारगर तरीका है। वेबर नौकरशाही को बहुत अधिक नियंत्रण अथवा अक्षमता के अंतर्निहित जोखिमों के रूप में नहीं समझता है। नौकरशाही प्रशासन समर्थन करने वाली कई स्थितियों का वह सुझाव देता है जो नौकरशाही को प्रशासन का सबसे प्रभावी रूप बनाते हैं। ये इस प्रकार है : 1) अधिकारियों को व्यवस्थित करने वाली और उनकी शक्ति एवं प्रभाव को लिखित बयान द्वारा निर्देशित करने वाली श्रृंखला। 2) कार्यालयों को पदानुक्रम के हिसाब से व्यवस्थित किया जाता है, जहाँ प्रत्येक क्रमिक स्तर पर सभी को अपनाया जाता है जो कार्यालय आधार पर प्राधिकारी के साथ होते हैं। 3) कार्यालयों की क्षमता के अनुसार ही आदेश जारी किए जाते हैं और उन आदेशों का अनुपालन किया जाता है क्योंकि नियम बताते हैं कि वे उन्हें जारी करने वाले कार्यालय की योग्यता के अंतर्गत होते हैं। 4) नियमों और प्रक्रियाओं का एक स्पष्ट बयान जिसके अंतर्गत प्रत्येक संभावित आकस्मिकता सैद्धांतिक रूप से प्रदान की जाती है। 5) सभी जानकारियाँ अनिवार्य रूप से 'ब्यूरो' के साथ रिकॉर्ड की जाती है/लिखी जाती है ताकि प्रत्येक लिखित रिकॉर्ड्स और फाइलों को सुरक्षित रखा जा सके। 6) कार्यालय हेतु तकनीकी योग्यता के संदर्भ में नियुक्ति की एक संविदात्मक विधि। 7) रोजगार/अनुबंध के मामले में लिखित व्यक्तिगत और व्यापार/आधिकारिक मामलों के बीच एक स्पष्ट अंतर किया जाता है (पुग एट अल।, 1964) ।

नौकरशाही संगठन के संबंध में वेबर की अवधारणा के बारे में लोग विशेष समूह के सदस्य के रूप में भूमिकाएं अदा करते हैं जिन पर उनका कोई नियंत्रण नहीं होता है। इसके स्थान पर वह सुझाव देते हैं कि व्यक्तियों को नौकरशाही प्रशासन में उनकी भूमिकाओं द्वारा नियंत्रित किया जाता है जो व्यक्ति को तर्कसंगत निर्णय हेतु बहुत अधिक अवसर देने की अनुमति प्रदान नहीं करता है। वेबर का यह तर्क है कि नौकरशाही संगठन को ये स्थितियाँ सबसे अधिक दक्ष बनाती हैं। नौकरशाही के अंतर्गत वेबर यह सुझाव देते हैं ।

9.5.3 इरविंग गॉफमैन

संगठनों की उस वर्ग को गोफमैन ने रेखांकित किया जो कुछ मामलों में एक-दूसरे से भिन्न हैं, फिर भी उनमें एक समान विशेषता होती है। अस्पतालों, मठों, जेलों और बोर्डिंग स्कूलों पर विचार करें, ये सभी कई मामलों में एक-दूसरे से भिन्न हैं, फिर भी उनमें एक समान विशेषता होती है और वह यह है कि सभी संगठन में प्रतिभागी हैं। ये संस्थान स्कूलों से कई बातों में भिन्न हो सकते हैं, जहां प्रवेश जेलों के विपरीत स्वैच्छिक है परन्तु जेल जाना बल पूर्वक और अनैच्छिक होता है। इसी प्रकार उन सभी संस्थानों में अंतर हो सकते हैं जैसे सेना का शिविर और जहाँ पर अक्सर लोगों की स्पष्ट सहमति के बिना 'इलाज' किया जाता

है। गोफमैन (1961) द्वारा इन संस्थानों को संपूर्ण संस्थानों का नाम दिया गया हैं। गोफमैन (1961) ने तर्क दिया कि इन सभी संस्थानों के पास अपने प्रतिभागियों की व्यक्तिगत विशेषताओं में अंतर के बाद भी एक समान संरचना होती है, जो 'सामान्य समाज' की मूल व्यवस्था से बहुत भिन्न होती है। उनका सुझाव है कि किसी 'सामान्य समाज' के कार्य, फुर्सत के पल और घर का निर्धारण विशिष्ट परिभाषित क्षेत्रों द्वारा किया जाता है। लोग जीवन के इन विभिन्न क्षेत्रों में और अलग नियंत्रण के तहत अपने जीवन को व्यवस्थित करते हैं। 'संपूर्ण संस्थाएं' संगठन हैं जिससे सभी तीन कार्य निहित क्षेत्र में और एक नियंत्रण के तहत स्थानीयकृत होते है। निवासी, मरीज, कैदी या भिक्षु संबंधित एवं औपचारिक रूप से बनाए गए ढांचे में अपने जीवन को बिताते हैं और थोड़ा दृबहुत एक जैसे अनुभवों से गुजरते हैं।

इन 'संपूर्ण संस्थानों' में निवासियों ने 'रोजगार' (कार्य) और विशेषाधिकार प्राप्त स्थिति के साथ एक ढाँचा निर्धारित किया है जो रोजगार/अपेक्षित व्यवहार/कार्य के प्रति उनकी अनुरूपता को मजबूत बनाता है और इन संगठनों को चलाने वाले लोगों हेतु न्यूनतम असुविधा पैदा करता है कैदियों और प्रशासनिक कर्मचारियों के बीच बातचीत व्यक्तिपरक होती है और जो बात कैदियों को उनसे जोड़ती है वह है अनुभवों की समानता और कर्मचारियों के लिए एक सामूहिक विरोध जो एक नियंत्रण और शक्तिशाली समूह का गठन करते हैं । उनका तर्क है कि ऐसे संस्थानों में कैदियों को मुक्त होने की चाहत होती है, परन्तु इन स्थानों को छोड़ने पर उन्हें इसकी याद आती है।

गोफमैन यह सुझाव देते हैं कि जब लोग दलों में रहते हैं तब संस्थागत व्यवस्था उनके जीवन की संरचना हेतु बनाई जाती है जिससे उन्हें थोड़ा बहुत प्रशासित किया जाता है।

9.6 संगठनों का वर्गीकरण

जैसा कि हमने उपरोक्त संगठनों को देखा है कि सत्ता संबंधों के आधार पर प्रतिभागियों और प्रशासकों को गोफमैन और एड्ज़ियोनी द्वारा कार्य संगठनों और उपचार संगठनों के रूप में बांटा किया गया है। 'मुख्य लाभार्थी' के आधार पर ब्लौ और स्कॉट (1963) ने चार श्रेणियों में संगठनों को वर्गीकृत करने का एक और रास्ता बताया है। वे सुझाव देते हैं कि ये श्रेणियां निम्न चार हो सकती हैंः 1) पारस्परिक लाभ, वे सभी जो संगठन को बनाते हैं। 2) व्यवसाय, जहां प्रमुख लाभार्थी स्वामी या प्रबंधक हैं। 3) सेवा क्षेत्र, जहां प्रमुख लाभार्थी ग्राहक हैं या संपर्क में रहने वाले आम जनता है और 4) कॉमनवेल, अर्थात जहां प्रमुख लाभार्थी बड़ा जन समुदाय है।

9.7 संगठनात्मक व्यवहार

आम तौर पर लोग उस संगठन का चयन करते हैं जिसका वे व्यक्ति के संगठन की कथित 'उपयुक्तता' के आधार पर हिस्सा बनना चाहते हैं। किसी संगठन से जब लोग जुड़े होते हैं तो केवल यही आशा की जाती है कि संगठन के साथ उनकी संबद्धता (संगठन की भांति वे जो भी भूमिकाएं अदा करते हैं और उनके कार्य की प्रकृति जो भी होती है) उनके व्यक्तित्व पर प्रभाव डालती है। इसके साथ साथ यह भी आशा की जाती है कि संगठन से जुड़े लोग भी संगठन के चरित्र पर प्रभाव डालते हैं। इसलिए व्यक्तियों और संगठनों के बीच होने वाले अंतःक्रिया को देखना जरुरी है ।

9.7.1 संगठन के प्रति सदस्यों का दृष्टिकोण

संगठन के प्रति प्रतिभागियों और प्रशासकों के नजरिए इस अन्तःक्रिया का एक महत्वपूर्ण तत्व हैं। उदाहरण के तौर पर किसी आरोग्य- आश्रम के प्रशासक प्रतिभागियों को नियंत्रित एवं प्रतिबंधित करने के लिए अपनी भूमिका से बाध्य होते हैं और वह भी अक्सर उनकी इच्छा के विपरीत। उन्हें इस बात को सुनिश्चित करना होता है कि आरोग्य-आश्रम का कार्य कैदियों से विरोध से प्रभावित न हो। प्रशासक यह सुनिश्चित करने के लिए ज़िम्मेदार होते हैं कि कैदी सुविधा से दूर न हो जाएँ। इसके विपरीत एक समान ढांचे के बावजूद कई मठ, प्रतिभागियों और कैदियों के दृष्टिकोण के चलते आरोग्य- आश्रमों से भिन्न होता है। आरोग्य- आश्रमों में कैदियों की इच्छा (ऊँची दीवार, निगरानी आदि) को रोकने की व्यवस्था की गई होती है, जबकि मठों में ऐसी कोई निगरानी नहीं होती है। यह हमें एक और महत्वपूर्ण तत्व के बारे में बताता है जो कि इन संगठनों में प्रवेश करने वाले व्यक्तियों की भूमिका से संबंधित है।

9.7.2 सदस्यों को सौंपी गई भूमिकाएं

किसी संगठन में आने पर व्यक्तियों को भूमिकाएं दी जाती हैं। ये भूमिकाएँ अपनी-अपनी भूमिका-अपेक्षाओं के साथ आती हैं और ये उम्मीदें इस लिहाज से समाकलित हैं कि यह संगठन के सुचारु कामकाज को सुनिश्चित करती है। प्रत्येक भूमिका उन्हें सौंपे गए विशिष्ट कार्य और नियमों का एक ढ़ांचा है जिसका अनुसरण करना आवश्यक है। संगठन के अन्दर के व्यक्तियों के बीच पारस्परिक संबंध उन भूमिकाओं द्वारा प्रभावित होता है जो कि संगठन से जुड़ने पर वे प्राप्त करते हैं। उदाहरण के लिए जेल में एक कैदी और गार्ड की दोस्ती की संभावना दुर्लभ होती है और उनकी भूमिकाओं में प्रतिद्वंद्विता होती है। इन तत्वों का असर संगठनों के कामकाज पर पड़ता है।

किसी संगठन में प्राप्त भूमिकाओं से व्यक्तियों के सामाजिक अनुभव उनके जीवन को प्रभावित करते हैं। उनका बाह्य सामाजिक व्यवहार संगठनों के अंदर उनके अनुभवों से प्रभावित हो जाता है। 'मॉडर्न टाइम्स' नामक 1936 की अपनी फिल्म में चार्ली चैपलिन ने सामाजिक व्यवहार को प्रभावित करने वाले संगठन के अनुभवों को रेखांकित किया है। उसने इसमें एक कारखाना कार्यकर्ता की भूमिका निभाया है जो बोल्ट कसकर अपने दिन बिताता है। कलाई बार बार इतनी घुमाई जाती है कि वह इसी गति से अनायास ही घूमना शुरू कर देती है।

9.8 सारांश

संस्थान व्यवहार, आचरण और आचरण संहिता की उम्मीद होते हैं जिन्हें व्यक्तियों को पूरा करने के लिए बाध्यता महसूस करते हैं। संस्थाओं की कार्य प्रणाली सम्मेलनों और एक संस्था से जुड़े नियमों को समझने और इनके द्वारा अपने जीवन को जीने के लिए बाध्यता महसूस करने वाले लोगों पर आकस्मिक है। इसके विपरीत संगठनों ने स्पष्ट रूप से नियम बताए हैं कि कोई व्यक्ति संगठन के साथ अपनी संबद्धता के कारण इन्हें पूरा करने के लिए बाध्य है। संस्थान एक समान आदतों, मूल्यों और मानदंडों वाले होते हैं जिनमे किसी व्यक्ति को समाजीकृत किया जाता है जबकि संगठनों में स्पष्ट संबंधन होते हैं जो सदस्यों को गैर-सदस्यों से अलग करते हैं। समाज के भीतर एकजुटता और सामंजस्य को बढ़ावा देने के लिए सामाजिक इकाइयों के रूप में कार्य करने वाली विभिन्न प्रकार की संस्थाएं हैं। संगठन संसाधनों पर बेहतर और अधिक कुशल नियंत्रण की सुविधा के लिए काम करते हैं। ये

समाज की स्पष्ट इकाइयां होती हैं जो सामाजिक प्रक्रियाओं को सुविधाजनक बनाने की दिशा में कार्य करती हैं।

बोध प्रश्न

1) संस्थाएं क्या हैं ? विभिन्न प्रकार की संस्थाएं क्या हैं ? उदाहरण देते हुए समझाएं।

.....

.....

.....

.....

.....

2) संस्थाओं पर कार्यात्मकता और द्वंद्व के परिप्रेक्ष्य में क्या अन्तर है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) एक संगठन के रूप में चर्च पर चर्चा करें ।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4) नौकरशाही से वेबर का क्या तात्पर्य है? नौकरशाही का कौन सा गुण उसे प्रशासन की कुशल प्रणाली बनाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

5) एट्जियोनी ने अपनी रचना में कौन से विभिन्न प्रकार के संगठनों का उल्लेख किया हैं।

.....

.....

.....

.....

.....

6) जेल के उदाहरण का इस्तेमाल करते हुए एट्जियोनी और गॉफमेन के दृष्टिकोण की तुलना करें।

.....

.....

.....

.....

.....

9.9 संदर्भ

बर्गर, पी.एल. एवं ल्यूकमेन, टी. (1967) सोशल कंस्ट्रक्शन ऑफ रियलिटीः न्यू यॉर्कः अंकर बुक्स

ब्लाउ, पी.एम. एवं स्कॉट, डब्ल्यू.आर. (1963) फॉर्मल ऑर्गेनाइजेशनः ए कंपेरेटिव एप्रोच, रूटलेज एंड केगेन पॉल

कोलमेन, जे. (1982), द एसीमेट्रिक सोसायटी, साएराक्यूज, एनवाईः साएराक्यूज यूनिवर्सिटी प्रेस

एट्ज़ियोनी, ए. (1961), ए कंपेरेटिव एनालाएसिस ऑफ कॉम्प्लेक्स आर्गेनाइजेशसः ऑन पावर, इन्वॉल्वमेंट, एंड देयर कोरेलेट्स, न्यूयॉर्कः फ्री प्रेस ऑफ ग्लेंकोइ

एट्ज़ियोनी, ए. (1964), मॉडर्न आर्गेनाइजेंशस, एंगलवुड क्लिफ्स, एन.जे.ः प्रेंटिस-हॉल

एट्ज़ियोनी ए. (1969), ए सोशियोलॉजिकल रीडर ऑन कॉम्पलेक्स आर्गेनाइजेशन, न्यूयॉर्कः हॉल्ट, राइनहार्ट एवं विंस्टन

गेहलेन, ए. (1980) द कंस्टीटयूशन ऑफ सोसायटीः आउटलाइन ऑफ द थ्योरी ऑफ स्ट्रक्चरेशन, कैम्ब्रिजः पॉलिटी प्रेस।

गिंसबर्ग एम (1921) द साइकोलॉजी ऑफ सोसायटीः लंदनः मेथ्यून

हिंडीस, बी. (1989) पॉलिटिकल चॉइस एंड सोशल स्ट्रक्चरः एन एनालाएसिस ऑफ एक्टर्स, इंटेरेस्ट्स एंड रेशनलिटी, लंदनः एडवर्ड एल्गर।

नाइट, जे (1992), इंस्टीटयूशंस एंड सोशल कॉनफ्लिक्ट, कैम्ब्रिज, एनवाईः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस

पग, डी.एस. हिकसन, डी.जे. एवं हिनिंग्स, सी.आर. (1964), राइटर्स ऑन ऑर्गेनाइजेशंस, हचींसनः सेज प्रकाशन

समर, डब्ल्यू.जी. (1906), फॉकवेजः ए स्टडी ऑफ द सोशियोलॉजिकल इंपोर्टेस ऑफ यूसेज, मैनर्स, कस्टम्स, मोर्स एंड मोरल्स, बोस्टन, एमएः गिन एंड कंपनी

टर्नर, जोनाथन, 1997, द इंस्टीटयूशनल ऑडर्रः न्यूयॉर्कः लोंगमेन

वेबेर, एम (1964) द थ्योरी ऑफ सोशल एंड इकोनॉमिक आर्गेनाइजेशन, न्यूयॉर्कः द फ्री प्रेस

इकाई 10 प्रस्थिति और भूमिका*

संरचना

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 प्रस्थिति की अवधारणा

10.2.1 निर्दिष्ट और उपार्जित प्रस्थिति

10.2.2 प्रमुख प्रस्थिति

10.3 भूमिका की अवधारणा

10.3.1 भूमिका सिद्धांत

10.4 भूमिकाओं का वर्गीकरण

10.4.1 निर्धारित भूमिकाएं और उपलब्ध भूमिकाएं

10.4.2 संबन्धित और गैर–संबन्धित भूमिकाएं

10.4.3 मूल, सामान्य और स्वतंत्र भूमिकाएं

10.5 भूमिका व्यवस्थाः सरल और जटिल समाज

10.5.1 सरल समाजों में भूमिकाएं

10.5.2 जटिल समाजों में भूमिकाएं

10.6 भूमिकाओं के आयाम

10.6.1 एकाधिक भूमिकाएँ और भूमिका समूह

10.6.2 भूमिका संकेत

10.6.3 भूमिका परिवर्तन

10.6.4 भूमिका संघर्ष और तनाव

10.7 सारांश

10.8 बोध प्रश्न

10.9 संदर्भ ग्रंथ

10.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आपको समझने में सक्षम होना चाहिएः

- प्रस्थिति की अवधारणा और भूमिकाओं के साथ इसके संबंध की व्याख्या कर सकेंगे;
- प्रस्थिति के प्रकार के बीच अंतर स्पष्ट कर सकेंगे;
- भूमिका की अवधारणा पर चर्चा कर सकेंगे;
- भूमिकाओं को समझने में दोनों दृष्टिकोणों के बीच अंतर कर सकेंगे;

*श्रीति गांगुली, शोधार्थी, जे. एन. यू

- भूमिकाओं का वर्गीकरण कर सकेंगे;
- सरल और जटिल समाजों में भूमिकाओं के बीच अंतर कर सकेंगे;
- भूमिकाओं के विभिन्न आयामों पर चर्चा कर सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

यह इकाई आपको प्रस्थिति और भूमिका की अवधारणा के साथ पेश करने की कोशिश करती है जो कि किसी भी समाज की सामाजिक संरचना के महत्वपूर्ण पहलू हैं। यह सरल और जटिल समाजों और भूमिका समूह, एकाधिक भूमिकाओं, भूमिका–संकेतों और भूमिका–विरोध ी जैसे भूमिकाओं के विभिन्न आयामों पर चर्चा करता है। यद्यपि इकाई में अलग–अलग स्थिति और भूमिका पर चर्चा की गई है, लेकिन दोनों के बीच संबंध की पुनरावृत्ति की जाएगी ।

10.2 प्रस्थिति की अवधारणा

सरल शब्दों में, प्रस्थिति समाज में किसी व्यक्ति द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है। जीवनभर में एक व्यक्ति उम्र, लिंग, वर्ग, व्यवसाय और शिक्षा की तर्ज पर अलग–अलग प्रस्थितियां ग्रहण करता है। एक व्यक्ति की एक समय में कई प्रस्थितियां हो सकती हैं जैसे कि बेटी, सामाजिक कार्यकर्ता, बुक–रीडिंग क्लब सदस्य, गिटारवादक और एक कंपनी में एक प्रबंध ाक आदि। किसी व्यक्ति की ग्रहण की गई सभी प्रस्थितियों का संयोजन प्रस्थिति समूह कहा जाता है।

लिंटन (1936) ने ''अधिकारों और कर्तव्यों के संग्रह'' के रूप में प्रस्थिति को परिभाषित किया (पष .113)। प्रत्येक प्रस्थिति में उससे जुड़ी कुछ व्यवहारिक उम्मीदें होती हैं जिन्हें हम सामाजिक भूमिकाएं कहते हैं (बाद में विस्तार से चर्चा की जाएगी)। प्रस्थिति और भूमिका के बीच संबंध को रेखांकित करते हुए, लिंकन लिखते हैंः ''एक भूमिका प्रस्थिति के गतिशील पहलू का प्रतिनिधित्व करती है – जब वह (एक व्यक्ति) अधिकार और कर्तव्यों को लागू करता है जो एक प्रस्थिति का प्रभाव डालता है, तो वह एक भूमिका निभा रहा होता है – '' (लिंकन 1 9 36ः 114)। इसलिए, प्रस्थिति ग्रहण की जाती है और भूमिका निभाई जाती है। सामाजिक प्रस्थिति और सामाजिक भूमिका को समझने की महत्वपूर्ण अवधारणाएं हैं कि कैसे सामाजिक जीवन व्यवस्थित किया जाता है और गतिविधियों को वितरित किया जाता है।

आदर्श रूप से प्रस्थिति शब्द मात्र समाज में किसी व्यक्ति द्वारा ग्रहण किए गए पदों को संदर्भित करता है, चाहे पुरुष या महिला, वकील या दुकानदार, ब्राह्मण या दलित हम अक्सर हमारे सामान्य रोजगार के उपयोग में उच्च और निम्न स्तर की भावनाओं को देखते हैं। स्थिति वर्गीकरण इस बात पर आधारित होते हैं कि हम कहाँ रहते हैं, हम क्या करते हैं, हम क्या खाते हैं, हम किस प्रकार के स्कूलों या संस्थानों में शामिल होते हैं, हम किस सामाजिक श्रेणी में हैं और इसी तरह। इसलिए, प्रस्थिति सामाजिक वर्गीकरण का आधार भी है और व्यक्तियों के केवल एक पद का ग्रहण नहीं है बल्कि इन पदों को पदानुक्रम में भी रखा जाता है। उदाहरण के लिए कहें, एक व्यवसाय श्रम विभाजन में दूसरे से अलग नहीं है बल्कि प्रतिष्ठा और अलग–अलग पुरस्कृत के मामले में भी स्तरीकृत किया जाता है।

समाजशास्त्री, मैक्स वेबर ने प्रस्थिति को ''सम्मान के सकारात्मक या नकारात्मक सामाजिक अनुमान'' (गेर्थ एंड मिल्स 1 9 46: 187) के रूप में परिभाषित किया और इसे ''जीवन शैली'' से जोड़ा । जीवनशैली के प्रतीक आवास, कपड़े, भाषा बोली जाने वाली, भाषण और व्यवसाय के शिष्टाचार (कुछ नामों के साथ) द्वारा किया जाता है। यही कारण है कि रोजमर्रा की जिंदगी में एक लक्जरी कार या समृद्ध पड़ोस में रहना किसी व्यक्ति की प्रस्थिति का प्रतीक माना जाता है। हालांकि स्थिति सामान्य रूप से किसी व्यक्ति की आय या संपत्ति द्वारा निर्धारित की जाती है, मार्क्स के विपरीत, वेबर ने तर्क दिया कि वर्ग और प्रस्थिति हमेशा ओवरलैप (आच्छादित) नहीं हो सकती है। प्रस्थिति सामाजिक स्तरीकरण का एक स्वतंत्र आधार हो सकता है। इस प्रकार संपन्न और गैर सम्पन्न संपत्ति दोनों ही एक ही प्रस्थिति समूह से संबंधित हो सकते हैं।

जैसे ही प्रस्थिति श्रेणीबद्ध रूप से व्यवस्थित होती है, सकारात्मक या नकारात्मक मूल्य मे होती है, प्रत्येक प्रस्थिति में विशेषाधिकार/गैर विशेषाधिकार जुड़े होते हैं। उदाहरण के लिए, भारत में एक दलित या पूर्व अस्पृश्य प्रस्थिति की स्थिति से, व्यक्तियों को सार्वजनिक कुओं तक पहुंचने, अन्य जातियों के साथ भोजन साझा करने, या ऊपरी जाति के परिवार से शादी करने से रोका जाता है। इसी तरह, संयुक्त राज्य अमेरिका में, काला होने के नाते स्कूलों, आवास और सार्वजनिक स्थानों में रोजगार और अलगाव के अधिकार से इनकार करने का आधार बन जाता है।

हालांकि, किसी प्रस्थिति को सौंपा सम्मान या प्रतिष्ठा अपरिवर्तनीय नहीं है। उदाहरण के लिए, समाज जहां एक महिला, अक्षम, काला या 'अस्पृश्य' होने के नाते इन प्रस्थितियों को कमतर या बदनाम (इरविंग गॉफमैन की अवधारणा) माना जाता था और उनकी भूमिका अब सकारात्मक और सम्मान के लिए संघर्ष के कारण वर्षों से सकारात्मक रूप से देखी जाती है। इसलिए, दोनों प्रस्थितियां और भूमिकाएं गतिशील हैं और बदलती रहती हैं।

लिंकन (1936) दो प्रकार की प्रस्थितियों के बीच अंतर करते हैं :

10.2.1 निर्दिष्ट और उपार्जित प्रस्थिति

निर्दिष्ट स्थितियां : ''वे हैं जो व्यक्तियों को उनके सहज अंतर या क्षमताओं के संदर्भ में निर्दिष्ट किए जाते हैं'' (पी .115)। प्रस्थिति के लिए सार्वभौमिक रूप से प्रयुक्त मानदंड आयु, लिंग, नातेदारी, और नस्ल हैं। किसी विशेष सामाजिक श्रेणी में एक व्यक्ति का जन्म जैसे कि वर्ग और जाति भी कई समाजों में प्रस्थितियों के लिए कसौटी बनाई जाती है लेकिन सभी समाजों मे नहीं।

उपार्जित प्रस्थितिः उपार्जित प्रस्थिति वे हैं जो ''प्रतिस्पर्धा और व्यक्तिगत प्रयास से पूर्ण किए जाने के लिए खुली हैं'' (वही)। ये किसी व्यक्ति के जीवनकाल में गृहीत किए जाते हैं। इस प्रकार व्यवसाय और शिक्षा को हासिल की गई प्रस्थिति कहा जाता है। पत्नी या पति की वैवाहिक स्थिति भी उपार्जित प्रस्थिति कही जाती है।

हालांकि, दोनों के बीच अंतर रेखा उतनी स्पष्ट नहीं है जितनी वे प्रतीत होती हैं। उदाहरण के लिए, यद्यपि निर्दिष्ट प्रस्थिति जन्म के समय तय होती है, लेकिन वे अपरिवर्तनीय नहीं हैं। कुछ लोग जीवन में बाद में सेक्स (लिंग) में परिवर्तन करते हैं। लंबे समय तक लिंग को श्रेणियों में विभाजित किया गया था जो स्त्री और पुरुष है, हालांकि अब ट्रांसजेंडर की तीसरी विस्तृत श्रेणी है जिसमें समलैंगिकों, ट्रांस–लैंगिक (कुछ नामों के लिए) मान्यता के लिए संघर्ष के परिणाम के रूप में कई हिस्सों में भी मान्यता प्राप्त है। इसके अलावा, सख्ती से वर्ग या उस मामले के लिए जाति को निर्धारित और हासिल की गई दो श्रेणियों में से

किसी एक में भी विभाजित करना मुश्किल है। यह जानना भी जरूरी है कि सभी उपार्जित प्रस्थिति पूरी तरह से मेरिट पर आधारित हैं या श्वेत या पुरुष या ऊपरी जाति होने की निर्धारित स्थिति भी प्रस्थिति के अर्जन को प्रभावित कर सकती है।

10.2.2 प्रमुख प्रस्थिति (मास्टर स्टेटस)

हर समाज में हमेशा एक ऐसी प्रस्थिति होती है जो अन्य सभी प्रस्थितियों को ढंकती है या दूसरों द्वारा अधिक महत्व दिया जाता है। इसे मास्टर स्टेटस कहा जाता है। उदाहरण के लिए लिंग, और जाति अक्सर अत्यधिक स्तरीकृत समाजों में मास्टर प्रस्थितियां बन जाती है। संघर्ष समाजशास्त्री अक्सर लिंग और जाति की निर्धारित स्थितियों के साथ संलग्न होते हैं क्योंकि वे तर्क देते हैं कि ये आम तौर पर आय, व्यवसाय, शिक्षा, सामाजिक नेटवर्क आदि सहित व्यक्ति के जीवन के अवसरों को आकार देते हैं।

इसी प्रकार, मानसिक या शारीरिक विकलांगता भी मास्टर स्थिति बन सकती है और समाज के रोजमर्रा के व्यवहार को अक्षम लोगों के प्रति नियंत्रित कर सकती है। बॉक्स 1 दिखाता है कि अक्षमता मास्टर प्रस्थिति कैसे बन सकती है।

बॉक्स 1.

क्या अक्षम लोगों के लिए नया अधिनियम दिव्यांग महिलाओं की जरूरतों का प्रतिनिधित्व करता है?

दीपा और साक्षी मलिक दोनों ने भारत के लिए पदक जीते हैं। लेकिन दोनों के बीच समानताएं शायद वहां खत्म होती हैं। एक सेना अधिकारी और दो की मां की पत्नी व्हीलचेयर बाध्य दीपा ने 2016 को पैराओलम्पिक्स में शॉट–पुट में अपने रजत पदक से गर्व किया, भारतीय महिला द्वारा पहली बार पैरालम्पिक पदक, जबकि साक्षी, रियो में कांस्य पदक के साथ ओलंपिक ओलंपिक में पदक जीतने वाली पहली भारतीय महिला पहलवान बन गई। लेकिन जबकि साक्षी की ओलंपिक की जीत ने उन्हें गृहिणी बना दिया, दीपा का कहना है कि हालांकि भारत सरकार और उनके स्वयं के राज्यों ने पैरा–एथलीटों को लाया, लेकिन सक्षम षरीर के एथलीटों को देश भर मे अधिक महत्व दिया गया और निगमों ने उन्हे समर्थन (एंडोर्समेंट) सौदों पर हस्ताक्षर करने की तलाश की।

– हिंदुस्तान टाइम्स, 08 जनवरी, 2017

10.3 भूमिका की अवधारणा

इस बारे में सोचें कि हमारा प्रत्येक दिन हमारी अलग–अलग प्रस्थितियों से जुड़ी अलग–अलग भूमिकाओं के साथ कैसे शुरू होता है। जैसे कई प्रस्थितियां हैं, उनमें से प्रत्येक के साथ भूमिकाएं जुड़ी हैं। उदाहरण के लिए, एक महिला बेटी, बहन, छात्र, एक निजी शिक्षक, एक दोस्त और अन्य की भूमिका निभाती है। गिडेंस और सटन (2014) भूमिकाओं को परिभाषित करते हैं ''सामाजिक रूप से परिभाषित उम्मीदें कि जिसमें दी गई प्रस्थिति में एक व्यक्ति (सामाजिक स्थिति) आगे बढ़ता है '' (पृ .91)। उदाहरण के लिए, जब यातायात की भीड़ होती है, तो हम यातायात पुलिस को यातायात का प्रबंधन करने और वाहनों के प्रवाह को कम करने की उम्मीद करते हैं। इसी प्रकार, एक रेस्तरां में ग्राहक वेट्रेस को मेनू प्रदान करने, आदेशों को नोट करने और भोजन की सेवा करने की अपेक्षा करते हैं।

भूमिकाएं अंतःक्रिया में किसी प्रकार के सामाजिक आदेश और भविष्यवाणी को बनाए रखने में मदद करती हैं। टर्नर (2006) भूमिकाओं को ''व्यवहार और दृष्टिकोण के समूह'' के रूप में परिभाषित करता है और तर्क देता है कि भूमिका व्यक्तिगत व्यवहार और सामूहिक स्तर पर सामाजिक व्यवहार को व्यवस्थित करने में मदद करती है। बैंटन (1965) की परिभाषा में, भूमिकाएं ''अधिकारों और दायित्वों का समूह'' हैं और एक व्यक्ति का दायित्व उसके साथी का अधिकार क्या है (पी 2)। तो एक रेस्तरां में एक वेट्रेस सेवा करने के लिए बाध्य है और ग्राहक को सेवा लेने का अधिकार है। इस तरह, ''भूमिका की अवधारणा'',मे बैंटन लिखते हैं, ''सहयोग के तत्वों का अध्ययन करने के लिए उपलब्ध साधनों में से एक प्रदान करता है'' (वही)।

न्यूकॉम्ब ने अपेक्षित व्यवहार और व्यक्तियों के वास्तविक व्यवहार के बीच अंतर किया है। अपेक्षित व्यवहार वह है जिसे एक व्यक्ति को उस स्थिति और भूमिका के अनुसार निभाने की उम्मीद होती है। व्यक्ति का वास्तविक व्यवहार अपेक्षित व्यवहार से अलग हो सकता है। बैंटन (1965: 28–29) ने इस भेद को और परिष्कृत किया और कहा कि वास्तविक व्यवहार से संबंधित हो सकता है–

1) **भूमिका संज्ञानः** व्यक्ति के अपने विचार जो उचित हैं, या,

2) **अपेक्षाएंः** अन्य लोगों के विचारों से संबंधित कि वह क्या करेगा, या,

3) **मानदंडः** अन्य लोगों के विचारों से संबंधित कि उन्हें क्या करना चाहिए।

उदाहरण के लिए, एक रसोईये की भूमिका ले लो। नीरज एक होटल में एक मुख्य षेफ(रसोईये) की प्रस्थिति को ग्रहण कर लिया। एक रसोईये के रूप में, उससे भोजन पकाने के लिए समग्र पर्यवेक्षण और समन्वय की भूमिका निभाने की उम्मीद है, जिन्हें भोजन तैयार करना है। इसके अलावा, उनमें से कुछ सामान्य अपेक्षाओं में रसोई के नियमित कार्य वातावरण में स्वच्छता मानकों के अनुरूप अनुशासन और रखरखाव को सुनिश्चित करना शामिल है।

भूमिका सीखना एक छोटी उम्र में शुरू होता है जब बच्चे यह देखने लगते हैं कि कैसे उनके आसपास के लोग उनके साथ और एक दूसरे के साथ व्यवहार करते हैं। असल में बच्चे अक्सर भूमिका निभाते हुए गेम में संलग्न होते हैं जहां वे एक मां, पिता या शिक्षक की भूमिका निभाते हैं। व्यक्तियों के पास उनके जीवन में भूमिका मॉडल भी होते हैं जिनके कुछ पैटर्न/व्यवहार किसी के अपने व्यवहार में शामिल होते हैं। एक आदर्श मॉडल परिवार, पड़ोस, स्कूल या यहां तक कि कुछ दूरस्थ, असंबंधित व्यक्ति भी व्यक्ति हो सकता है जिसे हमने सोशल मीडिया में देखा है।

हमारे दैनिक जीवन में, हम आसानी से बिना किसी प्रयास के एक भूमिका से दूसरे में स्विच करते हैं और एक ही समय में अलग–अलग भूमिका निभाते हैं। एक बेटी के रूप में कैसे व्यवहार करना है, यह एक दोस्त के रूप में कैसे व्यवहार करना है यह उससे अलग है। इसी तरह, सामाजिक परिस्थितियां भी भूमिका निभाती हैं जिसे हम निभाते हैं। वर्कस्पेस के औपचारिक सेट अप में हम कैसे व्यवहार करते हैं, यह अलग है कि हम घर पर कैसे व्यवहार करते हैं। इस प्रकार हम अपने जीवन और भूमिकाओं को विभाजित करते हैं। तो एक आपराधिक वकील घर पर अलग व्यवहार करता है जैसा कि वह अदालत में व्यवहार करता है। हालांकि, यह कहने के लिए कि हर कोई सामाजिक रूप से निर्धारित उम्मीदों के अनुरूप है, वह सच नहीं होता। अपने रोजमर्रा के जीवन में व्यक्ति लगातार भूमिका निभाते हैं। किसी विशेष स्थिति मे सौंपी गई भूमिका को भी चुनौती दी जाती है। उदाहरण के लिए, भारत में ऐतिहासिक रूप से महिलाओं से घरेलू काम करने की उम्मीद की जाती

थी और वह घर के निजी क्षेत्र में काफी हद तक सीमित था। हालांकि, महिलाएं अब ऐसी भूमिका निभाती हैं जो पारंपरिक रूप से शहरी भारत में पुरुषों से अपेक्षा की जाती थी। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि सामाजिक परिवर्तन धीमा है और इसमें कई साल लग सकते हैं और कभी–कभी समेकित संघर्ष भी हो सकते हैं।

10.3.1 भूमिका सिद्धांत

समाजशास्त्र में भूमिका सिद्धांतः संरचनात्मक और अंतःक्रियावादी दृष्टिकोण

भूमिकाओं को समझने के लिए दो अलग–अलग तरीकों से या विचार के दो स्कूलों ने प्रस्तावित किया है। संरचनावादी (लिटन, बैंटन, पार्सन्स और मेर्टन) सामाजिक संरचना में स्थितियों से जुड़े मानदंडों और अपेक्षाओं के रूप में भूमिकाएं देखते हैं जहां व्यक्तियों को ''भूमिका निभाने'' में सामाजीकृत किया जाता है। लिटन (1936) लिखते हैंः ''–किसी भी समाज के सदस्यों को उनकी प्रस्थिति में समायोजित किया जाता है और समाज जितना आसानी से काम करेगा, उतना ही मजबूत होगा'' (लिंकन 1936ः 115)। इस तरह प्रकार्यवादी भी व्यक्तियों की भूमिका पर सहमति ग्रहण करता है।

दूसरी ओर सामाजिक अंतःक्रियावादी (मीड, टर्नर) का तर्क है कि यद्यपि संरचना से बंधे होने से व्यक्ति और उसकी उम्मीदें उनकी भूमिकाओं की व्याख्या और मूल्यांकन करती हैं और वार्ता में लगी होती हैं। प्रकार्यवादियों के लिए यह दी गई अपेक्षाओं के आंतरीकीकरण के बजाय ''भूमिका बनाने'' की एक रचनात्मक प्रक्रिया है।

10.4 भूमिकाओं का वर्गीकरण

हम आगे भूमिकाओं को वर्गीकृत कर सकते हैं 1) निर्दिष्ट भूमिकाएं और उपार्जित भूमिकाएं 2) संबंधपरक और गैर–संबंधपरक भूमिकाएं 3) बुनियादी, सामान्य और स्वतंत्र भूमिकाएं।

10.4.1 निर्दिष्ट और उपार्जित भूमिकाएं

निर्दिष्ट प्रस्थितियां – निर्दिष्ट भूमिकाएं जन्म के समय दी जाती हैं। उस समय से जब कोई व्यक्ति पैदा होता है, तब भूमिका सीखना शुरू होता है जिसे हम समाजीकरण के रूप में जानते हैं। ये भूमिकाएं किसी के लिंग (लिंग), आयु, संबंध, जाति, वर्ग आदि से संबंधित हैं।

उपार्जित भूमिकाएँ – उपार्जित भूमिकाएं वे हैं जो कि एक किसान, विक्रेता, बैंकर, दुकानदार, चालक, वकील, प्रोफेसर आदि की व्यावसायिक भूमिकाएँ योग्यता के आधार पर जीवनपर्यंत में काफी हद तक अधिगृहीत की जाती हैं।

10.4.2 संबंधपरक और गैर–सबंधपरक भूमिकाएं

कुछ भूमिकाएं हैं जो प्रकृति में पूरक हैं और किसी अन्य के संबंध में कल्पना की जाती हैं और परिभाषित की जाती हैं। संबंधपरक भूमिका का एक अच्छा उदाहरण एक ऐसी पत्नी है जिसे पति के बिना नहीं माना जा सकता है। इसी तरह, देनदार की भूमिका किसी लेनदार की भूमिका के बिना मौजूद नहीं हो सकती है।

दूसरी ओर गैर–संबंधपरक भूमिकाएं संगीतकार, शोधकर्ता और चित्रकार की भूमिका जो किसी पर निर्भर या पूरक नहीं हैं। आयु और लिंग भूमिकाएं गैर– संबद्धपरक भूमिकाओं की श्रेणी में काफी हद तक आती हैं जबकि संबंध भूमिकाओं को संबंधपरक के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

10.4.3 मूल,सामान्य और स्वतंत्र भूमिकाएं

बैंटन (1965: 33) ने एक पैमाना विकसित किया जिसकी सीमा अन्य भूमिकाओं से स्वतंत्र भूमिकाओं से मुक्त है।

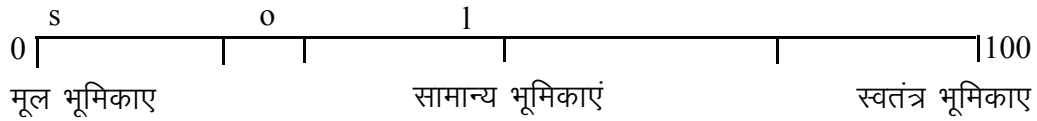

एस = सेक्स भूमिकाएं

ए = आयु भूमिकाएं

व = व्यावसायिक भूमिकाएं

एल = अवकाश भूमिकाएं

- **मूल भूमिकाएं–** मूल भूमिकाएं लिंग और उम्र द्वारा निर्धारित की जाती हैं, जो जन्म के समय व्यक्तियों के लिए निर्धारित होती हैं और ऐसी भूमिकाएँ में सामाजिक संदर्भों मे काफी संख्या मे व्यवहार को आकृति देती है।

- **सामान्य भूमिकाएं –** समान्य भूमिकाएं ज्यादातर व्यक्ति की योग्यता के आधार पर प्रदान की जाती हैं।

- **स्वतंत्र भूमिकाएं –** स्वतंत्र भूमिकाएं योग्यता द्वारा निर्धारित की जाती हैं और अन्य भूमिकाओं के लिए बहुत कम प्रभाव डालती हैं और जिस तरह से लोग प्रतिक्रिया देते है उस व्यक्ति को जो स्वतंत्र भूमिका निभाते हैं। स्वतंत्र भूमिकाओं के उदाहरण अवकाश भूमिकाएं और कई व्यावसायिक भूमिकाएं हैं।

आम तौर पर एक व्यक्ति की यौन भूमिका किसी व्यक्ति की आचरण को आकार देती है और दूसरों की उसकी ओर प्रतिक्रिया किसी अन्य भूमिका से अधिक होती है। व्यावसायिक भूमिकाएं लोगों को विशेष रूप से कार्यस्थल या सामाजिक सभाओं में किसी व्यक्ति को प्रतिक्रिया देने के तरीके को भी आकार देती हैं। अवकाश भूमिकाएं अधिक स्वतंत्र हैं और उदाहरण के लिए एक विशेष सेटिंग के बाहर उसके सीमित प्रभाव है,उदाहरण के लिए गोल्फ क्लब में गोल्फर।

बॉक्स 3 : सेना में युद्ध की भूमिका के लिए महिलाएं

द हिंदू, नई दिल्ली, 04 जून, 2017

एक परिवर्तनकारी कदम में, भारतीय सेना महिलाओं के लिए युद्ध की स्थिति मे भूमिका के लिए तैयार है, केवल कुछ देशों ने विभाजित लिंग की बाधा तोड़ी है – सेना प्रमुख ने कहा कि वह महिलाओं को जवानों के रूप में भर्ती करने के लिए तैयार हैं और यह मामला उठाया जा रहा है सरकार के साथ।

इस पैमाने में विभिन्न भूमिकाओं का स्थान एक समाज से दूसरे समाज में भिन्न होगा। प्राचीन समाजों में, उदाहरण के लिए, लिंग और उम्र (बैंटन 1 9 65: 34) से जुड़ी अत्यधिक अविभाज्य मूल भूमिकाएं थीं लेकिन उन्नत औद्योगिक समाजों में उम्र और लिंग भूमिकाओं का महत्व सीमित और कम है। हम उन्नत समाजों में और अधिक स्वतंत्र भूमिकाएं देखते हैं। उदाहरण के लिए, बुशमेन की प्राचीन समाज में एक महिला की भूमिका उसके

लिंग से जुड़ी हुई थी और वह पुरुषों के लिए परिभाषित भूमिकाओं को निभाने से प्रतिबंधित थी। हालांकि, आधुनिक समाजों में महिलाएं महिला प्रबंधक या डॉक्टर की तरह अधिक स्वतंत्र भूमिका निभाती हैं जहां पुरुषों के समान तरीके से उनका आकलन होता है।

10.5 भूमिका व्यवस्थाः सरल और जटिल

बैंटन (1965) के मुताबिक सामाजिक संगठन में बदलाव को समझने के तरीकों में से एक व्यक्ति को कसौटी के आधार पर मानदंडों का अध्ययन करना है। सरल समाजों में भूमिका आवंटन जटिल औद्योगिक समाजों से भिन्न है।

10.5.1 सरल समाजों में भूमिकाएं

दक्षिणी अफ्रीका में कालाहारी रेगिस्तान में बुशमेन और आर्कटिक वेस्ट में एस्किमो जैसे सबसे सरल समाजों में, उम्र, लिंग और रिश्ते के प्राकृतिक मतभेदों के आधार पर भूमिका आवंटित की जाती है। आइए देखते हैं कि इन मानदंडों के अनुसार भूमिकाएं कैसे वितरित की गईं:

1) सेक्स के आधार पर भूमिकाओं का विभाजन निम्नलिखित तरीके से हुआ था। एक आदमी शिकार के लिए जिम्मेदार है, कपड़ों के लिए खाल तैयार कर रहा है, हथियार बना रहा है, आग का निर्माण कर रहा है और कभी–कभी महिलाओं को लकड़ी और पानी लाने में मदद करता है। दूसरी ओर पत्नी अपने परिवार के लिए आश्रय बनाती है, बच्चों का ख्याल रखती है, इकट्ठा करती है और भोजन तैयार करती है और निवास को साफ रखती है।

2) भूमिका आवंटन का दूसरा आधार उम्र है। मनुष्य के जन्म में एक लड़के का मार्ग चिह्नित होता है जब वह अपना पहला हिरण मारता है और यह मार्ग अनुष्ठानों के साथ मनाया जाता है। उसके बाद, उसे शादी करने की अनुमति है। एक लड़की के मामले में जब वह छोटी बच्ची हो तो शादी कर सकती है लेकिन वह शारीरिक रूप से परिपक्व होने पर ही पत्नी और विवाहित महिला की भूमिका निभाती है। वृद्ध लोगों का सम्मान और परंपराओं, मिथकों और पारिवारिक वंश पर विशेषज्ञों की तरह व्यवहार किया जाता है।

3) तीसरा आधार नातेदारी का है। मां और पिता अपने बच्चों को दुनिया मे लाने की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जब बच्चे वयस्कों के रूप में बड़े होते हैं तो उनके माता–पिता के साथ कुछ पारस्परिक दायित्व होते हैं। पुरुषों और महिलाओं के बीच विवाह तोड़ा जा सकता है लेकिन क्योंकि वे शायद ही कभी तलाक करते हों,यह झगड़ा दुर्लभ है। नातेदारी संबंधों को स्वच्छ रखने के लिए घनिष्ठ संबंधों के बीच विवाह से बचा जाता है।

10.5.2 जटिल समाजों में भूमिकाएं

हमने चर्चा की कि साधारण समाजों में उम्र, लिंग और नातेदारी के भेद पर भूमिकाएं कैसे आवंटित की जाती हैं जिन्हें सबसे कठिन पर्यावरणीय परिस्थितियों में जीवित रहना पड़ता है। लेकिन जैसे ही समाज जटिल हो तो भूमिका विभाजन के लिए नई कसौटी पेश किया जाता है। सामाजिक स्तर एक ऐसा मानदंड है।

1) **सामाजिक स्तरः** कुछ समाजों को महलों, आम लोगों, दासों आदि जैसे स्तरों के आधार पर व्यवस्थित किया जाता है। समान स्तर से संबंधित लोग समान अस्तित्व

साझा करते हैं और राजा के प्रति समान विशेषाधिकार और कर्तव्यों का पालन करते हैं। हालांकि इस तरह का सामाजिक स्तर सरल समाजों की कठोर भूमिका प्रणाली से अधिक लचीला है, सामाजिक स्तर एक हद तक कठोर और भेदभावपूर्ण हो सकता है जहां किसी विशेष श्रेणी में जन्म व्यक्तियों के जीवन की संभावनाओं को प्रभावित करता है। स्तरीकरण की ऐसी कठोर व्यवस्था जिसमे व्यक्ति पैदा हुआ उसे छोड़ना कठिन हो जाता है।

उदाहरण के लिए, भारत की जाति व्यवस्था में जहां एक विशेष जाति में पैदा हुए व्यक्ति को जाति के विशिष्ट मानदंडों, रीति–रिवाजों, व्यवसाय और अन्य जातियों के साथ अंतःक्रिया के नियमों का पालन करने की उम्मीद की जाती है। भूमिकाओं से विचलन अक्सर अस्वीकृत कर दिया जाता है और विशेष रूप से दंडित किया जाता है जब निचली जाति का व्यक्ति ऐसा करता है। हालांकि, ये मानदंड उतने कठोर नहीं हैं जितना कि वे पहले थे, निरंतर संघर्ष और कानूनी कार्रवाई के कारण, जाति आधारित नियम और भूमिकाओं के आधार पर आज भी प्रचलन में हैं।

2) **विविधीकरण और कार्यों का विशेषज्ञता:** जटिल समाज कार्यों में विशेषज्ञता और कौषल के आधार पर वितरित किया जाता है। सबसे बड़े संगठनों से लेकर सबसे छोटे संगठनों तक मे भूमिका विभाजन भी होते हैं।

उदाहरण के लिए, मीरा और उसके दोस्त ने एक छोटी बेकरी खोल दी। दो बेकर्स के साथ–साथ वे दो कर्मचारियों को रखते हैं जिसमे एक ग्राहकों को संभालता है और एक व्यक्ति खाते का प्रबंधन करता है। जब वे घरेलू वितरण सेवा प्रदान करने का निर्णय लेते हैं तो वे घर या कार्यालय में आदेश लेने के लिए एक और व्यक्ति को किराए पर लेते हैं। इसके अलावा जब वे एक बड़ी दुकान खरीदते हैं, तो वे ग्राहकों के लिए बैठने की व्यवस्था करते हैं और उनकी सेवा के लिए दो और लोगों को किराए पर लेते हैं। हम जो देखते हैं वह यह है कि हर कार्य अराजकता और घर्षण से बचने के लिए विभाजित होता है ताकि बेकरी आसानी से चल सके।

10.6 भूमिकाओं के आयाम

10.6.1 एकाधिक भूमिकाएं और भूमिका समूह

समाजशास्त्री, रॉबर्ट के. मर्टन (1957) ने कई भूमिकाओं और भूमिका–समूह की अवधारणा के बीच अंतर करने की आवष्यकता पर बल दिया। लिंकन के सिद्धांत के विपरीत कि प्रत्येक स्थिति में एक एकल, सहयोगी भूमिका होती है, मर्टन का तर्क है कि ''प्रत्येक स्थिति में भूमिकाओं की एक श्रष्ंखला है'' जो इसके साथ जुड़ा हुआ है। इसी को मर्टन भूमिका सेट कहते हैं। यह ''भूमिका संबंधों का पूरक है जिसमें व्यक्ति एक विशेष प्रस्थिति को ग्रहण करने के आधार पर शामिल होते हैं'' (पृ.110)। प्रत्येक प्रस्थिति की अपनी भूमिका–समूह होती है।

मर्टन ने एक मेडिकल छात्र का उदाहरण दिया जिसकी प्रस्थिति एक छात्र के रूप में न सिर्फ शिक्षक से संबंधित है, बल्कि नर्स, चिकित्सक, सामाजिक कार्यकर्ताओं जैसे अन्य प्रस्थिति के गृहीत भूमिकाओं के लिए भी है। मेर्टन ने कहा कि इस तरह की जटिल व्यवस्था भूमिका समूह में भूमिका भागीदारों की विरोधाभासी उम्मीदों को भी उत्पन्न कर सकती है।

दूसरी ओर, कई भूमिकाएं, किसी व्यक्ति की विभिन्न सामाजिक प्रस्थितियों से जुड़ी भूमिकाओं को भी संदर्भित करती हैं। नीचे दिए गए आंकड़े भूमिका समूह और एकाधिक भूमिकाओं के बीच अंतर को समझाते हैं।

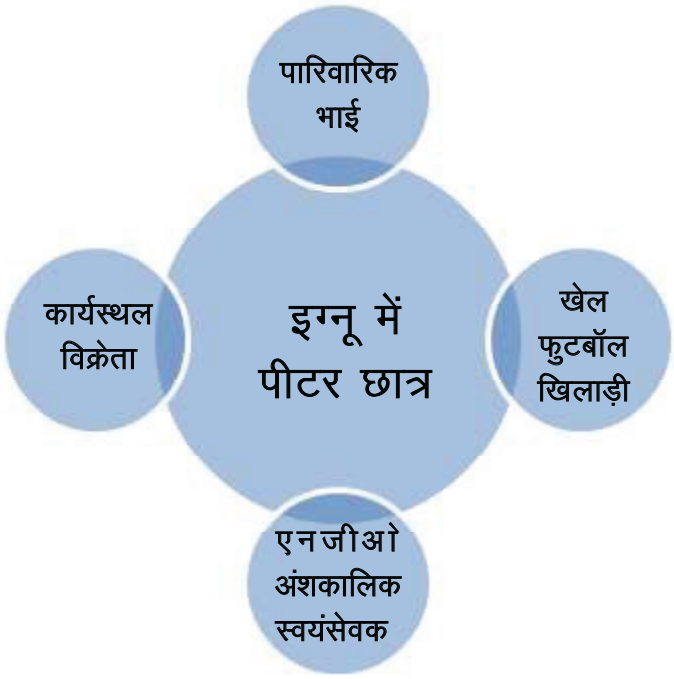

भूमिका सेट

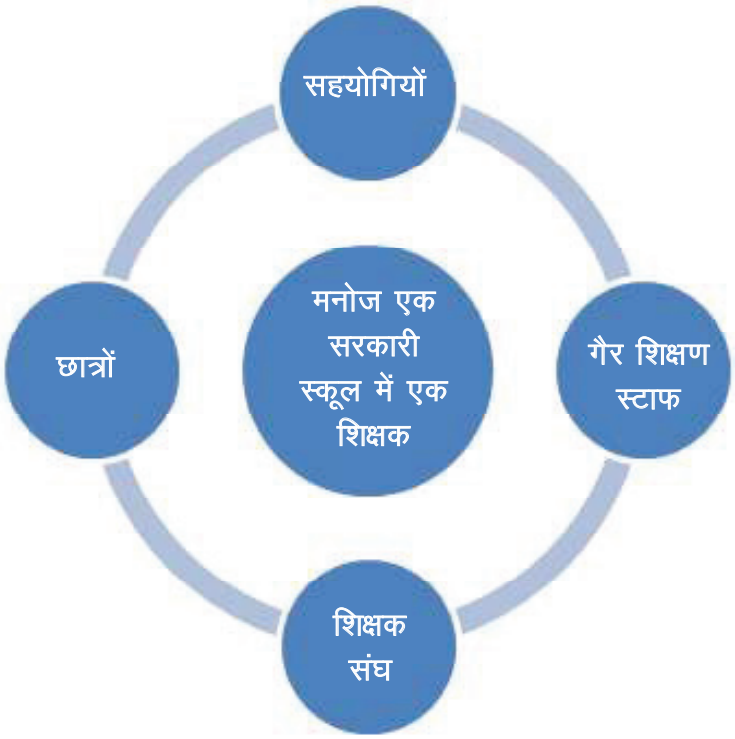

10.6.2 भूमिका संकेत

कपड़े लगभग सभी समाजों में पुरुषों और महिलाओं के बीच अंतर करने के सबसे महत्वपूर्ण तरीकों में से एक रूप की तरह कार्य करते हैं । लेकिन यह पूछना महत्वपूर्ण है कि हमें यह भेद क्यों करना चाहिए। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह स्त्री और पुरुष भूमिकाओं को अलग करने के लिए एक संकेत के रूप में काम करता है और दूसरों को उनकी भूमिकाओं की उम्मीद करने और तदनुसार उनकी प्रतिक्रिया को आकार देने में मदद करता है। बैंटन के अनुसार भूमिकाएँ संचार और नियंत्रण में मदद करती हैं। भूमिका संकेत हमारे रिश्ते, अपेक्षाओं और अंतःक्रिया को आकार देकर संचार के तरीकों के रूप में कार्य करते हैं। वे

व्यक्ति को भूमिका निभाने और दूसरों को संकेत देने के लिए दोनों भूमिकाओं से व्यवहार को नियंत्रित करने और विचलन की जांच करने में भी मदद करते हैं। यदि इस तरह के विशिष्ट संकेत पूरी तरह से त्याग दिए जाते हैं, तो रोजमर्रा की जिंदगी और गतिविधियां बहुत अराजक हो सकती हैं।

हमारे दिन–प्रतिदिन जीवन परिधान व्यक्तियों की भूमिका को परिभाषित करने में मदद करते हैं, भले ही यह एक सुपरमार्केट में एक विक्रेता है, एक ट्रेन में टिकट कलेक्टर या लाल रोशनी में यातायात पुलिस कर्मी । यातायात जाम के दौरान हम अक्सर एक विशेष वर्दी द्वारा पहचाने जाने वाले यातायात पुलिस को उत्सुकता से देखते हैं और उम्मीद करते हैं कि उनसे वह भूमिका निभाई जाए जो उन्हें सौंपा गया है। इसी प्रकार, अस्पतालों में नर्स और डॉक्टरों की प्रत्येक की अनूठी वर्दी होती है जो हमें पहचानने और हमारी अपेक्षाओं को स्थापित करने में हमारी सहायता करती है।

बैंटन ने मूलभूत, सामान्य और स्वतंत्र भूमिकाओं के संदर्भ में विभिन्न भूमिकाओं के संकेतों की पहचान की।

क) **मूल भूमिकाओं के लिए संकेत–** मूल भूमिकाओं के लिए संकेत जो लिंग, आयु और नातेदारी द्वारा बड़े पैमाने पर निर्धारित किए जाते हैं, उनमें नाम, कपड़े और हेयर स्टाइल शामिल हैं। दो लिंगों के पहले नाम ज्यादातर अलग होते हैं। मिस, श्रीमती, श्रीमान,मास्टर जैसे षीर्शक, लिंग, आयु और वैवाहिक स्थिति की पहचान में भी मदद करते हैं।

ख) **सामान्य भूमिकाओं के लिए संकेत–** सामान्य भूमिकाओं के लिए संकेत अक्सर उस स्तर तक निर्भर करते हैं जिस पर किसी विशेष प्रस्थिति के साथ–साथ अन्य भूमिका संबंधों के लिए भूमिका की विशिष्टता और प्रासंगिकता को अलग करना और संवाद करना आवष्यक है। उपरोक्त मे चर्चा की गई पुलिसकर्मी और उसकी वर्दी का मामला सामान्य भूमिका के लिए संकेत का एक उदाहरण है।

ग) **स्वतंत्र भूमिकाओं के लिए संकेत–** चूंकि स्वतंत्र भूमिकाओं के लिए अन्य भूमिकाओं का कम प्रभाव पड़ता है, उनके लिए संकेत सीमित हैं। स्वतंत्र भूमिकाओं के लिए संकेत केवल विशेष संदर्भों में प्रासंगिकता रखते हैं और अधिकांषतः अन्य सामाजिक परिस्थितियों में प्रासंगिकता खो सकते हैं। बाहरी लोगों के लिए ऐसे संकेत अक्सर प्रतिष्ठा संकेत के रूप में कार्य करते हैं।

10.6.3 भूमिका परिवर्तन

भूमिकाएं वही नहीं रहतीं और अक्सर विकसित होती रहती हैं। व्यक्ति एक भूमिका से दूसरे में जाते हैं और भूमिकाओं के पुराने समूह में नई भूमिकाएं जोड़ दी जाती हैं। जब कोई व्यक्ति एक भूमिका से दूसरी भूमिका में जाता है तो इस नई भूमिका के अधिकारों और दायित्वों से परिचित होना महत्वपूर्ण हो जाता है। यह न केवल उस व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण है जो भूमिका परिवर्तन से गुजरता है बल्कि अन्य सभी लोगों के लिए भी है जो व्यक्ति के साथ नई भूमिका के अनुसार अपने व्यवहार और अपेक्षाओं को संशोधित करने के लिए जुड़े हुए हैं।

यही कारण है कि भूमिका परिवर्तन अक्सर समारोहों द्वारा चिह्नित किया जाता है। पहला महत्वपूर्ण परिवर्तन जो प्रत्येक समाज में व्यक्ति बचपन से वयस्कता तक मे अनुभव करता है। यदि आपको याद होगा, बुशमेन के जनजातीय समाज में एक लड़का एक आदमी तब

बन जाता है जब वह पहली बार अपनी हिरन का शिकार करता है और यह अनुष्ठानों के साथ मनाया जाता है। इस बिंदु से उसे शादी करने की भी अनुमति है। इसी तरह, कई समाजों में लड़कियों की परिपक्वता यौवनारम्भ संस्कारों द्वारा चिह्नित की जाती है।

जब कोई व्यक्ति पत्नी या पति की भूमिका निभाने वाला होता है तो उसके बाद एक समारोह होता है जहां परिवार, दोस्त, पड़ोसी और समुदाय भाग लेते हैं। समारोह इस बदलाव को व्यक्ति के साथ–साथ दूसरों के लिए एक महत्वपूर्ण क्षण बनाने में मदद करते हैं। इसी तरह, जब कोई व्यक्ति किसी संगठन के अध्यक्ष, या प्रधान मंत्री या किसी देश के राष्ट्रपति की तरह एक महत्वपूर्ण प्रस्थिति प्राप्त करता है तो इसे षपथ ग्रहण समारोह द्वारा चिह्नित किया जाता है।

वयस्कों से वृद्धावस्था के प्राप्ति के दौरान भूमिकाओं में परिवर्तन भी होता है। कई समाजों में बुजुर्गों को उनके श्रम गहन कार्यों से मुक्त किया जाता है और वे नाती पोते की देखभाल करने जैसी नई भूमिकाएं मानते हैं। जबकि कुछ समाजों में पुराने लोगों को उनके अनुभव और ज्ञान के सम्मान के साथ व्यवहार किया जाता है, और उनसे महत्वपूर्ण मामलों पर सलाह मांगी जाती है, जहां कुछ बुजुर्गों को अयोग्य की तरह माना जाता है।

10.6.4 भूमिका संघर्ष और तनाव

चूंकि एक व्यक्ति कई प्रस्थितियों को ग्रहण करता है और उसके द्वारा कई भूमिकाएं निभाई जाती हैं, कभी–कभी किसी व्यक्ति की दो अलग–अलग प्रस्थितियां दुविधा की स्थिति में व्यक्ति को विवादित उम्मीदों की मांग कर सकती हैं। इसका एक साधारण उदाहरण क्लास मॉनीटर का हो सकता है। एक वर्ग की निगरानी के रूप में अहमद को अपने वर्ग शिक्षक द्वारा जिम्मेदारियों का एक सेट दिया जाता है। उससे शिक्षक की अनुपस्थिति में अनुशासन बनाए रखने की उम्मीद है और छात्रों द्वारा किए गए किसी भी व्यवधान की रिपोर्ट करना है। साथ ही अहमद भी अपने कुछ सहपाठियों के करीबी दोस्त होने की प्र स्थिति ग्रहण करता है। अब अगर दोस्तों के अपने करीबी सर्कल से एक छात्र वर्ग के अन्य छात्रों को परेषान करता है या शिक्षक की अनुपस्थिति में धमकी बन जाता है तो यह अहमद के लिए भूमिका संघर्ष को जन्म दे सकता है। एक दोस्त के रूप में उससे इस व्यवहार को अनदेखा करने की उम्मीद की जा सकती है, जबकि जिम्मेदार वर्ग मॉनीटर के रूप में उससे शिक्षक के ध्यानद्रावी मे इस यूपीए व्यवहार को लाने की उम्मीद की जाती है।

हालांकि यह कक्षा से एक उदाहरण है, रोजमर्रा की जिंदगी में व्यक्तियों को अक्सर उनकी भूमिकाओं से संबंधित समान या अधिक जटिल दुविधाओं का सामना करना पड़ता है। हमने पहले से ही चर्चा की है कि एक व्यक्ति अपने जीवनकाल में कई भूमिका निभाता है और इसलिए ऐसी असंगतता उत्पन्न होती है। भूमिका संघर्ष का अक्सर उद्धृत उदाहरण वह है जो काम करने वाली महिलाओं द्वारा अनुभव किया जाता है। पारंपरिक समाजों में महिलाओं की सांस्कृतिक रूप से स्वीकृत भूमिका बड़े पैमाने पर बाल पालन और घरेलू काम से संबंधित थी। हालांकि, आधुनिक समाजों में इन भूमिकाओं को चुनौती दी जा रही है और महिलाएं तेजी से वेतनभोगी रोजगार में प्रवेश कर रही हैं और पुरुषों के साथ पेशेवर कार्यक्षेत्र साझा कर रही हैं। जब ऐसे सामाजिक परिवर्तन होते हैं तो एक महिला दोनों पक्षों से एक खींचाव का अनुभव कर सकती है – एक पेशेवर के रूप में अपने काम के प्रति प्रतिबद्धता और परिवार और बच्चों के प्रति उनकी पत्नी या मां के प्रति प्रतिबद्धता। इस तरह के संघर्ष तब उठते हैं तब विशेष रूप से जब भूमिका भागीदारों के इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि वे अपनी भूमिकाएं पुनःअनुकूलित कर रहे हैं कि महिलाएं अब नई भूमिका बना रही हैं इस तथ्य सया नए को अपना रही हैं।

जबकि एक व्यक्ति की दो अलग–अलग प्रस्थितियों से जुड़ी भूमिकाओं के बीच भूमिका संघर्ष होता है, भूमिका मे तनाव तब होती है जब एक ही प्रस्थिति में जुडी विभिन्न जिम्मेदारियां असंगत होती हैं। उदाहरण के लिए, रोहित को अगले दिन एक परीक्षा के लिए तैयार करना होगा, लेकिन उसी दिन एक स्कूल में षतरंज प्रतियोगिता में अपने स्कूल का प्रतिनिधित्व करना होगा। एक छात्र के रूप में वह तनाव और चिंता का अनुभव कर सकता है क्योंकि उसे दोनों स्थितियों में अच्छा प्रदर्षन करना है।

लोग भूमिका विभाजित करने या अलगाव द्वारा भूमिका संघर्ष का प्रबंधन करने की कोशिश करते हैं, जहां वे एक भूमिका में जो कुछ भी करते हैं, उससे अलग होते हैं और दूसरे पर एक भूमिका को प्राथमिकता देते हैं। भूमिका तनाव और संघर्ष की अवधारणा भूमिका से बाहर निकलने के लिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वे एक विशेष भूमिका के बारे में संदेह को जन्म दे सकते हैं जिससे अंततः बाहर निकलने का कारण बनता है।

10.7 सारांश

इस इकाई ने आपको प्रस्थिति और भूमिका की अवधारणा के साथ अवगत कराया जो सामाजिक संरचना के महत्वपूर्ण पहलुओं का निर्माण करता है। आप इस चर्चा में पढ़ते हैं कि विभिन्न अवधारणाएं और प्रस्थिति और भूमिकाओं को समझने और वर्गीकृत करने के तरीके हैं, कुछ निर्दिष्ट हैं जबकि अन्य उपार्जित किए जाते हैं। दोनों प्रकृति में भी गतिशील होते हैं और लगातार व्यक्तियों और समाज द्वारा परिभाषित और पुनः परिभाषित किए जाते हैं। इस इकाई में भूमिका संघर्ष, भूमिका से बाहर निकलने और भूमिका परिवर्तन जैसे भूमिकाओं के आयामों के बारे मे भी हमारे जीवन में अनुभव किया गया है।

10.8 बोध प्रश्न

1) भूमिकाओं पर संरचनात्मक परिप्रेक्ष्य इंटरैक्शनिस्ट (अंतःक्रियावादी) परिप्रेक्ष्य से अलग कैसे है?

2) विभिन्न कौन से तरीके हैं जिनमे भूमिकाएं वर्गीकृत की जाती हैं?

3) क्या प्रस्थिति समाज में सिर्फ किसी व्यक्ति द्वारा ग्रहण की जाती है? इसके बारे में बताएं।

4) वर्ग भेद और प्रस्थिति भेद हमेशा ओवरलैप(आच्छादित) करते हैं? मैक्स वेबर के सिद्धांत के संदर्भ में चर्चा करें।

5) उदाहरणों की मदद से निर्दिष्ट और उपार्जित प्रस्थिति के बीच अंतर पर चर्चा करें।

10.9 संदर्भ ग्रंथ

बैंटन, एम. (1965). रोल्सः एन इंटरोडकषण टू द स्टडी ऑफ सोसल रिलेशन्स .लंदनः टैविस्टॉक

एबाघ, एच आर एफ (1988). बिकमिंग एन एक्स :द प्रोसेस ऑफ रोल एक्जिट. शिकागोः शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस

गिडेंस, ए और सटन, पी डब्ल्यू (2014). एस्सेन्शियल कोन्सेप्ट्स इन सोसिओलोजी . कैम्ब्रिजः राजनीति।

गिडेंस, ए एट अल (सं) (2014). इंटरोडाकषण टू सोसिओलोजी . डब्ल्यू डब्ल्यू नॉर्टन एंड कं

गोफमैन, ई (1990). द प्रजेंटेशन ऑफ सेलफिन एवरीडे लाइफ.लंदनः पेंगुइन।

लिटन, आर (1963). द स्टडि ऑफ मैन. यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ अमेरिका : एप्पलटन–सेंचुरी–क्रॉफ्ट्स।

मार्टन . आर (1957). द रोल सेटः प्रॉब्लेम्स इन सोसिओलोजिकल थीयरी. द ब्रिटिश जर्नल ऑफ सोसिओलोजी ,8(2),106–120.

टर्नर, जे (एड) (2006). हंडबुक ऑफ सोसिओलोजीकल थियरी : संयुक्त राज्य अमेरिकाः स्प्रिंगर

वेबर, एम, रोथ, जी और विटिच, सी (1978).एकोनोमी अंड सोसायटीः एन आउटलाइन ऑफ इंटरप्रेटिव सोसिओलोजीः बर्कले, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।

वॉर्स्ले, पीटर (1970). इंटरोडाकषण टू सोसिओलोजी : पेंगुइन बुक्स।

इकाई 11 सामाजीकरण*

संरचना

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 सामाजीकरणः अर्थ व परिभाषाएं

- 11.2.1 सामाजीकरण क्या है?
- 11.2.2 सामाजीकरणः कुछ परिभाषाएं

11.3 सामाजीकरण के प्रकार

- 11.3.1 प्रथम सामाजीकरण
- 11.3.2 द्वितीय सामाजीकरण
- 11.3.3 लैंगिक सामाजीकरण
- 11.3.4 अग्रिम सामाजीकरण
- 11.3.5 पुनर्सामाजीकरण
- 11.3.6 वयस्क सामाजीकरण

11.4 सामाजीकरण के सिद्धांत

- 11.4.1 जॉर्ज हर्बर्ट मीड एवं स्वविकास का सिद्धांत
- 11.4.2 चार्ल्स हॉर्टन कूले एवं आत्म दर्पण दर्शन सिद्धांत
- 11.4.3 सिग्मंड फ्रायड एवं मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत

11.5 सामाजीकरण के माध्यम

- 11.5.1 परिवार
- 11.5.2 सखा समूह
- 11.5.3 विद्यालय
- 11.5.4 संचार मीडिया

11.6 सारांश

11.7 सन्दर्भ

11.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप जानेंगेः

- सामाजीकरण की परिभाषा;
- किसी एक/कुछ प्रमुख विचारकों के नाम जो सामाजीकरण के अध्ययन में सहयोगी रहे;
- विभिन्न प्रकार के सामाजीकरण के प्रकार, तथा
- सामाजीकरण के माध्यम एवं वे किस तरह हमारे व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं।

11.1 प्रस्तावना

हम इस विषय की शुरुआत सामाजीकरण के अर्थ और परिभाषा के साथ करेंगे। तदुपरांत हम सामाजीकरण के प्रकार एवं सिद्धांतों पर चर्चा को आगे लेकर जायेंगे। अंत में हम

*बियंका डाव, शोधार्थी ,जे.एन.यू

सामाजीकरण के विभिन्न माध्यमों का परीक्षण करके चर्चा समाप्त करेंगे। इस प्रकार इस इकाई में हम सामाजीकरण का गहन अध्ययन करेंगे।

12.2 सामाजीकरण – अर्थ एवं परिभाषा

11.2.1 सामाजीकरण क्या है?

सामाजीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो समाज के विभिन्न सरोकारों को समझने तथा सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। विभिन्न समाजों में बच्चों को सामाजिक मूल्यों से अवगत कराने की अलग-अलग तरीके व परंपराये हैं। बच्चों के व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए उनका सामाजीकरण अनिवार्य है। सामाजीकरण के अंतर्गत बच्चों को परिवारों परिजनों तथा संबंधित वर्गों के नियमों आदतों, तथा मूल्यों की जानकारी दी जाती है। बच्चा सामाजीकरण के माध्यम से उस समाज की मान्यताओं रीति-रिवाजों तथा संस्कृति की जानकारी प्राप्त करता है। सामाजीकरण समाज की संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाने का काम करता है। यह प्रक्रिया बच्चों को अनेक प्रकार के दायित्यों से अवगत कराती है तथा उनका निर्वाह करने में उनकी मदद करती है। इस प्रकार सामाजीकरण एक पीढ़ी को दूसरी पीढ़ी से जोड़ने का काम करता है।

11.2.2 सामाजीकरणः परिभाषाएं

- एंथोनी गिडॉन्स : "सामाजीकरण उस पद्धति से मनुष्य का परिचय कराता है जो उसमें सामाजिक संस्कृति को ढालती है।" (2014:263-64).

  सामाजीकरण का ''उस प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाता है जिससे असाहय मानव शिशु धीरे–धीरे एक आन्म जागरूक जानकार व्यक्ति बन जाता है, जो कि अपनी समाजिक संस्कृति के तौर तरीके में निपुण है।

- पीटल वर्सले के अनुसार "सामाजीकरण वह पद्धति है जिसके द्वारा मनुष्य को सामाजिक समूहों के रीति-रिवाजों व नियमों का प्रशिक्षण दिया जाता है। सामाजीकरण मानव समाज की गतिविधियों तथा संस्कृतियों का वाहक है।"(1972:153).

- "फ्री टोनी मिल्टन के अनुसार " वह प्रक्रिया जिससे हम उस समाज की संस्कृति का ज्ञान प्राप्त करते हैं जिसमें हम पैदा हुए हैं, वह प्रविधि जिसके द्वारा हम अपने समाज की विशेषताओं को सीखते हैं तथा सोचने व व्यवहार करने के तरीकों की जानकारी प्राप्त करते हैं, सामाजीकरण कहलाती है।"(1981:10).

11.3 सामाजीकरण के प्रकार

विभिन्न आयु वर्ग के व्यक्तियों में सामाजीकरण की प्रक्रिया अलग-अलग होती है जिसे अलग-अलग नामों से जाना जाता है।

11.3.1 प्राथमिक सामाजीकरण

यह मनुष्य के सामाजीकरण का पहला चरण है जिसका जीवन में विशेष महत्व है। जन्म से लेकर बचपन तक की सामाजीकरण प्रक्रिया प्राथमिक सामाजीकरण कहलाती है। इस अवधि में बच्चों को भाषा- ज्ञान तथा व्यवहार सिखाया जाता है। सामाजीकरण का यह चरण परिवार में ही संपन्न होता है। इस अवधि में अबोध बालक अपने परिवार तथा परिवेश से भाषा की जानकारी प्राप्त करता है तथा आरंभिक व्यवहार सीखता है। इस अवधि में ही आगे

के जीवन में सीखने की प्रक्रिया की नींव पड़ती है। प्राथमिक सामाजीकरण समाज की मूल संस्कृति तथा उसके विचारों से बच्चों को अवगत कराता है। इस अवधि में बच्चों के अंतर्मन में मूल्यों तथा विचारों का ढांचा तैयार होता है जब उन्हें दुनिया की तथा उसके विभिन्न सरोकारों की कोई जानकारी नहीं होती। इस स्तर पर परिवार बच्चों के सामाजीकरण का दायित्व निभाता है।

11.3.2 द्वितीय चरण का सामाजीकरण

जब बच्चा बचपन की दहलीज लाँघकर किशोरावस्था में प्रवेश करता है तब उसके सामाजीकरण का दूसरा चरण आरंभ होता है। इस चरण के दौरान सामाजीकरण की प्रक्रिया में परिवार के साथ-साथ विद्यालय तथा मित्र समूहों का योगदान भी आरंभ हो जाता है। विभिन्न माध्यमों द्वारा विभिन्न प्रकार के सामाजिक संपर्क होते हैं जो बच्चों को नैतिक मानदंडों, रीति-रिवाजों तथा विभिन्न प्रकार के सामाजिक एवं सांस्कृतिक सिद्धांतों की जानकारी देने में सहयोग करते हैं। जब बच्चा संस्थागत व्यवस्थाओं जैसे विद्यालय आदि में शिक्षण-प्रशिक्षण प्राप्त करता है तो उसके सामाजीकरण का दूसरा चरण संपन्न होता है। दूसरे चरण का सामाजीकरण प्रथम चरण के सामाजीकरण के साथ-साथ चलता रहता है। परंतु पारिवारिक व्यवस्थाओं से हटकर बच्चे जब विद्यालयों में शिक्षण पाते हैं तब उनमें दायित्व-बोध आने लगता है। दूसरे चरण के सामाजीकरण में संस्थाओं तथा विशिष्ट दायित्वों से जुड़े व्यक्तियों का योगदान अधिक रहता है। इस दौरान बच्चा ज्ञान अर्जित करता है तथा सतर्कता पूर्वक सीखता है और अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने की स्थिति में प्रवेश करने लगता है जबकि प्राथमिक चरण में वह सांस्कृतिक गतिविधियों का ज्ञान आत्मसात करता है।

11.3.3 लैंगिक सामाजीकरण

इस चरण तक आते-आते बच्चों में विचार प्रक्रिया आकार ग्रहण कर चुकी होती है। इसी प्रक्रिया के आधार पर वह लैंगिक भूमिकाओं की जानकारी प्राप्त करता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार लैंगिक चेतना आने पर मनुष्य में स्त्री या पुरुष की विशेषताएं निर्मित होने लगती हैं। स्त्री और पुरुष के बीच किस तरह के संबंध होते हैं तथा वे एक दूसरे के साथ किस प्रकार व्यवहार करते हैं यह चेतना इसी अवधि में आती है। लैंगिक चेतना स्त्री व पुरुष के रूप में सामाजिक दायित्व का बोध कराती हैं।

बच्चों को समझाने तथा उनका मार्गदर्शन करने के बड़ों के तरीके भिन्न-भिन्न होते हैं। कपड़े पहनने का ढंग, हेयर स्टाइल, साज-सज्जा के भिन्न-भिन्न साधन जो स्त्री पुरुष इस्तेमाल करते हैं। उन्हें देख देख कर बच्चे स्त्री व पुरुषों के अलग-अलग तरीकों को समझ लेते हैं। दो वर्ष का होते होते बच्चे को यह समझ आ जाता है कि उसका लिंग क्या है? जहाँ लड़कियां गुड़ियों से खेलना पसन्द करती हैं वहीं लड़कों के खिलौने कार तथा बंदूक आदि पसंद होते हैं। यद्यपि अब समाज में स्त्रीलिंग व पुर्लिंग के अलावा तीसरे लिंग या नपुंसक लिंग का भी उल्लेख होने लगा है। जिनकी पहचान स्त्रीलिंग या पुल्लिग के रूप में नहीं की जा सकती वे तृतीय लिंग की श्रेणी में आते है। भारत पाकिस्तान तथा बांग्लादेश में इन्हे हिजड़ा कहा जाता है। इन्हे विशिष्ट लिंगी भी कहा जाता है।(टोबले व मॉर्गन 2002)

11.3.4 अग्रिम सामाजीकरण

अग्रिम सामाजीकरण की अवधारणा प्रसिद्ध समाजशास्त्री रॉबर्ट के मेर्टन (1957) ने की थी। इस सामाजिक प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति को भावी भूमिका अथवा कार्य के लिए पहले से ही तैयार

किया जाता है। इस सामाजिक प्रक्रिया के दौरान लोगों को उन कार्यों से जुड़े लोगों के संपर्क में लाया जाता है जो कार्य वे भविष्य में करना चाहते हैं। इससे उनका कार्य के लिए आसानी से चयन हो जाता है और वे सरलता से उसे संभाल लेते हैं। कुछ लोग यह मानते हैं कि माता-पिता या अभिभावक प्राथमिक सामाजीकरण की अवस्था में ही बच्चों को उनके भावी कार्यों के बारे में अग्रिम जानकारी दे देते हैं और सामाजिक भूमिका से भी अवगत करा देते हैं। कुछ माता-पिता बच्चों को भविष्य निर्माण के उद्देश्य से बोर्डिंग स्कूल में दाखिल करवा देते हैं जहां उन्हें भविष्य के लिए तैयार किया जाता है।

11.3.5 पुनर्सामाजीकरण

पुनर्सामाजीकरण मनुष्यों को पुराने व्यहवारों तथा भूमिकाओं को त्यागने तथा उनके स्थान पर नयी भूमिकाओं का निर्वाह करने में मदद करता है । जब किसी व्यक्ति को अपने जीवन में बड़े बदलाव की ज़रुरत महसूस होती है तब पुनर्सामाजीकरण की आवश्यकता पड़ती है । पुनर्सामाजीकरण उन व्यक्तियों के जीवन में लगातार चलता रहता है जिन्हे अतीत की भूमिकाओं तथा अनुभवों को छोड़ना पड़ता है तथा नए व्यवहार एवं मूल्य अपनाने पड़ते है। सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री गोफमैन पुनर्सामाजीकरण पागल खाने की संज्ञा देते हैं। जिस प्रकार पागलखाने में रहने वाले लोगो को वहां के नियमों का कठोरता से पालन करना पड़ता है उसी प्रकार संस्थाओं का यह आग्रह रहता है कि उन में काम करने वाले लोग उनके नियमों का अक्षरशः पालन करें भले ही वे उनके अनुकूल हो या ना हो। लड़की को विवाह के बाद ससुराल के नियमों व रीति-रिवाजों आदि का पालन करने के लिए तैयार किया जाना पुनः सामाजीकरणका सटीक उदाहरण है। इसका उद्देश्य होता है लड़की का नए परिवेश में रच बस जाना और उसी के अनुसार अपने आप को पूरी तरह बदल डालना।

11.3.6 वयस्क सामाजीकरण

जब कोई व्यक्ति वयस्क होने पर नई भूमिकाओं में अपने आप को ढालने के लिए प्रयास करता है तो उसे वयस्क सामाजीकरण की संज्ञा दी जाती है। पति, पत्नी या कर्मचारी का नए कार्यों व भूमिकाओं के अनुसार अपने आप को ढालना वयस्क सामाजीकरण के अंतर्गत आता है। आवश्यकता अनुसार व्यक्ति नए-नए व्यहवारो तथा विचारो को अपने जीवन में शामिल करते रहते हैं। यह प्रक्रिया जीवन के अंतिम क्षणों तक जारी रहती है। पारंपरिक समाजों में परिवार के महत्वपूर्ण मामलों में वृद्ध लोगों का पूरा दखल रहता है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ स्त्री और पुरुष दोनों प्रकार के वयस्क इस प्रवृत्ति पर जोर देते रहते हैं।

परंतु आधुनिक युग में अनेक परिवारों में वृद्धों का प्रभाव घटा है। फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि आधुनिकता के दौर में वृद्ध परिवारों पर से अपनी पकड़ खो चुके हैं। आज भी कुछ महत्वपूर्ण मामलों में उनकी सलाह ली जाती है। जिस प्रकार वयस्क अपने बच्चों को कुछ न कुछ सिखाने में लगे रहते हैं वैसे ही वृद्ध जन भी अपने से कम आयु के लोगों से बहुत कुछ सीखते हैं। परिवार के बाहर भी वयस्क सामाजीकरण की प्रक्रिया जारी रहती है। कार्यस्थल, सामाजिक समूह, वरिष्ठ नागरिक संगठन, मनोरंजन क्लब तथा धार्मिक संगठन भी वयस्क सामाजीकरण में अपना योगदान देते हैं।

बोध प्रश्न

1) सामाजीकरण की महत्वपूर्ण विशेषताएं क्या क्या है?

.....

.....

2) सामाजीकरण की सार्थक परिभाषा बताओ?

.....

.....

.....

.....

.....

3) जीवन के विभिन्न चरणों में चलती रहने वाली सामाजीकरण की प्रक्रियाओं का विवरण देते हुए सामाजीकरण के प्रकार पर टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

11.4 सामाजीकरण के सिद्धांत

लगभग सभी समाजविज्ञानी एवं मनोविज्ञान विशेषज्ञ इस बात से सहमत हैं कि बच्चे के विकास के केंद्र में मूल रूप से "स्वत्व" (self) विद्यमान रहता है और सामाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा यह विकास संभव हो पाता है। इस अवधारणा को भली-भांति समझने के लिए सामाजीकरण के प्रमुख सिद्धांतों का विवरण देना आवश्यक है।

11.4.1 जॉर्ज हर्बर्ट मीड एवं स्वविकास का सिद्धांत

अमेरिकन समाजशास्त्री जॉर्ज हर्बर्ट मीड के अनुसार बच्चे पूरी तरह सामाजिक प्राणी होते हैं और वे अपने चारों ओर हो रही गतिविधियों की नकल करते हुए बड़े होते हैं। बच्चे जिन लोगों के संपर्क में आते हैं उनसे कुछ न कुछ सीखते हैं। खेल एक ऐसा माध्यम है जिसके दौरान बच्चे बड़ो की नक़ल करना सीखते है। खेल में जिस तरह बड़े करते हैं वे भी उसी तरह करने लगते हैं। खेलने की उम्र तीसरे वर्ष के आस-पास आरम्भ हो जाती है। इस अवस्था में ही बच्चे बड़ों की विभिन्न भूमिकाओं की नकल करना और उन्हें अपने जीवन में उतारना शुरू कर देते हैं। इस प्रकार बच्चे दूसरों से सीखते हैं।मीड इन दूसरों को विशिष्ट अन्य मानता है। बच्चों के खेल पहले सरल होते हैं और धीरे-धीरे कठिन होने लगते हैं। चार पांच साल का बच्चा बड़ों की भूमिकाएं अदा करने लगता है। उदाहरण के लिए बच्चे कक्षा में होने वाली गतिविधियों की नकल उतारना शुरू कर देते हैं। एक बच्चा अध्यापक बन जाता है तथा अन्य छात्र बन जाते हैं और वे कक्षा में हुई गतिविधियां दोहराते हैं। इस खेल को अधिकतर बच्चे टीचर-टीचर की सज्ञा देते हैं। इसी तरह के खेल का दूसरा प्रचलित उदाहरण डॉक्टर तथा रोगी की भूमिका वाला है जिसमें एक बच्चा डॉक्टर की भूमिका निभाता है दूसरा नर्स की और तीसरा बच्चा रोगी बन जाता है। फिर वे बिल्कुल वैसा ही दृश्य उपस्थित कर देते हैं जैसा कि रोगी जब डॉक्टर के पास इलाज के लिए जाता है तब बनता है। मीड इस तरह नकल उतारने की प्रक्रिया को बच्चों का दूसरों की भूमिकाओं में

उतर जाना मानता है। इस अवस्था में बच्चे परिपक्वता ग्रहण करने लगते हैं तथा अपने आप के बारे में व दूसरों के बारे में उनकी समझ विकसित होने लगती है। बच्चे अपने बारे में दूसरों के दृष्टिकोण और विचारों को ग्रहण करते हैं और अपने आप को 'मुझे' मानने लगते हैं।'मुझे'शब्द एक सामाजिक स्वत्व है जबकि 'मैं ' शब्द 'मुझे ' की प्रतिक्रिया है। सरल शब्दों में कहें तो 'मैं' दूसरों के कार्यों के प्रति बच्चे की प्रतिक्रिया है जबकि 'मुझे' दूसरों की उन सब प्रतिक्रियाओं का समुच्चय है जिसे बच्चा ग्रहण करता है।

स्वत्व के विकास का दूसरा चरण 8 या 9 वर्ष की अवस्था में आरंभ होता है। इस चरण में बच्चे समूह के सदस्यों के रूप में काम करना सीख जाते हैं और उनकी भूमिकाओं को सफलतापूर्वक निभाने लगते हैं।मीड सामान्य अन्य तथा विशिष्ट अन्य की अवधारणा प्रस्तुत करता है। किसी समूह विशेष की उस संस्कृति के नियमों व मूल्यों को सामान्य अन्य माना जा सकता है जिसमें बच्चा अपना जीवन जी रहा है। सामान्य अन्य के बारे मेंअपने समाज का विकास करते हुए बच्चा यह जान जाता है कि उस समाज अथवा समूह की स्वीकृति पाने के लिए उसे कौन से नियमों का पालन करना होगा तथा कैसा व्यवहार करना होगा। विशिष्ट अन्य में वह लोग आते हैं जो बच्चों के जीवन में विशेष महत्व रखते हैं और बच्चों की अपने बारे में समझ तथा भावनाओं व व्यवहारों को प्रभावित करते हैं। मीड उन प्रमुख विचारकों में से है जो बच्चे के स्वत्व के विकास में विशिष्ट अन्य की भूमिका को महत्वपूर्ण मानते हैं।

11.4.2 कूले तथा उसका दारपणिक प्रतिबिम्ब का सिद्धांत

प्रसिद्ध अमेरिकी समाजवादी हॉर्टॉनकूली को उनके दारपणिक सिद्धांत के लिए जाना जाता है। बच्चे दूसरों के मतानुसार अपने आपके बारे में धारणा उत्पन्न कर लेते हैं। दूसरों के मतानुसार स्वयं को मानने लग जाना, दूसरों की दृष्टि में हम कैसे लगते हैं, इस कल्पना के अनुसार अपने आप को मानने लग जाना दारपणिक निजता प्रतिबिम्बात्मक निजता कहलाता है। अपने बारे में जो जानकारी दूसरों के विचारों को व उनके प्रतिक्रियाओं से प्राप्त होती हैं उसके आधार पर मनुष्य जो अपना एक बिंब निर्मित कर लेता है उसे दारपणिक निजता कहा जाता है। सबसे पहले अपने बारे में जानकारी बच्चा अपने माता पिता से प्राप्त करता है फिर दूसरों से प्राप्त जानकारी से उसकी पुष्टि करता है।जिस प्रकार अपने आप को जानने में दर्पण हमारी सहायता करता है, हमारे कपड़े कैसे लग रहे हैं, हमारा चेहरा कैसा लग रहा है, हम कैसे लग रहे हैं यह सब दर्पण में देखकर हम जान जाते हैं, उसी प्रकार हम अनुमान लगाने लगते हैं कि हमारा व्यवहार, हमारेतोर तरीके दूसरो को कैसे लग रहे होंगे। परिणामतः दूसरों की हमारे बारे में जो अवधारणा बनती है उसी के अनुसार हम अपने आप को मान लेते हैं और उसे से सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव भी ग्रहण करने लगते हैं। जैसे बच्चे को जब शरारत सूझती है तो वह सोचता है कि पकड़ा गया तो माता-पिता से झूठ बोल देगा, उसीसमय वह यह भी सोचता है कि यदि उसका झूठ पकड़ा गया तो वह माता पिता की नज़रो में गिर जायेगाद्यकूली के अनुसार अपनेबारे में धरना बनाने में प्रयोग प्रमुख रूप से तीन घटक काम करते हैं। पहला, दूसरों को हम कैसे लग रहे हैं, दूसरा, अन्य लोगों के विचार के बारे में हमारा अपना विचार और तीसरा, आत्म सम्मान की भावना, शर्म या दूसरों की हमारे बारे में अवधारणा से उपजा संदेह।

11.4.3 सिगमंड फ्रायड एवं मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत

आत्म विश्लेषण की अवधारणा के जनक सुप्रसिद्ध ऑस्ट्रियाई स्नायु विज्ञानी सिगमंड फ्रायड के अनुसार सामाजीकरण चाहता है कि मनुष्य समाज के हितों की रक्षा के लिए निजी स्वार्थों का त्याग करें। उनके मत में सामाजीकरण वह प्रविधि है जो मनुष्य की चाहतों और

प्रवृत्तियों को इस प्रकार दिशा देती है कि उन्हें सांस्कृतिक रूप से सामाजिक मान्यता मिल जाए। फ्रूड के अनुसार व्यक्तित्व के तीन घटकों के माध्यमों से अथवा यह कहिए कि तीन स्तरों पर मनुष्य की सामाजीकरण की क्रिया संपन्न होती है - इद (Id), अहम् पराअहम तथा अहंकार (super ego)

स्वयंभू संवेग के अंतर्गत सभी प्रकार के मौलिक संवेग आते हैं। यह उस व्यक्तित्व का अचेतन, स्वार्थ परक, आवेगशील, प्रेरक तथा असंगत भाग है जो सदैव सुख की तलाश में लगा रहता है और दुखात्मक स्थितियों से बचता रहता है। यह संवेग मनुष्य को दूसरों की तथा समाज की परवाह किये बिना अपने स्वार्थो की पूर्ती के लिए उकसाता रहता है। जैसे कोई बच्चा किसी चीज की अतिरिक्त मांग करता है तो तब तक रोता रहता है जब तक वह उसे दे नहीं दी जाती।

अहंकार, स्वयंभू संवेग तथा पराअहम के बीच में मध्यस्थता का काम करता है। अहंकार हमारे संवेगो को नियंत्रित करने तथा उन्हें सामाजिक मान्यता के दायरों में रखने का काम भी करता है। उदाहरण के लिए जब हम बाजार में मिलने वाले छूट के लालच में आकर अधिक से अधिक खरीदारी करने के लिए लालायित हो जाते हैं तब वह हम पर दबाव बनाता है कि हम उतनी ही खरीदारी करें जितनी हमारी खरीदने की क्षमता है। स्वयंभू संवेग, अहंकार तथा पराअहम के बीच संतुलन बनाए रखने की प्रक्रिया जीवन भर चलती रहती है। यह संतुलन सामाजीकरण का मुख्य माध्यम है।

पराअहम मनुष्य को सिद्धांतों, नियमों तथा नैतिक मान्यताओं से अवगत करवाता है जिन्हें मनुष्य सामाजीकरण के प्रत्याशी प्रक्रिया से सीखता है। परम अहंकार व्यक्ति का अंतर विवेक है। वह उसके अंदर की आवाज है जो आशाओं, विश्वासों और सामाजिक निर्देशों या सामाजिक मान्यताओं को व्यवस्थित करती है। उदाहरण के लिए, जैसे, यदि कोई बच्ची किसी की दुकान से चोरी छिपे कोई सामान उठाने की कोशिश करती है, जब उसे कोई देख नहीं रहा होता है, तब उसके मन में तुरंत एक आवाज उठती है कि चोरी करना गलत है। तब, यह जानते हुए भी कि वह पकड़ी नहीं जाएगी चीज नहीं चुरा पाती। मौलिक संवेग तथा पराअहम एक दूसरे के विरोधी होते हैं। क्योंकि ना तो यह संभव है कि हम अपनी सारी इच्छाओं को पूरा कर ले और ना ही यह संभव है कि हम कुछ पाने की इच्छा ही न करें।

बोध प्रश्न

1) मीड के अनुसार किसी बच्चे का सामाजिक व्यक्तित्व कैसे विकसित होता है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) कूले के अनुसार दारप्रणिक निजत्व अथवा प्रतिबिम्बात्मक निजत्व का क्या अर्थ है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) व्यक्तित्व के विभिन्न घटक क्या क्या है? फ्रायड के अनुसार उनका सामाजीकरण से क्या संबंध?

.....

.....

.....

.....

.....

11.5 सामाजीकरण के माध्यम

सामाजीकरण की प्रक्रिया परिवार तक ही सीमित नहीं है। बड़ी संख्या में ऐसे समूह तथा संस्थान मौजूद है जिनसे लोग अपने समाज और समुदाय की संस्कृति सीखते हैं। परिवार सामाजीकरण की प्रथम पाठशाला है। सामाजीकरण के अन्य माध्यमों में प्रमुख रूप से सखा -मंडली, विद्यालय तथा मीडिया आते हैं। परिवार की भूमिका मनुष्य के जीवन में सबसे पहले आती है। सामाजीकरण के इस प्राथमिक चरण में माता-पिता, विशेष रूप से माता को सर्वाधिक श्रेय जाता है। इसके बाद शिक्षण संस्थान तथा मीडिया की भूमिकाएँ हैं।

11.5.1 परिवार

माता पिता एवं परिवार सामाजीकरण के सबसे महत्वपूर्ण माध्यम है। परिवार में सबसे पहले सामाजीकरण की प्रक्रिया माता आरंभ करती है। आधारभूत मूल्य जैसे प्यार, ममता, संवेदना, सहानुभूति, शिष्टाचार तथा लोकाचार आदि जीवन के आरंभिक चरण में परिवार में ही सिखाए जाते हैं। संयुक्त परिवारों में माता-पिता के साथ साथ चाचा चाची दादा-दादी आदि पारिवारिक सदस्य भी बच्चों के सामाजीकरण में अपना योगदान देते हैं। यदि परिवार में अनेक आँचलों व वर्गों से आए सदस्य भी मौजूद रहते हैं तब उनका बच्चों के सामाजीकरण पर विशेष प्रभाव पड़ता है। वे विभिन्न सांस्कृतिक मूल्यों के बीच बड़े होते हैं और उन्हें विभिन्न मूल्यो, शिष्टाचारों एवं आस्थाओं को अपने आप में समाहित करने का अवसर मिल जाता है। पारिवारिक समरसता और विषमता का भी बच्चे के विकास पर पूरा प्रभाव पड़ता है।

पीटरसन का मानना है कि बाल्यकाल में माता-पिता याअभिभावकों से बार-बार दूर किया जाना तथा घर बदलना भी बच्चों के मन पर दुष्प्रभाव डालते हैं। ऐसे में उन्हें नई परिस्थितियों व परिवेशों के साथ तालमेल बिठाने में कठिनाई आती है। ऐसे में बच्चे तथा किशोर तनावग्रस्त हो जाते हैं। यदि यह परिवर्तन परिवार में विखराव लाने वाले होते हैं

जैसे माता-पिता के बीच तलाक हो जाना अथवा उनका अलग-अलग रहना, बच्चों में विशेष रूप से तनाव पैदा करता है। निष्कर्ष यह है कि वे बच्चे या किशोर जिन्हें अपने परिवार से स्थाई तथा सहयोगात्मक तथा अनुकूलता से भरा वातावरण मिलता है वे उन बच्चों की तुलना में अच्छा विकास करते हैं जिन्हें पारिवारिक उथल-पुथल व अनिश्चय के वातावरण में जीना पड़ता है। भौतिक संसाधन, माता पिता का संरक्षण, पारिवारिक अनुकूलता तथा सहयोगात्मक वातावरण बच्चों के सामाजीकरण में विशेष भूमिका निभाते हैं।

11.5.2 साथी समूह

बचपन में साथियों का विशेष महत्व होता है। हम-उम्र संगी साथियों व मित्रों का सामाजीकरण में विशेष योगदान होता है। वे एक दूसरे को समझना, परस्पर सहयोग करना और समानता का व्यवहार करना साथ साथ सीखते हैं। आरंभ में साथियों के समूह पारिवारिक स्तर पर तथा घर के आसपास रहने वाले बच्चों को मिलाकर बनते हैं। जब बच्चे युवा होने लगते हैं तब वे अपने लिंग के बच्चों के साथ मित्रता करने लगते हैं और मित्र- मंडलिया बन जाती हैं। जो बच्चे मित्र मंडलियों में शामिल हो जाते हैं वे परिवार के सदस्यों की तुलना में मित्रों के साथ अधिक समय बिताते हैं। जब वे स्कूल जाने लगते हैं तो मित्रमंडल प्राय बिखर जाते है। चाहे पड़ोस में रहने वाले हो या विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने वाले हो या फिर साथ साथ काम करने वाले, इनका प्रभाव आजीवन रहता है।

बुकोव्स्की का कहना है ,"जब वे आपस में मिल नहीं पाते तो सोशल मीडिया आदि के माध्यम से परस्पर संपर्क बनाए रखते हैं। बाल विद्यालय में पढ़ने के दौरान जब बच्चों को क्रेच या केयर सेंटर में रखा जाता है, उन दिनों साथियों से मिलने वाले अनुभव बच्चों के दैनिक जीवन पर विशेष प्रभाव डालते हैं। इन दिनों बच्चे एक दूसरे से मिलकर रहने, चिढ़ाने, सूचनाओं के आदान-प्रदान, सहयोग, सुरक्षा, पुरस्कार, खुशियां तथा परेशान करने व नुकसान पहुंचाने जैसे मनोभावों से परिचित हो जाते हैं। बच्चे जब एक दूसरे के संपर्क में आते हैं तब एक दूसरे पर दबाव बनाने तथा धूम्रपान करने जैसी अनेक बुराइयां भी सीख जाते हैं।

11.5.3 विद्यालय

विद्यालय सामाजीकरण का प्रथम औपचारिक माध्यम है जो बच्चे के जीवन में विचारों तथा शिष्टाचारों का संचार करता है। बच्चे कक्षा में एक विशेष अनुशासन में रहना सीखते हैं। वे विद्यालय के नियमों व परंपराओं का पालन करते हैं तथा कक्षा में पढ़ाये जाने वाले पाठों को आत्मसात करने के लिए परिश्रम करते हैं। वे अपने शिक्षकों का आदर करते हैं तथा उनका कहना मानते हैं। शिक्षकों की सकारात्मक व नकारात्मक भूमिकाओं का बच्चों के जीवन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। अध्यापकों का काम बच्चों को केवल पढ़ना -लिखना सिखाना ही नहीं है, वे बच्चों में विचार करने की क्षमता भी उत्पन्न करते हैं। कुल मिलाकर विद्यालय बच्चे के सर्वांगीण विकास में सहयोग करते हैं और उन्हें समाज के सांस्कृतिक मूल्यों से अवगत कराते हैं। इस स्तर पर बच्चों के सामाजीकरण में शिक्षकों की भूमिका उल्लेखनीय है ।

फ्रोन्स का तर्क है कि अधिकतर बच्चों के लिए शिक्षक ही दूसरे सामाजीकरण के माध्यम होते हैं। सामाजीकरण के प्रथम चरण तथा द्वितीय चरण के बीच ऐसी स्थिति में कोई अंतिम रेखा नहीं खींची जा सकती। फ्रोन्स आगे कहता है कि यद्यपि विद्यालय और उनमें पढ़ाये जाने वाले पाठ्यक्रम तथा वहां होने वाली गतिविधियां सामाजीकरण के दूसरे चरण में ही आते हैं, जबकि आरंभिक अवस्था का संख्या ज्ञान तथा अक्षर ज्ञान प्राथमिक सामाजीकरण

में आता है। बड़े शिक्षण संस्थान बच्चों को अपने औपचारिक शिक्षण कार्यक्रमों के अलावा कुछ और भी सिखाते हैं जो बच्चों के विकास में विशेष रूप से सहयोगी होता है ।

कुल मिलाकर विद्यालयों की भूमिका भी बच्चों के सामाजीकरण व उनके समुचित विकास में उतनी ही महत्वपूर्ण होती है जितनी कि परिवार की। हिंदी फिल्म "हिंदी मीडियम" में यह दिखाया गया है कि तथाकथित समाजों में बच्चों के उत्तम सामाजीकरण के लिए माता-पिता अच्छे विद्यालयों पर ज्यादाभरोसा करते हैं।

11.5.4 संचार मीडिया

संचार मीडिया में रेडियो, दूरदर्शन, समाचार पत्र, पत्रिका, मीडिया पोर्टल तथा वेबसाइट आदि माध्यम आते हैं। फ्रूड का तर्क है कि इस इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के युग में बच्चों को सीखने के विभिन्न प्रकार के नए-नए अवसर प्राप्त हैं। इससे बच्चों के सीखने का दायरा बहुत बढ़ गया है। अब प्रथम व दूसरे चरणों के सामाजीकरणके लिए बच्चे परिवारों तथा सखा मंडली आदि पर निर्भर नहीं रह गए हैं। फ्रॅन्स का यह भी कहना है कि समकालीन सामाजिक सत्य व मिथक अब मीडिया के माध्यम से हम तक पहुंचाए जाने लगे हैं। आधुनिक दौर में सोशल मीडिया यह साबित कर चुका है कि सूचनाओं के माध्यम किस प्रकार हमारे जीवन को प्रभावित करते हैं। उदहारण के लिए फेसबुक के माध्यम से पेश की जाने वाली सामग्री हमारी रुचियों, पहचानो, संपर्क बढ़ाने की चाहतों को ठोस आधार प्रदान कर रही है। सूचना व संपर्क के अन्य माध्यमों की तुलना में कुछ वर्षों से टेलीविजन बच्चों को विशेष रूप से अपने प्रभाव में लेने में सफल हुआ है। टेलीविजन पर दिखाए जाने वाले विभिन्न कार्यक्रम जैसे सीरियल, फिल्में, कार्टून, समाचार, संगीत, फैशन, खाद्य सामग्री, विविध प्रकार की ऐतिहासिक और भौगोलिक जानकारियाँ सभी आयु वर्ग के लोगों को प्रभावित करती हैं। प्रोटेट के अनुसार, टेलीविजन द्वारा हिंसा से जुड़ी घटनाओं को बड़ा चढ़ाकर दिखाया जाना समाज में उग्रता का वातावरण पैदा कर रहा है। बच्चों को दिखाए जाने वाले कार्टून कार्यक्रम तथा सीरियल हिंसा की घटनाओं से भरे होते हैं। बच्चे टेलीविजन पर दिखाई जाने वाली हिंसा को गंभीरता से नहीं लेते परंतु फिर भी इस बात की पूरी संभावना रहती है कि वे बच्चों में असुरक्षा की भावना बिठा सकते हैं। इसके अलावा कुछ गीत, फिल्में तथा हिंसा युक्त वीडियो गेम्स भी बच्चों के मन पर बुरा प्रभाव डालते हैं। उदाहरण के लिए नीड फॉर स्पीड, बर्न आउट, रोड रैश जैसे वीडियो गेम्स भले ही खेल में जीतने वालों को पुरस्कार देते हो लेकिन वे ताबड़तोड़ स्पीड से गाड़ी चलाने वालों की प्रवृत्ति को उकसाने का काम करते हैं। यद्यपि संवेदना उत्पन्न करने वाले सुपर मारियो सनशाइन जैसे गेम्स भी टेलीविजन पर दिखाई जाते हैं जो बच्चों में सहानुभूति तथा दूसरों की सहायता से करने जैसे संस्कार डाल सकते हैं। इस प्रकार समाज में मीडिया हमारे चारों ओर पसरे विश्व की समझ पैदा कराते हुए सामाजीकरण में विशेष भूमिका निभाता है।

बोध प्रश्न

1) प्राथमिक व द्वितीय चरणों के सामाजीकरण में परिवार एवं विद्यालय की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

.....

2) साथी समूह के सामाजीकरण के दो उदाहरण दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) संचार मीडिया किस प्रकार सामाजिक सामाजीकरण की प्रक्रिया पर नकारात्मक प्रभाव डालता है, स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

11.6 सारांश

इस इकाई में हमने सामाजीकरण के विभिन्न आयामों का अध्ययन किया। सामाजीकरण का अर्थ तथा उसकी प्रकृति के साथ साथ कुछ परिभाषाओं का भी अध्ययन किया। सामाजीकरण के विभिन्न प्रकारों के अध्ययन के साथ साथ सामाजीकरण के कुछ सिद्धांतों का भी अध्ययन किया। इस इकाई में हमने यह भी जाना कि सामाजीकरण के विभिन्न माध्यम क्या क्या हैं और वे सामाजीकरण की प्रक्रिया में किस प्रकार अपना योगदान देते हैं।

11.7 सन्दर्भ

अब्राहम. एम. अफ,(2014) , कंटेम्पररी सोशियोलॉजी ,ऐन इंट्रोडक्शन टू कॉन्सेप्ट्स एंड थेओरिएस , दूसरा एडिशन : ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

बिल्टोन टी (1981), इंट्रोडक्टरी सोशियोलॉजी, लंदन : थी मैकमिलन प्रेस लिमिटेड.

बुकोव्स्की, डब्ल्यू .एम्. एट अल . (2015). 'सोशलाईजेशन एंड एक्सपेरिएंसेस विथ पीअर्स' इन ग्रसेक, जे .ई. एंड हेस्टिंग्स, पी .डी. हैंडबुक ऑफ़ सोशलाईजेशनः थ्योरी एंड रिसर्च . -228.

कूले, सी.एच. (1922). 'दी सोशल सेल्फ --1'दी मीनिंग ऑफ़ आईइन ह्यूमन नेचर एंड दी सोशल आर्डर. न्यू यॉर्कः चार्ल्स स्क्रिब्नर संस. 168-210.

फ्रायड, एस. (1962). थ्री एसेज ऑन दी थ्योरी ऑफ़ सेक्सुअलिटी, ट्रांस. जेम्स स्ट्रैची. न्यू यॉर्कः बेसिक बुक्स.

फ्रोंस.आई.(2016). दी ऑटोनॉमस चाइल्ड, स्प्रिंगर ब्रीफइन वेल बीइंग एंड क्वालिटी ऑफ़ लाइफ रिसर्च डीओआई

फर्ग्यूसनएस. जे. (2002) मैपिंग द सोशल लैंडस्केपः रीडिंग्स इनसोशियोलॉजी बोस्टन मैकग्राहिल

गिड्डेन्स. ए. (2006). सोशियोलॉजी. कैंब्रिजः पॉलिटी प्रेस..

गिड्डेन्स, ए. एट अल. (2014). इंट्रोडक्शन टू सोशियोलॉजी, नाइन्थ एडिशन. न्यू यॉर्कः डब्लू .डब्लू. नॉर्टन एंड कंपनी ..

गिड्डेन्स, ए. एंड सुत्तों, पी.डब्ल्यू. (2014). एसेंशियल कॉन्सेप्ट्स इन सोशियोलॉजी. कैंब्रिजः पॉलिटी प्रेस

हरलामबोस, एम्. एंड हील्ड, आर.एम्. (2009). सोशियोलॉजीः थीम्स एंड पर्सपेक्टिव्स.

जॉनसन, एच.एम्. (1960). सोशियोलॉजीः ए सिस्टेमेटिक इंट्रोडक्शन. न्यू यॉर्कः हरकोर्ट, ब्रेस एंड वर्ल्ड.

कैनेडी, डी.बी. एंड केर्बर, ए. (1973).रीसोशलाइजेशनः एन अमेरिकन एक्सपेरिमेंट. न्यू यॉर्कः बेहविओरल पब्लिकेशंस.

लैम्ब, एम्. ई. (2012). मदर्स, फादर्स, फैमिलीज़, एंड सरकमस्टान्सेसः फैक्टर्स अफ्फेक्टिंग चिलड्रन एडजस्टमेंट. एप्लाइड डेवलपमेंटल साइंस.16:98 पृ.111.

मीड, जी.एच. (1972). माइंड, सेल्फ एंड सोसाइटीः फ्रॉम दी स्टैंड पॉइंट ऑफ़ ए सोशल बिहेवियरिस्ट. शिकागोः दी यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस.

मैक लुहान, एम्. (1964). अंडरस्टैंडिंग मीडियाः दी एक्सटेंशन्स ऑफ़ मैन. न्यू यॉर्कः मैक ग्राव हिल.

मेर्टोन,आर.के. (1957). सोशल थ्योरी एंड सोशल स्ट्रक्चर.न्यू यॉर्कः फ्री प्रेस.

मोर्टिमर, जे.टी एंड सिम्मोंस, आर.जी. (1978). 'एडल्ट सोशलाइजेशन' इन एनुअल रिव्यु ऑफ़ सोशियोलॉजी, 4:421-454.

पैटरसन, सी.जे. एट अल . (2015). 'सोशलाइजेशन इन दी कॉन्टेक्स्ट ऑफ़ फैमिली डाइवर्सिटी' इन ग्रसेक, जे.ई. एंड हेस्टिंग्स, पी.डी. हैंडबुक ऑफ़ सोशलाइजेशनः थ्योरी एंड रिसर्च. Pp. 206.

प्रोट, एस. एट अल. 2015. 'मीडिया ऐज एजेंट्स ऑफ़ सोशलाईजेशन' इन ग्रसेक, जे.ई. एंड हेस्टिंग्स, पी.डी. हैंडबुक ऑफ़ सोशलाईजेशनः थ्योरी एंड रिसर्च. Pp. 276, 280, 286.

स्ट्रैची, जे. (1961). दी स्टै.डर्ड एडिशन ऑफ़ दी कम्पलीट साइकोलॉजिकल वर्क्स ऑफ़ सिग्मंड फ्रूड, वॉल्यूम XIX (1923-1925): 'दी ईगो एंड दी आई डी एंड अदर वर्क्स'. लंदनः दी होगार्थ प्रेस एंड दी इंस्टिट्यूट ऑफ़ साइकोअनाल्यिसस. 1-308.

टोले, ई.बी. एंड मॉर्गन, एल.एम्. (2002). रोमांसिंग दी ट्रांसजेंडर नेटिवः रथिंकिंग दी यूज़ ऑफ़ दी "थर्ड जेंडर" कांसेप्ट. जीएलक्यूः ए जर्नल ऑफ़ लेस्बियन एंड गे स्टडीज 8(4), 469-497. ड्यूक यूनिवर्सिटी प्रेस.

वॉर्स्ली, पी. एट अल. (1972). इंट्रोडूसिंग सोशियोलॉजी इंग्लैंडः पेंगुइन बुक्स.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 12 संरचना और प्रकार्य*

संरचना

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 प्रत्यक्षवाद से प्रकार्यवाद

12.3 प्रकार्यवाद के आधार

12.4 सामाजिक मानव विज्ञान में प्रकार्यवाद रैडक्लिफ ब्राउन और मैलिनॉस्की

12.5 टॉलकॉट पार्सन्स और रॉबर्ट के मर्टन का प्रकार्यवाद

12.6 सारांश

12.7 संदर्भ

12.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप सक्षम होंगे :

- प्रकार्यवाद के आधार की व्याख्या कर सकेंगें;
- समाज को समझने के लिए प्रकार्य की संकल्पना के महत्व की चर्चा कर सकेंगें;
- रेडक्लिफ ब्राउन, मैलिनॉस्की और पार्सन्स के सदैघांतिक उपागम की तुलना; और व्यतिरेक कर सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

प्रकार्यवाद सामजिक मानव-विज्ञान और समाजशास्त्र में एक उपागम का नाम है, जिसके अनुसार समाज अंतर संबंधित हिस्सों का पूरा हिस्सा है, जहाँ प्रत्येक हिस्सा पूरे हिस्से की रख रखाव में योगदान देता है। समाजशास्त्र का लक्ष्य समाज के प्रत्येक हिस्से के योगदान का पता लगाना है और किस प्रकार पूरे हिस्से की क्रमिक व्यवस्था को साथ लेकर कार्य करता है। वहीं पर 'प्रकार्य' के कई अर्थ और कई प्रयोग हैं, लेवी, जूनियर, (1968: 22) लिखते हैः संभवतः प्रकार्य के सामान्य संकल्पना के साथ मुख्य समस्या है यह है कि एक ही शब्द का कई भिन्न संदर्भो में प्रयोग होता है।'

एक भिन्न उपागम के रूप में, समाज को देखने और विश्लेषित करने के तरीके के रूप में, प्रकार्यवाद बीसबीं शताब्दी के प्रारंभ में सर्वप्रथम सामाजिक मानव-विज्ञान में उभरा, और बाद में 1930 के शुरूआत में, समाजशास्त्र में उभरा। फिर भी, इसका मूल अनुरूपता की तरह उतना ही पुराना है, जितना कि प्राचीनकाल में प्लेटो (ई.पू. 428/7-345/7) और अरस्तू (384-322 ई.पू.) मूलभूत सादृश्य की जड़े हैं। कुछ लेखक क्लाउड हेनरी द सेंत-सिमन की अठारहवीं शताब्दी के प्रारंम्भिक और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ को 'समाज शास्त्र का जनक' मानते हैं जो कि फ्रेंच क्रांति के बाद लेखन कार्य करते हैं। क्योंकि उनके लेखन में दो विचारों का सह-अस्तिव मिलता है-पहला जिससे कि समाज का वैज्ञानिक अध्ययन उभरता है और दूसरे से पर्याप्त मात्रा में मार्क्सवादी सिद्धांत का योगदान प्राप्त होता है (गिडेन्स, 1973)। पहला विचार यह है कि समाज के अध्ययन के लिए 'वैज्ञानिक पद्धति' का प्रयोग किया जाना चाहिए। और दूसरा विचार यह है कि प्रत्येक समाज में अपने अंत

*प्रो. (से.नि) विनय कुमार श्रीवास्तव, दि.वि

विरोध का अंकुर होता है, जिसके कारण यह समय के साथ बदलता रहता है। सेंट साइमन आंदोलन को परिवर्तन की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया मानते है।

समाज को वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करने का यह पहला विचार है जिसे ऑगस्ट कॉम्ट (1789-1857), सेंतु साइमन के सहयोगी ने दिया और वे वह व्यक्ति हैं जिन्होने 'सोशियोलॉजी' शब्द को निर्मित किया। यह शब्द पूर्ण रूप से 'प्रत्यक्षवाद' या सकारात्मक दर्शन में विकसित हुआ। इस मत के अनुसार, समाज के अध्ययन की पद्धति प्राकृतिक और जीव विज्ञान से आयी। इस अध्ययन का उद्देश्य विकास के नियम' और समाज के कार्य पद्धर्म' की खोज करना या अर्थात् किस प्रकार समय के साथ समाज विकसित हुआ और उसके भिन्न स्तर क्या थे जिससे यह गुजरा और एक विशिष्ट काल में समाज किस प्रकार कार्य करता है।'

इस इकाई में हम समाजशास्त्रीय लेखन में प्रकार्य की संकल्पना का विवरण प्रस्तुत करेंगे।

12.2 प्रत्यक्षवाद से प्रकार्यवाद

समाज शास्त्र में प्रकार्यवाद के तात्कालिक अग्रदूत ऐमाईल दुर्खाइम (1858-1917) हैं, जो कि कॉम्ट के कटु आलोचक हैं और उनसे प्रभावित भी हैं, दुर्खाइम समाजशास्त्र के विषय परिभाषित करने के लिए प्रखरता के साथ रूचि रखते हैं जो कि दर्शन और जीव विज्ञान से बिल्कुल अलग है। उनके लिए, समाज शास्त्र सामाजिक तथा तुलनात्मक और वस्तुपरक अध्ययन है, जो कि सोचने और कार्य करने और अनुभव करने का तरीका है' जिसमे कि बाहर मौजूद-व्यक्ति चेतना' के 'विचारणीय गुण' है। सामाजिक तथ्य व्यक्ति में नही अपितु, समूह 'सामूहिक मन' उत्पन्न होते हैं। वे उसी तरह से अध्ययन किए जाते है जिस प्रकार से भौतिक वस्तुओं का अध्ययन किया जाता है क्योंकि वे व्यक्ति के दायरे के बाहर अस्तिव में होते है, सामाजिक तथ्य 'वस्तु' हैं, वस्तुनिष्ठ ढंग से व्यक्ति के दायरे के बाहर महसूस किए जाते है। फिर भी इसका यह मतलब नहीं कि वे उसी तरह वास्तविक है जिस प्रकार की 'भौतिक वस्तुएं'। इसके बजाय, उनके अध्ययन के लिए किसी को उसी मनोदशा का प्रयोग करना पड़ता है जो कि प्राकृतिक और जैविक वस्तुओं के अध्ययन में किया जाता है जिसमें कि प्राकृतिक और जीव-वैज्ञानिक विषय-वस्तु शमिल होते हैं। दुर्खाइम की पुस्तक 'रूल्स ऑफ बायोलॉजिक मेथड (1893)' मुख्य रूप से इन्हीं समास्याओ से संबाधित है।

समाजशास्त्रीय विवरण

सामाजिक तथ्य के अध्ययन से, समाजशास्त्री प्रस्तुत करते हैं जिसे कि दुर्खीम 'सामजिक विवरण' कहते है। प्रत्येक समाजशास्त्रीय विवरण में दो हिस्से होते हैः यहाँ दुर्खाइम (1893:123) को उद्घृत करते हुए : '.....सामाजिक घटना की व्याख्या हेतु प्रभावी मामला जो इसे उत्पन्न करता है और कार्य जो यह पूर्ण करता है उसका अलग से अन्वेषण किया जाना चाहिए,' समाजशास्त्रीय विवरण का पहला घटक 'ऐतिहासिक निमित्र विवरण' है : उन कारणों को अंकित करना जो ऐतिहासिक स्त्रोतो का परीक्षण करके दृश्य उत्पन्न करते हैं न कि लिप्त हो कर जिसे रेडक्लिफ ब्राउन' अनुमानिक इतिहास' कहते हैं'। दूसरा घटक 'प्रकार्यात्मक है, अर्थात-एक घटक समाज को जो योगदान करता है 'सामान्य सद्भावना स्थापित करने में ।' दुर्खाइम (1895:125)

दुर्खीम के द्वारा प्रतिपादित प्रकार्य की परिभाषा ने आश्चर्य जनक रूप से उनके बाद के समाजशास्त्र और सामाजिक मानवविज्ञान दोनों में प्रकार्यवादियों के लेखन को प्रभावित किया, उनके अनुसार, प्रकार्य एक 'योगदान' है जो एक घटक पूरे समाज के 'रखरखाव और भलाई' हेतु करता है इसलिए, प्रकार्य एक 'सकारात्मक योगदान हैः यह समाज की अच्छाई

में अतंनिहित है (पूर्ण रूप से), जिसके लिए यह निरंतरता सातत्य और स्वस्थ रखरखाव सुनिश्चित करता है।

उदाहरण के तौर पर अपने शोध कार्य में, जो कि श्रम-विभाजन पर था, दुर्खीम (1893) डार्विन के उत्तरजीर्वता के विचार को नकारते हैं। इसके बजाय प्रतियोगिता संघर्ष और बहिष्कार के सिद्धांत को समर्थन प्रदान करते है।, दुर्खीम यह दर्शाते है कि जैसे-जैसे मानव जनसंख्या में वृद्धि होती है समाज अधिक से अधिक श्रम-विभाजन में नौकरियों के विशेषीकरण की ओर अग्रसर होकर बँट जाती है। दूसरों के साथ उत्तरजीविका के लिए संघर्ष करने के बजाय मनुष्य एक दूसरे पर निर्भर होने लगता है। विशेषीकरण हर एक को समाज में महत्वपूर्ण बना देता है।

दुर्खीम उपयोगितावादियों (अर्थात-आर्थिक) और व्यक्तिवादियों (अर्थात मनोवैज्ञानिक) की व्याख्या के भी आलोचक हैं, क्योंकि उनके अनुसार उनमें से कोई श्रम-विभाजन के वास्तविक प्रकार्य की सही व्याख्या नहीं करता। उनके अनुसार, श्रम विभाजन का प्रकार्य समाज अमलीय है। यह सामाजिक एकता में योगदान करता है। आधुनिक औद्योगिक समाज एकजुट है क्योंकि नौकरियों के विशेषीकरण के द्वारा एक दूसरे पर निर्भरता बढ़ती है। आस्ट्रोलियाई-टोटमवाद के अपने अध्ययन में, वे दर्शाते हैं कि धर्म का प्रकार्य समाज में एकता उत्पन्न करना है, लोगों को नैतिक समुदाय में बाँधना चर्च कहलाता है' (दुर्खीम, 1915)।

दुर्खीम विशेष रूप से यह दर्शाने में रूचि रखते हैं कि सामाजिक तथ्यों का कार्य नैतिक है। सामाजिक संस्थाएँ एकता के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए काम करती हैं।

इस दृष्टि से, वे ऐसी घटनाओं को गिनाने में सफल रहे है, जिनमें से कई, समाज के लिए 'अस्वास्थ्यकर' साबित हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, वे अपराध को 'सामान्य' और 'स्वस्थ' लक्षण सभी समाजों के लिए मानते हैं, क्योकि यह सामूहिक भावना को सुदृढ़ करती है और नैतिकता और कानून के विकास की दिशा में कार्य करती है। अपराध का समान्य दर यह संकेत करता है कि समाज व्यक्ति के उन्हें 'व्यक्तियों' के रूप में अभिव्यक्त करने सभी 'विचलन' को 'दबाने' के पूरे अधिकार के अभाव में रहता है जब अपराध सामान्य दर से अधिक हो जाता है तब यह अस्वस्थ (या रोगात्मक) बन जाता है, समाज के सामान्य कार्य को जोखिम में डालता है। जैसा कि स्पष्ट है, कि दुर्खीम सामाजिक तथ्यों के 'सामान्य है 'रोगात्मक' को अलग मानते हैं। समाज में जो सामान्य है वह ठीक है और जो नहीं है वह रोगात्मक है। पहला समाज को जोड़ने का कार्य करता है, जबकि दूसरा एकीकरण की प्रक्रिया को विफल करता है।

12.3 प्रकार्यवाद के आधार

दुर्खीम 'प्रकार्यवादी' नहीं है जिस अर्थ में यह शब्द प्रयोग हुआ है जिस उपागम के लिए ब्रितानी समाज मनाव विज्ञानी, ए.आर. रेडालिक ब्राउन (1881-1955) ने इसका प्रयोग किया है और बॉनीस्लाव मैलिनॉस्की (1884-1942) ने जिस प्रकार इसका समर्थन किया है। दुर्खीम 'प्रकार्यवाद' शब्द का प्रयोग नहीं करते, हॉलाकि वे सामाजिक प्रकार्य की संकल्पना को परिभाषित करते हैं। कोई दुर्खीम के कार्य के सही सह-अस्तिव ऐतिहासिक (आनुवंशिक, विकासवादी और ऐतिहासिक) और सयकालिक (समाज यहॉ और अब) उपागम से अवगत हो सकता है। उदाहरण के लिए, अपने धर्म के प्रमुख अध्ययन मे, वह आस्ट्रोलियाई टोटमवाद के विचार से शुरू करते है, जो धार्मिक जीवन की सबसे प्रांरभिक रूप है, इसके उद्‌गम के अनुमान की बजाय वह टोटमवाद के प्रकार्य से ज्यादा संबध रखते है और किस

प्रकार इसका अध्ययन जाटिल समाजों में धर्म के स्थान को समझने में मदद कर सकता है। समकालिक (या वर्तमान) समाजों के अध्ययन पर जोर ने परवर्ती विद्वानों पर जबरदस्त प्रभाव डाला।

बीसवीं शताब्दी की शुरूआत ने प्रकार्यवाद के उदय और विकासवादी सिद्धांत के लोप को देखा। एडन कुपर (1973) मानते हैं कि प्रकार्यवाद के लिए वर्ष 1922 आश्चर्य का साल (एनस मिराविलिस) था। इसी वर्ष दो प्रबन्ध प्रकाशित हुए जिसने कार्यात्मक उपयोग को प्रभावित किया। पहला रेडक्लिफ-ब्राउन द्वारा अडमान आइलैंडर्स और दूसरा, मेलिनॉस्की द्वारा पश्चिमी प्रशांत के अर्गोनॉट्स था। मानव विज्ञानी प्रकार्यवाद का प्रभाव अन्य विषयों विशेषतया समाजशास्त्र पर भी अनुभव किया गया, टेल्कोट पार्सन्स जैसे समाजशास्त्री कार्यवादी मानव विज्ञानिय के लेखन से प्रभावित थे। इसके परिणामस्वरूप प्रकार्यवाद एक महत्वपूर्ण उपागम के रूप में उभरा, इसका प्रभाव 1960 दशक के अंत और 1970 दशक के प्रारंभ तक रहा। इसके 150 वर्षो के इतिहास में, पहला कॉम्ट के प्रत्यक्षवाद में, उसके बाद दुर्खीम के 'समाजक्षेत्रीय प्रत्यक्षवाद' में, और फिर बीसवीं शताब्दी के प्रकार्यवादियों के कार्य में, प्रकार्यवाद कई तथ्य और रूपांतर समाहित करके आया है। कई प्रकार्यवादियों के मध्य तर्क संगत अंतर पाया जाता है- वास्तव में, उनमें से कुछ मुख्य प्रतिद्वंदी हैं, जैसे कि रेडक्लिफ ब्राउन और मैलिनॉस्की। उनके मध्य मतभेद होने के वावजूद, ऐसा लगता है कि सभी प्रकार्यवादियां के कार्य में निम्न पॉच प्रतिज्ञप्तियॉ एक समान हैं।

1) समाज (या संस्कृति) अन्य पद्धतियों की तरह एक पद्धति है, जैसे कि सौर-मंडल, या जैव मंडल।

2) एक पद्धति के रूप में, समाज (या संस्कृति) के कई भाग है, (जैसे, संस्था, समूह, भूमिका, संध, संगठन), जो कि परस्पर संबद्ध, परस्पर निर्भर और अंत संबंधित है।

3) प्रत्येक भाग अपना कार्य करता है- यह पूरे समाज (या संस्कृति) को अथवा योगदान देता है - और यह अन्य भागों के साथ भी संबंध बनाकर कार्य करता है।

4) एक भाग में परिवर्तन दूसरे भाग में भी परिवर्तन लाता है, या कम से कम दूसरे भाग और के कार्य को प्रभावित करता है, क्योंकि सभी भाग एक दूसरे से नजदीकी संबंध बनाकर जुड़े रहते है।

5) पूरा समाज या संस्कृति - जिसके लिए हम 'पूर्ण/संपूर्ण' शब्द का प्रयोग कर सकते हैं यह सभी हितों के योग से बड़ा होता है। यह किसी भाग से कम नहीं हो सकता, या कोई भाग संपूर्ण को व्याख्या नहीं कर सकता। एक समाज (या संस्कृति) की अपनी पहचान होती है, अपनी 'चेतना' होती है, या दुर्खीम के शब्दों में, 'सामूहिक चेतना' होती है।

12.4 सामाजिक मानव विज्ञान में प्रकार्यवादः रेडक्लिफ ब्राउन और मैलिनॉस्की

दोनों ब्रितानी प्रकार्यवादी दृष्टिकोण के संस्थापक (रेडक्लिफ ब्राउन और मैलिनॉस्की) उन्नीसवीं शताब्दी के विकासवाद के प्रखर विरोधी थे। रेडक्लिफ ब्राउन (1952) ने कहा कि यह 'आनुमानिक इतिहास' पर आधारित था, एक शब्द जिसे हमने पहले प्रयोग किया, और न कि प्रमाणिक इतिहास। यह छद्म ऐतिहासिक' था, इसलिए वैज्ञानिक मूल्य से अलग था। मैलिनॉस्की के लिए विकासवाद 'अनुमानिक पुनर्निमाण का कारागार था। इन विद्वानों के

कार्य से एक बदलाव आया :

1) बिना क्षेत्र कार्य मानव विज्ञान से क्षेत्र कार्य आधारित अध्ययन पर जोर,

2) समाज के विकास के स्तरों और समाज के उद्‌विकास के अध्ययन से संस्थाओं (ऐतिहासिक अध्ययन) के अध्ययन, से समाज यहाँ और अब (समकालिक अध्ययन) की ओर।

3) पूरे समाज और संस्कृति (दीर्घ उपागम) के अध्ययन से विशिष्ट समाज के अध्ययन की ओर, विशेष रूप से छोटे स्तर के समाज (सूक्ष्य उपागम), और

4) सैद्धान्तिक स्तर तक सीमित समाज की समझ यहॉ और अब के सामाजिक ज्ञान को रखकर व्यावहारिक प्रयोग की ओर बढना, समाज में इच्छित परिवर्तन लाने के लिए। यह माना गया कि अर्जित ज्ञान समाज में लोगों की स्थिति सुधारने के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए। मैलिनॉस्की ने मानव-विज्ञान के इस संबंध को 'व्यावहारिक मानव विज्ञान' कहा।

प्रकार्यवादी अपनी आलोचना को विकास और प्रसार की प्रक्रिया के विरूद्व नहीं लगाया, जिसके लिए वे जानते थे कि ये परिवर्तन की महत्वपूर्ण प्रक्रियाएँ है। वास्तव में, रेडक्लिफ-ब्राउन और मैलिनॉस्की सोचते थे कि संभवतः वे इन प्रक्रियाओं के अध्ययन को करेंगे। वे जिसके विरूद्व थे वह था 'आनुमानिक इतिहास' के माध्यम से अतीत का अध्ययन बल्कि वे आनुमनिक अध्ययन में विश्वास करते थे। यदि प्रमाणित दस्तावेज समाज के बारे में उपलब्ध हो वे बदलाव में कुछ अंतदृष्टि हेतु उपयोग में लाए जा सकते है। किन्तु प्रकार्यवादियों ने यह पाया कि 'प्राक् और पूर्व-शिक्षित' समाजों के बारे में दस्तावेज उपलब्ध नहीं थे।

क) रेडक्लिफ ब्राउन कर संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम

रेडक्लिफ-ब्राउन (1952:180) प्रत्येक समाज को 'प्रकार्यात्मक अंत संबंधित पद्धति' के रूप में परिभाषित करते हैं जिसमें कि 'सामान्य नियम या कार्य संचालित होते है वह स्वीकार करते हैं कि दुर्खीम ने पहला व्यवस्थित प्रकार्य संकल्पना को निरूपित किया और यह संकल्पना 'सामाजिक और जैविक जीवन के मध्य सादृश्य' पर आधारित है। फिर भी, रेडक्लिफ ब्राउन ने संदेह व्यक्त किया कि प्रकार्यवाद जैसा कि दुर्खीम ने प्रयोग किया है वह उद्‌देश्य परक हो सकता है। इसलिए वे 'आवश्यकता' शब्द के लिए इस्तेमाल करते हैं जो कि 'अस्तित्व की आवश्यक स्थिति' है। वह मानते है कि अस्तित्व के लिए जिस स्थिति का प्रश्न आवश्यक है वह अनुभावात्मक है, और समाज का अध्ययन इसके बारे में सूचित करेगा। रेडक्लिफ ब्राउन ' विभिन्न पद्धतियों के अन्तर्गत के लिए आवश्यक स्थिति की विविधता' को पहचानते है। एक बार जब हमने इसे पहचान लिया, हम यह कहने से बच जाएंगे कि संस्कृति के प्रत्येक विषय का एक प्रकार्य होना चाहिए और कि 'विभिन्न संस्कृतियों के विषयों का एक ही प्रकार्य होना चाहिए' (टर्नर 1987:48)।

रेडक्लिफ ब्राउन 'प्रकार्यवाद' शब्द को पंसद नहीं करते, जिसे कि मैलिनॉस्की ने उत्साह के साथ प्रसारित किया। उदाहरण के लिए, एक संस्थान समाप्त हो जाता है, किन्तु समाज समय के साथ अस्तित्व में बना रहता है, हॉलाकि यह बदल सकता है और रूपांतरित भी हो सकता है। एक संस्थान का अध्ययन हो सकता है यहाँ तक कि जब इसके हिस्से काम करना बंद कर दें। दूसरे शब्दों में, एक संस्थान की संरचना का अध्ययन उसके प्रकार्य से हटकर किया जा सकता है, जो कि समाज के साथ ऐसा नहीं है। सामाजिक संरचना को तभी देखा जा सकता जब यह काम करता है। संरचना और प्रकार्य समाज-मानव विज्ञान में अलग न किये जाने वाली संकल्पनाएं है। इसलिए रेडक्लिफ ब्राउन अपने उपागम को

'संरचनात्मक प्रकार्यात्मक' कहते है, न कि 'प्रकार्यत्मक' जैसा कि कईयों ने किया है। वह लिखते है। (1952 : 180)

प्रकार्य की संकल्पना में संरचना की संकल्पना शामिल रहती है जिसमें संबंधों के समुच्चय इकाई तत्वों के बीच भी शामिल रहती है, सरंचना का सातत्य जीवन की प्रक्रिया से सुरक्षित रहती है जो इकाई अंगों से बनी होती है।

रेडक्लिफ ब्राउन के संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम में निम्न धारणाएँ शामिल रहती हैः

1) समाज के अस्तित्व के लिए आवश्यक स्थिति बनाए रखना इसके हिस्सों का न्यूनतम एकीकरण है।

2) प्रकार्य की संकल्पना उन प्रक्रियाओं की ओर संकेत करती है जो आवश्यकता एकीकरण या एकता को बनाए रखती है।

3) और, प्रत्येक समाज में, संरचनात्मक लाभ आवश्यक एकता के बचाए रखते के योगदान को प्रदर्शित कर सकती है।

दुर्खीम के लिए, एकता मुख्य (केंद्रीय) संकल्पना है, जबकि रेडक्लिफ ब्राउन के लिए यह समाज का 'संरचना सातत्य' है। उदाहरण के लिए, वंश परंपरा के विश्लेषण में, रेडक्लिफ ब्राउन के अनुसार, सर्वप्रथम किसी को यह मान लेना चाहिए कि एकता का कुछ न्यूनतम स्तर इसके सातत्य में अवश्य बने रहना चाहिए। तब वंश परंपरा से जुड़ी प्रक्रियाओं का परीक्षण किया जाना चाहिए, उनके द्वारा सामाजिक एकता को बनाए रखने के परिजामों के मूल्यांकन हेतु। तब, कोई समाज के दूसरी पंरपराओं की ओर मुड़ेगा, उनके अंगों के योगदान का प्रत्येक स्तर पर विश्लेषण पूर्व संरचनात्मक सातत्य को बनाए रखेगा।

रेडक्लिफ ब्राउन अपने कथन के हठधर्मी होने से काफी दूर हैं। उनके लिए, सामाजिक व्यवस्था की प्रकार्यात्मक एकता (या एकीकरण) एक परिकल्पना है कि हम समाज की एकता और संरचनात्मक सातत्य को देखते हैं जिसका यह मतलब नहीं कि यह बदलता नहीं, रेडक्लिफ ब्राउन यह मानते है कि सामाजिक स्वास्थ्य की अवस्था (यूनोमिया) और सामाजिक बीमारी (डिसनोमिया) सातत्य के दो सीमाओं को शामिल करते है, और वास्तविक समाज इन दोनों के मध्य कहीं पड़ा रहता है।

मैलिनॉस्की का प्रकार्यवाद

रेडक्लिफ ब्राउन से तुलना करने पर, यह मैलिनॉस्की हैं के अलग 'विचारधारा' के निर्माण का दावा करते हैं, 'प्रकार्यात्मक स्कूल'। मैलिनॉस्की (1926:132-3) मानते हैं कि प्रत्येक सभ्यता में प्रत्येक प्रथा, भौतिक वस्तु, विचार और विश्वास कुछ महत्वपूर्ण प्रकार्य की पूर्ति करता हैं, तथा इसे कुछ कार्यों की भी पूर्ति करनी होती है और यह कार्यरत पूर्ण के भीतर अपरिहार्य होता है।

जबकि रेडक्लिफ ब्राउन समाज और इसके अस्तित्व के आवश्यक स्थिति (अर्थात् एकीकरण) से शुरू करते हैं, मैलिनॉस्की का प्रारंम्भिक बिंदु व्यक्ति है, जिसकें पास मूल (या जैविक) आावश्यकताओं का समुच्चय होता है। जिसे उसके अस्तित्व के लिए पूरा किया जाना चाहिए। यह इस महत्व के कारण है कि मैलिनॉस्की व्यक्ति को प्रदान करते हैं वह शब्द है 'मनोवैज्ञानिक प्रकार्यवाद' जो व्यक्ति के जिए संरक्षित हैं, रेडक्लिफ ब्राउन के उपागम की तुलना में जिसे 'सभाचर भारतीय प्रकार्यवाद' कहा जाता है क्योंकि इसमें समाज एक मुक्त संकल्पना है।

मैलिनॉस्की का उपागम तीन स्तरों के मध्य तुलना करता है, जैविक सामाजिक संरचनात्मक और सांकेतिक (टर्नर 1987: 50-1)। इन प्रत्येक स्तरों की आवश्यकतों की एक प्रवृत्ति है जो कि व्यक्ति को जीवित बचे रहने के लिए उसकी पूर्ति करना जरूरी है। यह उसकी

उत्तर जीविता है कि बड़े अस्तित्व को उत्तर जीविता (जैसे कि समूह, समुदाय, समाज) उस पर निर्भर रहती है। मैलिनॉस्की प्रस्तावित करते हैं कि इन तीनों स्तरों में एक अधिक्रम है। इसके नीचले स्तर पर जैविक व्यवस्था रखी गई हैं, उसके बाद सामाजिक संरचनात्मक व्यवस्था है और अंत में, सांकेतिक व्यवस्था है। जिस तरह एक स्तर पर आवश्यकताओं की पूर्ति होती है वह दूसरे स्तर के आवश्यकताओं की पूर्ति में भी वैसा ही प्रभाव डालती है।

सबसे मूल आवश्यकता जैविक है, किंतु यह किसी प्रकार के अपचयवाद की और संकेत नहीं करती, क्योंकि प्रत्येक स्तर में इसके भिन्न गुण और आवश्यकताएँ शमिल होती हैं और कई स्तरों के अंतसंबंधों से संस्कृति की एक एकीकृण पूर्णता उजागर होती हैं। संस्कृति मैलिनॉस्की के उपागम का मुख्य बिंदु है। यह अनोखा मानवीय है, जिसके लिए यह उप मानवीयता के अस्तित्व में नही पाई जाती। इन सभी चीजों को मिलाकर भौतिक और अभौतिक जिसे कि मनुष्य ने बनाया है जबसे वे अपने वानर पूर्वज़ों से अलग हुए हैं। संस्कृति वह उपकरण जिससे कि मनुष्य अपनी जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। यह आवश्यक सेवा और आवश्यक पूर्ति की व्यवस्था है। इस भूमिका की वजह से संस्कृति मनुष्य की जैविक आवश्यक पूर्ति करता है जिसके कारण मैलिनॉस्की का प्रकार्यवाद 'जैस सांस्कृतिक प्रकार्यवाद' कहलाता है।

रेडक्लिफ ब्राउन और मैलिनॉस्की के बीच एक और अंतर पर विचार किया जा सकता है। मैलिनॉस्की की मौलिक संकल्पना संस्कृति की संकल्पना है - घटना मात्र है। (गौड़ और प्रासंगिक) रेडक्लिफ ब्राउन के लिए। वह मानते हैं कि सामाजिक संरचना का अध्ययन (जो कि उनके अनुसार प्रेक्षयीय तत्व है) संस्कृति के अध्ययन को भी समाहित कर लेती हैं, इसलिए, संस्कृति के अध्ययन के लिए अलग अनुशासन की जरूरत नहीं है। अभी जबकि सामाजिक संरचना व्यक्तित्व लोगो को होती हैं, संस्कृति लोगों के मन में होती हैं, अवलोकन के अधीन नही होती है उसी तरह नहीं होती जैसे कि सामाजिक संरचना होती है। रेडक्लिफ ब्राउन सामाजिक मानव विज्ञानिकों प्राकृति के विज्ञान को एक शक्ति बनाना चाहते हैं, जो तभी संभव होगा जब आनुभविक अन्वेषण की विषय सामवती होगी।

मैलिनॉस्की के उपागम का आधार 'महत्वपूर्ण अनुक्रम सिद्वांत हैं, जिसका कि जैविक आधार है और वह सभी समाजों में समाविष्ट की जाती है। मे अनुक्रम ग्यारह तक होता हैं, हर एक में एक मनोवेग को बनाए रखता हैं, एक दैहिक क्रिया से जुड़ी होती हैं, और एक संतोष जो उस क्रिया के परिणाम से प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए, निद्राकुता का मनोवेब सोने के कार्य को साथ लिए रहती हैं, 'बची हुई ऊर्जा के जागृति के संतोष में परियत होती है। (मैलिनॉस्की 1944:77, बनदि 2000:68)। मैलिनॉस्की ग्यारह प्रदत के रूपावली को सात जैविक आवश्यकताओं और उनके सांस्कृतिक प्रत्युत्तर के समुह के साथ मानते हैं (देखें तालिका 6.2)।

मूल आवश्यकता	संस्कृति प्रत्युत्तर
1. मेटावॉलिज्म़	सहानुभूति
2. उत्पत्ति	नातेदारी
3. शरारिक आराम	आप्रय
4. ब्चाव	सभवाभ
5. गतिविधि	क्रियाकलाप
6. विकास	प्रक्षिशक
7. स्वास्थ्य	स्वास्थ्य विज्ञान

उदाहरण के लिए, पहली आवश्यकता भोजन है, और सांस्कृतिक तंत्र भोजन प्राप्त करने की प्रक्रिया पर केंद्रित हैं, जिसके लिए मैलिनॉस्की सहानुभूति शब्द का इस्तेमाल करते हैं, जिसका तात्पर्य होता है कि भोजन को भेजना। उसी तरह, दूसरी आवश्यकता उत्पत्ति (समाज का जैविक सातत्य) की है और जिसका सांस्कृतिक प्रत्युत्तर नाते दारी है जो विवाह और यौन संबंध से संबंधित है। इससे, मैलिनॉस्की चार परत अनुक्रम में जाते हैं, जिसे वे उपकरणात्मक आदेश कहते हैं, और सभी को उसके सांस्कृतिक प्रत्युत्तर से जोड़ते है। चार परत वाला अनुक्रम है अर्थ, सामाजिक नियंत्रण, शिक्षा और राजनीतिक संगठन। यहाँ से, वे सांस्कृतिक व्यवस्था की ओर बढ़ते हैं - धर्म, जादू, विश्वास और मूल्य संस्कृति में इसकी भूमिका का वे परिक्षेय करते हैं।

12.5 टॉलकोट पार्सन्स (1902-1975) और रॉबर्ट मर्टन (1910-2003 का प्रकार्यवाद

सन् 1975 में, एक महत्वपूर्ण लेस में, पार्सन्स अपने विद्याथी रॉबर्ट मर्टन और स्वंय को प्रखर प्रकार्यवादी करार देते हैं। उनके अनुसार, संरचना जीवित व्यवस्था के अंगों के मध्य संबंधों के किसी समूह को कहते हैं। अनुभविक आधार पर, वे कहते हैं, इसका अनुमान लगाया जा सकता है, या दिलाया जा सकता है कि ये संबंध कुछ काल तक स्थिर रहते हैं। प्रक्रिया संरचना से सहसवादी संकल्पना हैं, कोई परिवर्तन कहता है जो व्यवस्था की अवस्था में होता है या कि इसके प्राभाविक हिस्सों में होता हैं। संरचना के साथ, मुख्य संकल्पना स्थिरता की है, और प्रक्रिया के साथ, यह परिवर्तन की है। इसलिए, संरचना से, सामाजिक व्यवस्था के संबंधों के प्रतिमान का ध्यान दिलाता है, और प्रक्रिया उस व्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों की ओर ध्यान दिलाता है, संरचना मात्सक प्रकार्यवाद का महत्वपूर्ण अभिलोकन रहा है कि इसने प्रक्रिया की अपेक्षा संरचना पर जोर दिया है।

पार्सन्स मानते हैं कि उनका मूल प्रतिपादन संरचनात्मक प्रकार्यवाद, शीर्षक से है समाज का विश्लेषण उसे स्थिर होने की प्रवृत्ति से करते हैं, किंतु नया प्रतिपादन, संरचनात्मक प्रकार्यवाद, शीर्षक से है समाज का विश्लेष उसे स्थिर होने की प्रवृत्ति से करते हैं, किंतु नया प्रतिपादन/जहाँ प्रकार्य की संकल्पना पर ज्यादा जोर है अपेक्षाकृत संरचना के, जो परिवर्तन और विकास को ज्यादा महत्व देता है। उदाहरण के तौर पर कोई अमेरिकी संदर्भ में इसका परिक्षेप कर सकता है।, स्थिर संरचना जैसे कि परिवार में महिलाओं की शिक्षा की प्रक्रिया का प्रकार्य (पार्सन्सः 1951)।

पार्सन्स का प्रकार्यवाद, प्रकार्यात्मक आदेश के शब्दों में अधिक जाना जाता है। व्यवस्था के अस्तित्व को बनाए रखने की आवश्यकता स्थिति की जरूरत पड़ती है। इसे अंग्रेजी भाषा में AGIL मॉडल के नाम से भी जाना जाता है (पहले चार अक्षरों के प्रकार्य पर आधारित जिसका पार्सन्स ने खोज किया है) या 'चार-प्रकार्य रूपावली' यह पार्सन्स के सहयोगी कार्य रॉबर्ट एफ. बेल्स के साथ लघु समूहों में नेतृत्व के प्रयोग से विकसित हुआ (रॉकर : 1974)।

सभी कर्म सिद्दांत और समान उनमें से एक हैं - चार प्रमुख समस्याओं का सामना करें (जो चार प्रमुख आवश्यकताएँ हैं), अर्थात् अनुकूलन (A), लक्ष्य प्राप्ति (G), एकीकरण (I), और आदर्श अनुपालन या जैसा कि पार्सन्स ने दूसरा नाम दिया, अंतनिर्हित (अव्यक्त) आदर्श अनुपालन या समान रूप से, अव्यक्तता (L)। पार्सन्स समाज (या सामाजिक व्यवस्था) को एक बड़े वर्ग के रूप में देखते हैं, जिसे वे चार बराबर भागों में बाँटते हैं। रेखाकित विचार यह है कि सभी व्यवस्थाओं को इन चार प्रकार्यों को जीवित रहने के लिए आवश्यक रूप से पूरा करना चाहिए। इन चार प्रकार्यात्मक आदेशों के अर्थ इस प्रकार हैं।

1) अनुकूलनः इसका तात्पर्य समाज से काफी मात्रा में संसाघनों को जुटाने की समस्या से है और उन्हें पूरी व्यवस्था में बाँटने से है। प्रत्येक समाज को कुछ संस्थाओं की जरूरत होती है। जो व्यवस्था में अनुकूलन का प्रकार्य करते हैं जो कि एक बाह्य प्रकार्य है। अनुकूलन साधान प्रदान करता हैं - उपर्कात्यक पक्ष - लक्ष्य की प्राप्ति के लिए है। जैविक तत्व कार्य के सामान्य व्यवस्था में अनुकूलन का कार्य करते हैं। समाज के संदर्भ में, आर्थिक संस्था यह प्रकार्य करती हैं।

2) लक्ष्य प्राप्ति : यह प्रकार्य संसाधन जुटाने के लक्ष्य प्राप्ति की आवश्यक व्यवस्था से संबंधित है और पूरी व्यवस्था में उसे बाँटने से है। यह कार्य करने वालों की अभिप्रेरणा को लामबंध (संघटित) करती है। कार्य की समान्य व्यवस्था में, व्यक्तित्व इस प्रकार्य को करता है, जबकि समाज के मामले में यह कार्य राजनीतिक संस्थाओं का दिया जाता हैं, क्योंकि सत्ता निर्णय लेने और उसे अमल में लाने के लिए आवश्यक होती हैं। लक्ष्य प्राप्ति ध्येय से संबंधित हैं - उपभोगात्मक पक्ष। चूँकि लक्ष्य बाह्य वातावरण के संबंध से चित्रित की जाती हैं, यह अनुकूलन की तरह हैं, एक बाह्य प्रकार्य।

3) एकीकरणः यह पार्सन्स के चार प्रकार्य रूपावली का ह्रदय माना जाता है (वैलेस ए. ड वोफ 1980:36)। एकीकरण का अर्थ विभिन्न कर्त्ताओं (या, व्यवस्थाओं इकाई जैसे कि संस्थाएँ) के मध्य संबंध नियंत्रित करना, समायोजन और संयोजन की आवश्यकता। जिससे कि व्यवस्था एक चलायमान तत्व बना रहे। क्रिया के सामान सिद्धांत के अनुसार, सामाजिक व्यवस्था इस प्रकार्य को निभाती है, जबकि समाज में, वैधानिक संस्थाएँ और न्यायालय इस कार्य को करते हैं। एकीकरण ध्येय या साहस से संबंधित हैं, और व्यवस्था के आंतरिक पक्ष से भी संबंधित हैं।

4) अव्यक्तता (आदर्श अनुपालन और तनाव प्रबंधन) : इस प्रकार्य में व्यवस्था को ज्ञान और सूचना प्रदान करना शामिल होता है। क्रिया के सामान्य सिद्धांतों में, संस्कृति ज्ञान और सूचना का संग्रह - इस प्रकार्य का निष्पादन करते हैं। संस्कृति कार्य नहीं कर सकती क्योंकि इसके पास ऊर्जा नहीं होती। यह छिपी होती हैं, कर्त्ताओं को उपलब्ध (जो कि ऊर्जा से भरे होते हैं) करातीं है ज्ञान और सूचना जिसकी आवश्यकता क्रिया को पूरा करने के लिए होती हैं। क्योंकि संस्कृति पीछे अस्तित्व में होती हैं लोगों को कार्य पूर्ण करने के लिए, इसे अव्यक्त कहते हैं। एकीकरण दो चीज़ों पर ध्यान देती हैं, पहला यह कर्त्ता को प्रेरित करती है व्यवस्था में अपनी भूमिका निभाने हेतु और आदर्श मूल्यों को बनाए रखने हेतु, और दूसरा, कर्त्ताओं के विभिन्न अंगों के बीच आंतरिक तनाव प्रबंधन की यात्रिकता प्रदान करना। प्रत्येक समाज जिस समस्या का सामना करती हैं वह है उसकी मूल्य व्यवस्था को अक्षुण बनाए रखना और यह सुनिश्चित करे कि वे मूल्य अच्छी तरह संप्रेषित किए जाएँ और उसे आत्यसात कर पाएँ। संस्थाएँ इसे आगे बढ़ाती है वे परिवार, धर्म और शिक्षा। अव्यक्तता ध्येय प्राप्ति का साधन प्रदान करती हैं, यह व्यवस्था का आंतरिक हिस्सा हैं।

AGIL मॉडल

साधन (उपकरणात्मक)	ध्येय (उपभोगात्मक)
बाह्य अनुकूलन A	लक्ष्यप्राप्ति G
आतंरिक अव्यक्तता (आर्दश अनुपालन और तनाव मुक्त प्रबंधन) यात्रिकता	एकीकरण I

कर्म सिद्धांत का	सामान्य स्तर
तत्व	व्यक्तित्व
संस्कृति	समाजिक व्यवस्था

समाजिक व्यवस्था में AGIL प्रकार्य

अर्थ	राजनीति
न्यालीय व्यवस्था	सामाजिक समुदाय

विश्लेषण के उद्देश्य के लिए, पार्सन्स AGILके अनुरूप उप-व्यवस्था की पहचान करते हैं सभी व्यवस्थाओं में और उनके उप व्यवस्थाओं में भी (देखें चित्र)। जैसे कि हमने देखा हैं, कर्म सिद्धांत के सामान्य स्तर पर जैविक तत्व अनुकूलन का प्रकार्य करता है, व्यक्तित्व व्यवस्था, लक्ष्य प्राप्ति का प्रकार्य, सामाजिक व्यवस्था कई इकाइयों को जोड़ती हैं, और सांस्कृतिक व्यवस्था आदर्श अनुपालन से संबंधित है। तब सामाजिक व्यवस्था चार AGIL प्रकार्यों में बाँटा गया है। हमने पहले ध्यान दिया कि अर्थ अनुकूलन का प्रकार्य करता हैं, जबकि, राजनीतिक (राजनीतिक संस्था), लक्ष्य प्राप्ति का प्रकार्य है। उप-व्यवस्था के लिए जो एकीकरण का प्रकार्य करती हैं, पार्सन्स 'सामाजिक समुदाय' शब्द का प्रयोग करते हैं, जो कि कठिनाई होती होती है के जेमिनशाफ्ट (समुदाय) के विचार को याद दिलाता है। 'सामाजिक समुदाय' भाईचारा, एकता, सम्बद्धता और प्रतिमान के प्रतिनिष्ठाा, मूल और संस्थाओं को उत्पन्न करती है। आदर्श अनुपालन का प्रकार्य, पार्सन कहते हैं, न्यासीय व्यवस्था के लक्ष्य नाम देते हैं।

जो न्यास की प्रकृति को शामिल किए रहती है या न्यासित समाहित किए रहती है। यह व्यवस्था नैतिक मूल्य, विश्वास ओर अभिव्यक्ति संकेतों को उत्पन्न करती है और उसे वैधता प्रदान करती है।

व्यवस्था को प्रत्येक उप-व्यवस्था को व्यवस्था मानक विश्लेषक के लिए लिया जा सकता है और फिर उसके अंगों को चार हिस्सों में तोड़कर जो कि क्रमशः अनुकूलन, लक्ष्य प्राप्ति, एकीकृत और अव्यक्तता का कार्य निभाता है। समाज के इस प्रकार के विशलेषण को व्यवस्थित उपागम कहते हैं।

12.6 सारांश

पार्सन्स का एजीआईएल मॉडल एक आदर्श प्रकार है सामान्य समाजों की अपेक्षा निर्देशित समाजों में उपयुक्त है यह प्रचलित रूप से महान सिद्धान्त के नाम से जाना जाता है सभी एकीकृत सम्मिलित सिद्धान्त- जिसमें माना जाता है कि विस्तृत विवरण शक्ति है पार्सन्स का यह विद्यार्थी रॉबर्ट मर्टन ऐसे सिद्धातों से संदेह वादी है जिनके लिए यह अति सामान्य है ज्यादा प्रयोग होने हेतु मर्टन 1957। इसके स्थान पर वह अपनी पसंद मध्य स्तर में अभिव्यक्त करते है जो कुछ सीमित प्रश्नों में समाहित घटनाओं (जैसे- कि समूह, सामाजिक गतिशीलताा या भूमिका संघर्ष) को प्रतिपादित करता है। आंशिक रूप से, इस मध्य-स्तर योजना की वजह से, मर्टन का प्रकायवाद पार्सन्स से अलग है। उदाहरण के लिए, मर्टन किसी प्रतिकात्मक पूर्व-आवश्यकता की खोज का त्याग करते हैं जो सभी सामाजिक व्यवस्थाओं में वैद्य होगा। वे पहले के प्रकार्यवाद विचार को अस्वीकार करते हैं कि पुनरावर्ती सामाजिक घटनाएं पूरे समाज के लाभ के संदर्भ में व्यवस्थित होनी चाहिए। आलोचना के

लिए, मर्टन पूर्वी के प्रकार्यता- दिपों के तीन मान्यताओं की पहचान करते हैं जो नीचे दिए गए हैं-

1) समाज के प्रकार्यात्मक इकाई की अवधारणा। यह एक अनुमान है कि समाज में एकता है, जो पेचिदा की वजह से अलग करता है जो पूर्व में एक अशं बनाता है।

2) सार्वभौमिक प्रकार्यवाद की अवधारणा। यह एक अनुमान है कि सभी समाजों या सांस्कृतिक रूपों में ससकारात्मक प्रकार्य है। जो समाज की भलाई और उसके अनुपालन के लिए है।

3) अपरिहार्यता की अवधारणा। यह एक अनुमान है कि प्रकार्य के एक समान या सांस्कृतिक रूप से निर्वाह करता है वह समाज के जीवित रहने की अपरिहार्य पूवस्थिति है। मर्टन मानते हैं कि ये अवधारणाएं अनुभाविक रूप से प्राथमिक नहीं है उदाहरण के लिए, यह मान लेने का कोई कारण नहीं हैं कि विशिष्ट संस्थाएं एकमात्र हैं जो प्रकार्यों की पूर्ति करें। आन्दभविक शोध यह दर्शाता है कि कई स्तर हो सकते हैं किसे मर्टन प्रकार्यात्मक-विकल्प कहते हैं? वे उसी प्रकार्य को निभाने में सक्षम हो सकते हैं।

तार्किक दृष्टि से मर्टन यह प्रयास करने की कोशिश करते हैं जिसे कि वे समाजशास्त्र में प्रकार्यात्मक विश्लेषण का वर्गीकरण कहते हैं। एक प्रकार्यात्म्क रूपावली। हेतु जो कि महान सिरुद्धान्त नहीं है। के सामाजिक यथार्थ के वास्तविक दिशाओं पर विचार करता है। विचलन और अनुरूपता, उनका विवेचन ओर समझ प्रस्तुत करता है। अन्य प्रकार्यवादियों की तरह, वे समाज को, व्यवस्था का अंतरर्निछित अंग मानते हैं, जहां एक अंग का प्रकार्य दूसरे अंग पर प्रभाव चलता और वही व्यवस्था पर भी प्रभाव डालता है। अपने पूर्ववर्तियों की तरह वे एकीकृत और समय की संकल्पना में रूचि रखते हैं। और समाज के बने रहने के लिए प्रथाओं और संस्थाओं के योगदान में भी रूचि रखते हें। उनके प्रकार्य की परिभाषा पूर्व के अंश का सकारात्मक योगदान के रूप में है : प्रकार्य वे योगदान या परिभाषा है जो किसी प्रदत्त व्यवस्था के अनुकूलन या समायोजन के लिए बनते हैं।''

ऊपर अन्य प्रर्कावादियों से कुछ बिंदुओं पर सहमत होकर मर्टन दो वर्गीकरण के समूह से अलग योगदान करते हैं, जैसे कि, प्रकार्य और अप्रकार्य'' मानते हैं कि सभी योगदान आंतरिक रूप से समाज के लिए अच्छे या ''प्रकार्यत्मक'' है। एक प्रतिष्ठित। जिसे स्वीकार करने में कठिनाई महसूस करते हैं। वे मानते हैं कि ऐसे कार्य है जिनमें कि परिणाम है व्यवस्था के अनुकुलन या समायोजन को कम करने की'। ऐसे कार्य नुकसान पहुंचाने वाले कारक बन जाते हैं, जिसके लिए परिभाशिक शब्द 'अप्रकार्य' है। इसलिए यह अपेक्षा की जाती है कि समाजशास्त्री हमेशा निम्न प्रश्नों को पूछेंगे।- ''किस लिए परिभाषा प्रकार्यत्य या अप्रकार्यात्मक है वहीं संस्था एक संदर्भ में प्रकार्यात्मक और दूसरे संदर्भ में अप्रकार्यात्मक हो सकती है। सभी सामाजिक संस्थाएं कुछ प्रकार्या और अप्रकार्य की अपेक्षा रखती है। बहरहाल संस्था एक सापत्य में परिणामों के बीच पूर्व संतुलन पर निर्भर करता है।

मर्टन दो द्विभाजन (प्रकार्य और अप्रकार्य, व्यक्त और अव्यक्त प्रकार्य के रूप में चार प्रकार के विवरण को आगे बढ़ाते हैं। पूर्व के प्रकार्यवादी सिर्फ एक विवरए को आगे रखते हैं ओर वह भी अव्यक्त प्रकार्य के संदर्भ में। मर्टन की संकल्पित योजना अनुभाविक शोध की ओर निर्देश करती है, अपेक्षाकृत उस सिद्धान्त के साथ रहना जिसके कि कई कथित दावे हों, जैसे कि पार्सन्स का महान सिद्धान्त'।

बॉक्स 2 : व्यक्त और अव्यक्त प्रकार्य

व्यक्त और अव्यक्त प्रकार्य के बीच अंतर का मूल समाज शासक के संस्थापक के लेखन में भी है। धर्म को अपने अध्ययन में, उदाहरण के तौर पर, दुखिया (1915) अंतर करते हैं ' लोग वह कार्य करते है जिससे वे जागरूक रहते हैं' और जो उनके सामूहिक कार्य से उभरता है जो वे नहीं करना चाहते थे या जिसका अनुमान नहीं था।' जब लोग सामूहिक टोटलवादी प्रथा के लिए एकजुट होते हैं, उनका विशिष्ट लक्ष्य उनके टोटल का सम्मान होता है, किंतु जो ये टोटल उत्पन्न करते हैं वह है हमराजन की शक्ति जो कि गैर-इरादतन बिना पहचाने ओर अनुमानिक परिव्यय होता है। इसको मानकर, कोई भी कह सकता है कि व्यक्ति प्रकार्य वे प्र्याप्त है जो न तो पहचाने जा सकते हैं न ही उसका विचार करते हैं।

बोध प्रश्न

1) रेडक्लिफ ब्राउन के संरचनात्मक प्रकार्यात्मक उपागम, वर्ण संकल्पना क्या है?

2) रेडक्लिफ ब्राउन और (मैलिनॉस्की के सैधांतिक उपागमों के मध्य प्रमुख अंतर क्या है?

3) पार्सन्स के एजीआईएल मॉडल का परीक्षण करें।

12.7 संदर्भ

बर्नार्ड, एलन (200) हिस्टरी एंड थ्योरी इन सेंथ्रोलॉजी कैम्ब्रिज यूनिवसिटी प्रैस।

डेविस, किंग्स्ले (1959), द मिथ ऑफ फंक्शनल एनॉलिसिस ऐसए स्पेशल मैथड इन सोशियोजॉजी एंड ऐंथ्रोलॉजी अमेरिकन सोशियोलॉजीकल रिव्यू, 24:757-72.

दुर्खाइम, एमिल (1893) द डिविजन ऑफ लेबर इन सोसायटी ग्लेकाः द

दुर्खाइम, एमिल (1895) द रूल्स ऑफ सोशियोलॉजिकल मेथ्ड, न्यूयॉर्क

दुर्खाइम, एमिल (1915) द एलिमेंटरी फार्म्स ऑफ रिलीजियस लाईफ, लंदन, एलन ए.ड अनवीन,

गिडेन्स, एंथोनी (1973) डक्लास स्ट्रक्चर्स ऑफ द एडवांस्ड सोसाइटीक, लंदन हंचिंसन

गाउल्डनर, एर्लवन डत्ल्यू (1973) फॉर सोशियोलॉजी लंदनः एलनलेन

गाउल्डनर, एर्लवन डब्ल्यू (1973) ऐंथ्रोपोलॉजिस्ट्स एंड ऐथ्रोपोलॉजीः द यॉडर्न ब्रिटिश स्कूल, लंदनः रूतलेज

लेवी, जू. मार्मयन जे. (1968) फेक्षनल एनॉलिसिस : स्ट्रक्चरल फंक्शनल एनॉलिसिस. इंटरनेशनल एनसाईकलोपीडिया ऑफ सोशलसाइंसेसः मैकमिलन कम्पनी एंड फ्री प्रैस।

मैलिनॉस्की, ब्रोनिस्लेव (1922) अर्गोनिट्स ऑफ दी वेस्टर्न पेसिफिक, लंदन : जॉर्ज रूतलेज संस.

मैलिनॉस्की, ब्रोनिस्लेव (1926) ऐथ्रोपोलॉजी. इनसाइक्लो बिटेनिकल : फर्स्ट सटली मेंटरी वोल्यूम.

मैलिनॉस्की, ब्रोनिस्लेव (1949) ए सांइटिफिक थ्योरी ऑफ कल्चर एंड अदर एसेज. चैपलोहिल : यूनिवर्सिटी ऑफ नॉर्थ -कैरोलिना प्रैस।

मर्टन, रॉबर्ट. के (1957) सोशल थ्योरी एंड सोशल स्ट्रक्चर, (रिवाइज्ड एनलार्ज्ड एडिशन). न्यू यॉर्क : द फ्री प्रैस।

पार्सन्स, टेलकॉट (1951) द सोशल सिस्टम. न्यू यॉर्क : द फ्री प्रैस।

पार्सन्स, टेलकॉट (1975) द प्रजेंट स्टेटस ऑफ स्ट्रक्चरल फंक्शनल थीयरी इन सोशियोलॉजी. इन लेविस ए. कैंसर (सं.), द आइडिया ऑफ सोशलट्रचर : पेपर्स इन ऑनर ऑफ रॉवर्ट के मर्टन. , न्यू यॉर्क : हरकोर्ट ब्रास जोवानोविच।

पार्सन्स, टैलकाट एंड जेरॉहड एम. प्लॉट. (1973), द अमेरिकन यूनिवर्सिटी, कैम्ब्रिज : हावर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस।

रेडक्लिफ ब्राडन, ए.आर. (1922) दी अंडमान आईलैंडस. कैम्ब्रिज : यूनिवर्सिटी-प्रैस।

रेडक्लिफ ब्राडन, ए.आर. (1952) स्ट्रचर ए.ड फंक्शन इन प्रीमिटिव सोसायटीः एंथेस एंड एडेसेज, लंदन : कोहेन वेस्ट।

रोचर, गे (1974) टैलकॉट पार्सन्स एंड अमेरिकन सोशियोलॉजी, लंदन नेलसन

टर्नर जोनॉथन एच़ (1987) द स्ट्रक्चर ऑफ सोशियोलॉजिकल क्यिरी, जयपुर : रावत पब्लिकेशन।

बैलेस, रूथ ए. एंड एलिसन वॉल्फ (1980) कंटेम्पोरेरी सोशियोलोजिकल थीयरी। एंगलवुड क्लिपन्स, एन.ज. : प्रोंसि. हाल.

इकाई 13 सामाजिक नियंत्रण और परिवर्तन*

संरचना

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 सामाजिक नियंत्रण का अर्थ और परिभाषा

13.3 सामाजिक नियंत्रण के प्रकार

13.4 सामाजिक नियंत्रण के माध्यम

13.5 सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा और अर्थ

13.6 सामाजिक परिवर्तन को समझने के दृष्टिकोण

- 14.6.1 परिवर्तन के उद्गविकासवादी सिद्धांत
- 13.6.2 चक्रीय सिद्धांत
- 13.6.3 संरचनात्मक-कार्यात्मक और संघर्ष सिद्धांत

13.7 सामाजिक परिवर्तन सिद्धांतों का संश्लेषण

13.8 सामाजिक परिवर्तन के कारक

- 13.8.1 जैविक कारक
- 13.8.2 भौगोलिक कारक
- 13.8.3 तकनीकी कारक
- 14.8.4 सामाजिक-सांस्कृतिक कारक

13.9 सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव

13.10 सारांश

13.11 संदर्भ

13.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप समझ पाएंगे:

- एक अवधारणा के रूप में सामाजिक नियंत्रण;
- सामाजिक नियंत्रण और सामाजिक व्यवस्था के बीच संबंध एजेंसियां जो सामाजिक नियंत्रण के रूप में कार्य करती हैं;
- सामाजिक परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा;
- सामाजिक परिवर्तन की समझ के लिए विभिन्न दृष्टिकोण;
- सामाजिक परिवर्तन के कारण कारक;
- सामाजिक परिवर्तन की गति।

13.1 प्रस्तावना

सामाजिक नियंत्रण समाजशास्त्र में एक केंद्रीय अवधारणा है। हम सभी को एक निश्चित तरीके से व्यवहार करने की उम्मीद होती है। यह सड़क के बाईं ओर गाड़ी चलाने, राष्ट्र

*डॉ. आर वाशुम, इग्नू और शुस्वी के, परामर्शदाता, न्यूपा

के नियमों का पालन करने और हमारे बुजुर्गों का सम्मान करने के लिए कैसे सिखाया जाता है। कुछ वांछित नियमों का पालन करने के पीछे बहुत ही बुनियादी विचार सामूहिक सामाजिक जीवन को संभव बनाना है। सामुदायिक जीवन केवल सामाजिक बाधाओं के संदर्भ में संभव है क्योंकि सामाजिक हित व्यक्तिगत हितों के बलिदान की मांग करते हैं। उदाहरण के लिए एक हमेशा ट्रैफिक सिग्नल कूदने का लुत्फ उठाता है लेकिन जुर्माना के डर के लिए ऐसा नहीं करता है। इस प्रकार, सुचारु रूप से और कुशलतापूर्वक कार्य करने के लिए समाज कुछ नियम और विनियम बनाता है और उम्मीद करता है कि उसके सदस्य उनका अनुसरण करेंगे। परिवार, स्कूल, धार्मिक संस्थानों और मीडिया जैसे सामाजिक संस्थान कुछ ऐसे अभिकर्ता हैं जो इन नियमों को सुदृढ़ और बनाए रखते हैं। कई प्रतिबंध सीधे लागू नहीं होते हैं बल्कि केवल समाजीकृत व्यक्ति में कुछ मूल्यों को आत्मसात कराके ही लागू होते हैं। इस प्रकार अधिकांश लोग डर के कारण नहीं मानते हैं, बल्कि इसलिए मानते हैं कि वे आंतरिक रूप से ऐसा करने के लिए अनुकूलित हैं। सबसे मौलिक अर्थ 'सामाजिक नियंत्रण' में किसी समाज के वांछित सिद्धांतों और मूल्यों के अनुसार स्वयं को नियंत्रित करने की क्षमता को संदर्भित किया जाता है।

13.2 सामाजिक नियंत्रण का अर्थ और परिभाषा

सामाजिक नियंत्रण का उद्देश्य यह है कि शब्द इंगित करता है कि लोगों पर प्रभावी तरीके से नियंत्रण करना है। समाज के मानदंडों के अनुसार पुष्टि या व्यवहार को अनुरूपता के रूप में जाना जाता है। वास्तव में एक आधुनिक जटिल समाज में लोगों को स्वीकार करने और कुछ निर्दिष्ट समूह मानदंडों का पालन करके सामाजिक आदेश प्राप्त किया जा सकता है। अपने सदस्यों के बीच एकजुटता और स्थिरता बनाए रखने से समाज इसकी निरंतरता सुनिश्चित करता है। नतीजतन, सामाजिक नियंत्रण का साधन व्यक्ति के लिए बाहरी नहीं रहता है लेकिन अनजाने में भी इसका पालन किया जाता है और संस्कृति का बड़ा हिस्सा बन जाता है और एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी तक फैल जाता है। और इस तरह एक सामाजिक आदेश बनाए रखा जाता है। यह समाज के कामकाज में अराजकता और भ्रम की संभावना को सीमित करता है। इसलिए, सामाजिक नियंत्रण सामाजिक आदेश का एक आवश्यक घटक है।

रॉस, एक अमेरिकी समाजशास्त्री जिन्होंने 1901 में प्रकाशित अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "सोशल कंट्रोल" में सोशल कंट्रोल की अवधारणा पेश की। उन्होंने सामाजिक नियंत्रण को "उपकरणों की प्रणाली" के रूप में परिभाषित किया है जिससे समाज अपने सदस्यों को व्यवहार के स्वीकार्य मानकों के अनुरूप लाता है। ओगबर्न और निमकोफ जैसे अन्य लोगों ने कहा है कि सामाजिक नियंत्रण "दबाव के पैटर्न को दर्शाता है जो समाज आदेश बनाए रखने और नियमों को स्थापित करने के लिए प्रयुक्त होता है"।

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि समाज व्यक्ति के व्यवहार पर किसी प्रकार का प्रभाव डालता है। प्रभाव जनता की राय, धर्म, नैतिकता, विचारधारा या जबरदस्ती के माध्यम से किया जा सकता है। इस तरह के प्रभाव विभिन्न स्तरों पर लगाया जाता है। यह समाज के सभी सदस्यों या छोटे समूहों या व्यक्तियों पर एक प्रमुख समूह के प्रभाव पर प्रभाव हो सकता है। कुछ सदस्य उन पर नैतिक अधिकार रखते हुए दूसरों के व्यवहार का अभ्यास और प्रभाव डालते हैं। व्यक्तिगत या समूह पर समाज के प्रभाव के परिणामस्वरूप उदारता और देखभाल देने का दृष्टिकोण भी हो सकता है। इस प्रकार समाज के नैतिक संहिता में सामाजीकरण के परिणामस्वरूप कुछ सदस्य दूसरों की देखभाल करते हैं। इस प्रकार सामाजिक नियंत्रण सामाजिक व्यवहार के सभी रूपों का पालन करता है और प्राचीन से हाल के दिनों में सभी समाजों का एक आवश्यक पहलू रहा है।

13.3 सामाजिक नियंत्रण के प्रकार

समाज कई तरीकों से व्यक्ति या समूह के व्यवहार पर अपना नियंत्रण करता है। सामाजिक नियंत्रण की प्रकृति सामाजिक स्थिति और सामाजिक लक्ष्यों की प्रकृति पर भी निर्भर है। कुछ सरल समाजों में कुछ प्रकार के विश्वास और रीति-रिवाजों में व्यक्तियों या समूहों पर सामाजिक दबाव के रूप में कार्य करने के लिए पर्याप्त नियंत्रण होता है। ग्रामीण समाज में लंबे समय से स्थापित परंपराओं और मान्यताओं का व्यक्ति या समूह के व्यवहार पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। हालांकि, यह आधुनिक औद्योगिक शहरी समाज में भिन्न है। यहां, रेडियो, टेलीविजन, स्कूल और कानून इत्यादि जैसे आधुनिक साधन समाज के सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित करने के उद्देश्य से अधिक प्रभावी ढंग से काम करते हैं। एक तरह से, औपचारिक और अनौपचारिक समाज के सदस्यों पर प्रभाव डालने के दो प्रकार के साधनों का प्रतिनिधित्व करता है।

इस प्रकार, सामाजिक नियंत्रण का उपयोग किए जाने वाले सामाजिक नियंत्रण के साधनों के आधार पर दो प्रमुख प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

वे हैं: औपचारिक नियंत्रण और अनौपचारिक नियंत्रण।

औपचारिक नियंत्रण: कुछ संस्थागत संगठनों या औपचारिक प्राधिकरण द्वारा विशेषता संगठनों द्वारा औपचारिक नियंत्रण का उपयोग किया जाता है, जो कानून और कानून को नियंत्रित करने के लिए बनाता है। औपचारिक नियंत्रण आधुनिक शहरी जटिल समाज की एक विशेषता है जिसमें बातचीत ज्यादातर अवैयक्तिक स्वरूप में है और सामाजिक जीवन अज्ञात है। एक जटिल समाज को अपने सदस्यों को अनुरूप बनाने के लिए औपचारिक नियंत्रण या नियमों और विनियमन की आवश्यकता होती है। कानूनी संस्था और न्यायपालिका सामाजिक नियंत्रण के एक अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त और अच्छी तरह से स्वीकार्य साधन हैं। विभिन्न कानूनों का प्रयोग विशिष्ट निकाय द्वारा किया जाता है जिसमें अधिकारियों को नियंत्रण लागू करने के लिए शक्ति के साथ निहित किया जाता है। राज्य अक्सर सामाजिक नियंत्रण का उच्चतम माध्यम होता है और नियंत्रण के प्रवर्तन के लिए पुलिस और सेना जैसे सहायक संस्थाओं के भीतर उप-समूह होता है।

अनौपचारिक नियंत्रण: अनौपचारिक नियंत्रण मुख्य रूप से लोक कथाओं, पारंपरिक मान्यताओं और रीति-रिवाजों, अनुष्ठानों, गपशप, जनमत आदि जैसे अनौपचारिक माध्यमों द्वारा विशेष रूप से अनचाहे नियमों और विनियमों द्वारा किया जाता है। सामाजिक नियंत्रण का अनौपचारिक साधन स्वयं पर विकसित होता है और यह एक अभिन्न और स्वीकार्य हिस्सा होता है किसी कालावधि में जीवन के लिए । वे अभ्यास के साथ और अधिक स्थापित हो जाते हैं। हालांकि उल्लंघन के मामले में व्यक्तियों को कोई विशिष्ट दंड नहीं दिया गया है, फिर भी औपचारिक नियंत्रण औपचारिक नियंत्रण से उनके प्रभाव में अधिक प्रभावी होते हैं। वे सरल या ग्रामीण समाज में अधिक प्रभावी हैं जहां समाज के सदस्य अधिक परंपरा उन्मुख हैं और समुदाय अधिक कसकर बुना हुआ है। वे परिवार जैसे प्राथमिक समूहों में भी अधिक प्रभावी होते हैं जहां व्यक्तिगत जमीन पर बातचीत होती है। अनौपचारिक नियंत्रण में, नियंत्रण या तो आंतरिक मूल्यों के माध्यम से या तिरस्कार, सम्मान और उपहास की भावनाओं के माध्यम से होता है।

जटिल समाजों और शहरी शहर के जीवन में, सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने के लिए औपचारिक और साथ ही नियंत्रण के अनौपचारिक तंत्र दोनों काम करते हैं।

13.4 सामाजिक नियंत्रण के माध्यम

एक समाज उन माध्यमों से सामाजिक नियंत्रण बनाए रखता है जो समय के साथ प्रभावी होने के लिए विकसित हुए हैं। समाज के सदस्यों पर नियंत्रण करने के लिए लोकमार्ग , धर्म, पारंपरिक रीति-रिवाजों, लोकाचार इत्यादि के अलावा कानून, शिक्षा, शारीरिक दबाव और नियमों का उपयोग करती है। समाज द्वारा उपयोग की जाने वाली सामाजिक नियंत्रण तंत्र के प्रकार इसकी संगठनात्मक जटिलता के संदर्भ में समाज की प्रकृति पर निर्भर करते हैं।

कानून द्वारा नियंत्रणः आधुनिक शहरी औद्योगिक समाज में कानून सामाजिक नियंत्रण का सबसे शक्तिशाली साधन है। राज्य के राजनीतिक संगठन के साथ समाज में कानून प्रकट होता है। 'कानून' शब्द को विभिन्न तरीकों से परिभाषित किया गया है। जे एस रोऊक कहते हैं कि "कानून राजनीतिक माध्यमों से उत्पन्न सामाजिक कानून का एक रूप है"। कानून के स्रोत कई हैं। कानून बनाए जाते हैं और सामाजिक सिद्धांतों, आदर्शों और लोकाचार के आधार पर कानून लागू किए जाते हैं। कानून औपचारिक तभी बनते हैं जब वे एक उचित कानून बनाने के प्राधिकरण द्वारा अधिनियमित होते हैं। औपचारिक कानून जानबूझकर उचित योजना के साथ किए जाते हैं। पश्चिमी प्रणाली कानूनों में निश्चित, स्पष्ट और सटीक माना जाता है और समान परिस्थितियों में कानून के समक्ष सभी को समान रूप से माना जाता है। हालांकि यूरोपीय संघ के अलावा संस्कृतियों से निकलने वाले गैर-पश्चिमी कानूनों के लिए यह सच नहीं हो सकता है। कानून एजेंसियों द्वारा लागू किया जाता है; इसलिए, औपचारिक निकाय बनाए जाते हैं। उपनिवेशीकरण और पश्चिमी सभ्यता के प्रसार के साथ, औपचारिक कानून की प्रकृति ज्यादातर समाजों में समान हो गई है।

शिक्षा द्वारा नियंत्रणः शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण उपकरण है और समाज के सभी रूपों में सामाजिक नियंत्रण का एक तंत्र है। शिक्षा को केवल युवा पीढ़ियों द्वारा सामाजिक मूल्यों और मानदंडों के प्रतिबिंब के रूप में देखा जा सकता है। अनौपचारिक शिक्षा सभी सामाजीकरण माध्यमों, विशेष रूप से परिवार द्वारा प्रदान की जाती है। ऐमाइल दुर्खिम द्वारा शिक्षा को युवा पीढ़ी के सामाजीकरण के रूप में देखा गया है क्योंकि यह शिक्षा के माध्यम से है जिसके द्वारा समाज अपनी विरासत को एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी तक ले जाता है। औपचारिक शिक्षा, वह शिक्षा है जो एक संस्था द्वारा प्रदान की जाती है जो मुख्य रूप से समर्पित है और जिसके पास अपने उपकरण और तकनीक, किताबें और शिक्षक हैं, समाज के सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित करने में केंद्रीय भूमिका निभा रहे हैं। औपचारिक शिक्षा समाज के युवा सदस्यों को सही तरह की विचारधारा प्रदान करने के लिए तैयार की गई है ताकि वे इसके प्रजनन में योगदान दे सकें। औपचारिक शिक्षा में अक्सर धार्मिक और देशभक्ति मूल्य शामिल होते हैं जिन्हें जिम्मेदार नागरिक के गठन के लिए आवश्यक समझा जाता है।

सार्वजनिक राय द्वारा नियंत्रितः सार्वजनिक राय सामाजिक नियंत्रण की एक महत्वपूर्ण एजेंसी है। सार्वजनिक राय केवल उन विचारों के द्रव्यमान को संदर्भित करती है जो लोग किसी दिए गए मुद्दे पर व्यक्त करते हैं। वास्तव में यह समाज के अधिकांश सदस्यों की सामूहिक राय के रूप में काम करता है। इसके अलावा यह लोकतांत्रिक समाजों में अधिक मूल्यवान है। प्रेस, रेडियो और टेलीविज़न इत्यादि जैसे विभिन्न आधुनिक माध्यमों के माध्यम से जनमत इकट्ठा की जाती है।

प्रचार द्वारा नियंत्रितः प्रचार लोगों के दृष्टिकोण, व्यवहार, विश्वास और विचारधारा को प्रभावित करता है। कभी-कभी इसे पुराने विश्वास प्रणाली को नए के साथ बदलने के लिए

भी उपयोग किया जाता है। हालांकि, यह सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव हो सकता है। ज्यादातर सरकारें और शासन व्यवस्था लोगों के व्यवहार में बदलाव लाने के लिए प्रचार का उपयोग करती हैं। इस प्रकार लोगों से राज्य के लक्ष्यों को स्वेच्छा से प्रचार के अनुरूप करने का आग्रह किया जाता है जो उन्हें विश्वास दिलाता है कि समाज जो चाहता है वह वास्तव में उनके लिए भी अच्छा है।

बलप्रयोग द्वारा नियंत्रितः जबरन व्यक्ति किसी व्यक्ति या समूह के व्यवहार को रोकने या नियंत्रित करने के लिए भौतिक बल को संदर्भित करता है। जब लोगों को खतरे के तहत या कुछ लगाए गए नियंत्रणों के तहत कुछ नियमों का पालन करने के लिए मजबूर किया जाता है, तो ऐसा कहा जाता है कि किसी व्यक्ति या समाज के सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए मजबूर का उपयोग किया जाता है। राज्य एकमात्र एजेंसी है जो इसे वैध रूप से उपयोग करती है हालांकि हर कोई बल के उपयोग की हर स्थिति से सहमत नहीं हो सकता है, जैसे कि पुलिस शांतिपूर्वक लोगों का प्रदर्शन करने पर बल का उपयोग करती है या जब राज्य किसी भी विरोध को दबाने के लिए दमनकारी उपायों का उपयोग करता है।

सीमा शुल्क द्वारा नियंत्रितः कस्टम मूल रूप से सामाजिक नियंत्रण का एक अनौपचारिक माध्यम है। यह ज्यादातर अनिश्चित रूप से प्रयोग किया जाता है। हम उन्हें अपने परिवारों में बचपन से सीखते हैं या जो हम प्राथमिक समूहों में बहुत अनौपचारिक तरीके से कहते हैं। यह सामूहिक जीवन सुनिश्चित करता है। वे पारंपरिक या ग्रामीण समाज में अधिक प्रभावशाली हैं।

धर्म द्वारा नियंत्रितः धर्म कुछ अलौकिक शक्तियों में विश्वास को संदर्भित करता है। मैकइवर और पेज ने धर्म को धर्म के रूप में परिभाषित किया है "न केवल मनुष्यों और मनुष्यों के बीच बल्कि मनुष्यों और कुछ उच्च शक्तियों के बीच संबंधों का तात्पर्य है।" यह सामाजिक नियंत्रण का एक मजबूत साधन है। इसलिए, यह इस विश्वास पर आधारित है कि यह भगवान के साथ मनुष्यों के रिश्ते की पुष्टि करता है और इसलिए, एक धार्मिक कोड बनाता है। और यह धार्मिक कोड है जो मानव व्यवहार के आचरण को नियंत्रित करने के लिए महत्वपूर्ण हो जाता है। धर्म की शक्ति बहुत गहरी जड़ है क्योंकि यह उच्च शक्ति की इच्छाओं के साथ सामाजिक आवश्यकताओं को स्वीकार करती है। उदाहरण के लिए कई धर्मों में महिलाओं को विश्वास है कि पुरुषों की सेवा करना उनका धार्मिक कर्तव्य है और यह बनाए रखने और जारी रखने में पितृसत्तात्मक समाज में बहुत प्रभावी है।उसी तरह राजा के शासन को कई धर्मों ने समर्थन दिया है यह कहकर कि राजा एक दैवीय शक्ति है।

नैतिकता द्वारा नियंत्रितः नैतिकता और धर्म के बीच घनिष्ठ संबंध है। नैतिकता "विवेक द्वारा हमारे लिए प्रकट होने वाले अच्छे और बुरे से संबंधित नियमों और सिद्धांतों का मुख्य भाग है"। नैतिकता वह है जो व्यक्ति को सही आचरण को गलत से अलग करता है। लेकिन नैतिक आदेश सार्वभौमिक नहीं है और एक समाज से दूसरे समाज में भिन्न होता है, और प्रत्येक समाज अपने बच्चों में अपने मानदंडों और मूल्यों को प्रतिबिंबित करता है। पश्चिमी समाज के संदर्भ में कोई नैतिक अवधारणाओं का प्रतिनिधित्व करने के लिए ईमानदारी, विश्वास, निष्पक्षता, ईमानदारी, दया और बलिदान की पहचान कर सकता है। भारतीय समाज का नैतिक आदेश परिवारों और बुजुर्गों और निम्नलिखित नियमों के प्रति सम्मान के प्रति अधिक है। नैतिक आदेश लोगों द्वारा आंतरिक रूप से किया जाता है और इसलिए, लोगों के व्यवहार को प्रभावित करने या समाज के सदस्यों पर नियंत्रण बनाए रखने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

सामाजिक नियंत्रण के औपचारिक और अनौपचारिक साधनों के उपर्युक्त तंत्र के अलावा अनुष्ठानों के संदर्भ में विभिन्न सामाजिक समारोहों, फैशन का उपयोग किसी व्यक्ति या समाज के सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए भी किया जाता है।

इस प्रकार, समाज सुचारू रूप से और प्रभावशाली ढंग से काम करने के क्रम में अंतर्निहित तंत्र के कुछ रूपों का उपयोग करता है। व्यक्तियों के पास वांछित व्यवहार से विचलन करने की प्रवृत्ति होती है क्योंकि उनकी इच्छाओं की इच्छा होती है, जैसे खुशी और व्यक्तिगत लक्ष्य पूर्ति। उदाहरण के लिए लोग जीवन की अच्छी चीजों की इच्छा रखते हैं कि वे निष्पक्ष साधनों से प्राप्त नहीं कर पाएंगे, लेकिन सामाजिक-विरोधी साधनों जैसे कि चोरी या नियमों को तोड़ना। सामाजिक नियंत्रण उन सभी तंत्रों को संदर्भित करता है जिनका प्रयोग व्यक्तियों के व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है और उन्हें अपने मानदंडों और मूल्यों के अनुरूप बनाता है। यह वह तरीका है जिसके माध्यम से समाज अपने सामूहिक जीवन को सुनिश्चित करता है और मानक सामाजिक आदेश बनाए रखता है। तंत्र की प्रभावशीलता सरल से जटिल समाज में भिन्न होती है। ग्रामीण परंपरागत सरल समाज में रीति-रिवाज, लोकमार्ग और लोकाचार जैसे साधन अधिक प्रभावी होते हैं। लेकिन कानून, शिक्षा, सार्वजनिक राय शहरी जटिल समाज में अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

बोध प्रश्न

1) सामाजिक नियंत्रण के अर्थ और परिभाषा की व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) विभिन्न प्रकार के सामाजिक नियंत्रण पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) सामाजिक नियंत्रण की एजेंसियों पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

13.5 सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा और अर्थ

सामाजिक परिवर्तन को विभिन्न तरीकों से परिभाषित किया गया है। विद्वानों और लेखकों ने उन्हें कई अलग-अलग तरीकों से परिभाषित किया है ताकि सामाजिक परिवर्तन की कोई भी सहमत परिभाषा न हो। फिर भी, हमारे उद्देश्य के लिए हम सामाजिक परिवर्तन की प्रचलित परिभाषा देने का प्रयास करेंगे। सामाजिक परिवर्तन को व्यापक रूप से किसी भी सामाजिक संगठन और/या सामाजिक संरचना और समाज के कार्यों और इसके विभिन्न अभिव्यक्तियों के महत्वपूर्ण परिवर्तन या संशोधन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। परिभाषा सामाजिक संबंधों के विभिन्न पैटर्न - सामाजिक प्रक्रियाओं, सामाजिक पैटर्न, कार्रवाई और बातचीत-संबंधों और आचरण (मानदंड), मूल्यों, प्रतीकों और सांस्कृतिक उत्पादों के नियमों में महत्वपूर्ण परिवर्तनों के पहलुओं को शामिल करती है। सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा संस्कृति के भौतिक और गैर भौतिक पहलुओं दोनों के साथ समय के साथ विविधता को संदर्भित करती है। ये परिवर्तन दोनों समाजों (अंतर्जात बलों) और बिना बाहरी (बाहरी शक्तियों) से बाहरी ताकतों द्वारा लाए जाते हैं।

13.6 सामाजिक परिवर्तन को समझने के दृष्टिकोण

सामाजिक परिवर्तन और/या सामाजिक परिवर्तन की समझ के लिए कुछ मुख्य दृष्टिकोण हैं। वो हैं:

1) उद्धविकासवादी सिद्धांत;

2) चक्रीय सिद्धांत; तथा

3) संरचनात्मक-कार्यात्मक और संघर्ष सिद्धांत।

13.6.1 परिवर्तन के उद्धविकासवादी सिद्धांत

सामाजिक परिवर्तन के विकासवादी सिद्धांत परिवर्तन के कई लेकिन संबंधित सिद्धांतों के समूह हैं। परिवर्तन के विकासवादी सिद्धांत की मुख्य धारणा यह है कि मूल से अंतिम चरण तक विकास के चरणों के समान अनुक्रम में, या एक सरल और 'आदिम' से अधिक जटिल में सभी समाजों के सामाजिक परिवर्तन की एक सतत दिशा है और उन्नत राज्य। विकासवादी सिद्धांत का भी अर्थ है कि विकासवादी परिवर्तन विकास के अंतिम चरण तक पहुंचने के लिए खत्म हो जाएगा। विकासवादी सिद्धांतवादी प्रगति और विकास के रूप में परिवर्तन पर विचार करते हैं। सिद्धांत को दो मुख्य श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है- प्राचीनकाल संबंधों विकासवादी सिद्धांत और नव-विकासवादी सिद्धांत।

19वीं शताब्दी के मानवविज्ञानी और समाजशास्त्रियों द्वारा शास्त्रीय विकासवादी सिद्धांत विकसित किए गए हैं। हालांकि, उनके बीच दृष्टिकोण अलग-अलग हैं, विचारों के अभिसरण का एक अंतर्निहित सिद्धांत है कि एक अनौपचारिक और समान दिशा में विकासवादी परिवर्तन होता है। वे बड़े पैमाने पर सरल अनियंत्रित जीवों से सबसे जटिल पशु-मानव के लिए पशु जीवन की प्रगति की एक समानता बनाते हैं। उनका मानना है कि जैसे-जैसे समाज विकसित होते हैं और बढ़ते हैं, उनके सदस्यों के कार्य भी अधिक विशिष्ट होते जाते हैं जैसे कि लाखों शरीर कोशिकाओं के विकास एक अंतरबंधित प्रणाली के भीतर विशिष्ट कार्यों को करने के लिए होते हैं। विकासवादी परिवर्तन के शास्त्रीय सिद्धांतों के मुख्य समर्थक अगस्त कॉम्ट (फ्रांसीसी इवोल्यूशनरी और पॉजिटिविस्ट स्कूल से), हर्बर्ट स्पेंसर, ई.बी. टेलर, एच जे एसमेन, जे एफ मैकलेनन और एस जे जी फ्रैज़र (ब्रिटिश

इवोल्यूशनरी स्कूल से) थे; लुईस हेनरी मॉर्गन (अमेरिकी विकासवादी स्कूल से); और जे जे बाचोफेन, एडॉल्फ बस्टियन और फर्डिनेंड टोनीज़ (फर्डिनेंड टोनीज़) (जर्मन इवोल्यूशनरी स्कूल से)। हम इन प्राचीन काल संबंधी विकासवादियों द्वारा विकसित मानव विकास के वर्गीकरण के कुछ ढांचे पर विचार करेंगे।

नव-विकासवादी सिद्धांतों को 20वीं शताब्दी में वी .गॉर्डन चाइल्ड, जूलियन स्टीवर्ड और लेस्ली व्हाइट द्वारा पेश किया गया था। विकासवादी सिद्धांतों के उनके सूत्रों को साक्ष्य, व्यवस्थित विश्लेषण और कठोर तर्क की सावधानीपूर्वक जांच करने की विशेषता है। उन्हें शास्त्रीय विकासवादी सिद्धांतकारों से अलग करने के लिए, उन्हें नव-विकासवादी के रूप में भी लेबल किया गया है। बाद में, मार्शल डी. सहलिन्स और एल्मन सेवा ने 'विशिष्ट' और 'सामान्य' विकास की अवधारणा को विकसित करके विकास के सिद्धांतों (विशेष रूप से जूलियन स्टीवर्ड और लेस्ली व्हाइट के सिद्धांतों) के संश्लेषण का प्रयास किया। इन सिद्धांतों का मुख्य दावा यह था कि विकास जैविक और सांस्कृतिक पहलुओं दोनों में दो दिशाओं में एक साथ स्थानांतरित हो गया। इस विकासवादी प्रक्रिया के बाद प्रगति हुई और नए लोगों ने पुराने लोगों से नया सिद्धांत उभारा। उन्होंने इन दो प्रक्रियाओं को अपनी सम्पूर्णता में एक दूसरे के सम्बन्ध के रूप में माना।

13.6.2 चक्रीय सिद्धांत

चक्रीय सिद्धांतों को लंबे समय तक स्थितियों, घटनाओं, रूपों और/या आचरण के दोहराव में परिवर्तन के साथ चित्रित किया गया है, हालांकि परिवर्तन के पुनरावर्ती चरणों (चक्र) की अवधि अलग-अलग होगी। चक्रीय सिद्धांतकारों का मानना है कि समाज चरणों की एक श्रृंखला से गुज़रते हैं। हालांकि, वे पूर्णता के चरण में समाप्त होने की धारणा पर विचार नहीं करते हैं, लेकिन उन्हें एक स्तर पर लौटने के रूप में देखते हैं जहां यह चक्रीय तरीके से आगे के लिए शुरू होता है। कुछ प्रमुख योगदानकर्ताओं में ए.एल. क्रॉबर, ओस्वाल्ड स्पेंगलर, पितिरिम सोरोकिन, अर्नाल्ड टोनीबी और विल्फ्रेडो परेतो शामिल हैं।

13.6.3 रचनात्मक–कार्यात्मक और संघर्ष सिद्धांत

संरचनात्मक-कार्यात्मक और संघर्ष सिद्धांत आम तौर पर सामाजिक परिवर्तन के सूक्ष्म और मध्यम श्रेणी के सिद्धांतों से संबंधित होते हैं। संरचनात्मक-कार्यकर्ता मानते हैं कि मानव शरीर की तरह समाज, संस्थानों की एक संतुलित प्रणाली है, जिनमें से प्रत्येक समाज को बनाए रखने में एक कार्य करता है। वे स्थिरता के रूप में 'परिवर्तन' पर विचार करते हैं जिसके लिए कोई स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं होती है। वे मानते हैं कि परिवर्तन समाज के संतुलन को बाधित करते हैं, जब तक कि संस्कृति में परिवर्तन को एकीकृत नहीं किया जाता है। सोसाइटी उन परिवर्तनों को स्वीकार और अपनाने वाले हैं जो उपयोगी (कार्यात्मक) पाए जाते हैं, जबकि वे बेकार (निष्क्रिय) में परिवर्तनों को अस्वीकार करते हैं।

संघर्ष सिद्धांत परिवर्तन के संरचनात्मक-कार्यात्मक सिद्धांतों से निकटता से संबंधित हैं। उनके पास बदलाव के प्रति कोई विशिष्ट सिद्धांत नहीं है। संघर्ष सिद्धांतवादी मानते हैं कि जब समाज पीड़ित समूह अपनी जिंदगी की स्थिति में सुधार करते हैं तो समाज उच्च क्रम में प्रगति करते हैं। हालांकि वे मानते हैं कि समाज आसानी से निम्न से उच्च स्तर तक विकसित होते हैं। वे सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए संघर्ष को निरंतर और आवश्यक कारक मानते हैं। वे सामाजिक संघर्ष के परिणामस्वरूप सामाजिक परिवर्तन देखते हैं, लेकिन निरंतर नहीं। संघर्ष लगातार जारी है, इसलिए भी बदल जाता है।

13.7 सामाजिक परिवर्तन सिद्धांतों का संश्लेषण

अधिकांश सिद्धांतवादी आज सामाजिक चर्चा के विभिन्न विचारों और सिद्धांतों को एकीकृत करते हैं जिन पर चर्चा की गई है। हालांकि, एक आम सहमति है कि समाज पर सशक्त विभिन्न कारकों के कारण समाज बदलते हैं। ये कारक समाज के भीतर और बाहर और योजनाबद्ध और अनियोजित दोनों हो सकते हैं। कई सिद्धांतवादी मानते हैं कि समाजों में बदलाव जरूरी नहीं है कि वे अच्छे या बुरे हों। वे मानते हैं कि यद्यपि एक स्थिर समाज आम तौर पर अराजक और विवादित समाज से बेहतर होता है, स्थिरता कभी-कभी शोषण, उत्पीड़न और अन्याय का संकेत देती है। अन्याय और उत्पीड़न की ऐसी स्थिति में, संघर्ष होने वाला है और समाज को बदलने के लिए मजबूर होना होगा।

13.8 सामाजिक परिवर्तन के कारक

सामाजिक परिवर्तन विभिन्न कारकों से लाया जाता है। ये कारक मुख्य रूप से विभिन्न समाजों में और अलग-अलग समय में परिवर्तन की प्रकृति, गति और उसमें अंतर के लिए ज़िम्मेदार हैं। उन्हें व्यापक रूप से निम्नलिखित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

1) जैविक कारक
2) भौगोलिक कारक
3) तकनीकी कारक
4) सामाजिक-सांस्कृतिक कारक

13.8.1 जैविक कारक

जैविक कारकों को आगे दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है- गैर मानव जैविक कारक, और मानव जैविक कारक। गैर मानव जैविक कारकों में पौधे और जानवर शामिल हैं। वे विभिन्न तरीकों से लोगों के जीवन को प्रभावित करते हैं। मनुष्यों को जीवित रहने के लिए पौधों और जानवरों की आवश्यकता होती है, चाहे वह किसी संस्कृति की परिभाषा के अनुसार कई अलग-अलग तरीकों से भोजन, कपड़ा, दवा और अन्य उद्देश्यों के लिए हों। मनुष्य को कई प्रक्रियाओं के माध्यम से ऑक्सीजन और अन्य उपयोगिताओं का लाभ उठाने के लिए परोक्ष रूप से पौधों और जानवरों की भी आवश्यकता होती है। पर्यावरण के परिवर्तन आजीविका, भोजन की आदतों और संबंधित सामाजिक पहलुओं में बदलाव ला सकते हैं। मानव जैविक कारक दो मुख्य तरीकों से सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करते हैं- किसी दिए गए आबादी के आनुवांशिक चरित्र, और मात्रा, घनत्व और जनसंख्या की संरचना। आनुवांशिक कारक के विपरीत जनसंख्या परिवर्तन, सामाजिक परिवर्तन के सबसे महत्वपूर्ण कारकों में से एक माना जाता है। आबादी में वृद्धि और वह भी रचना सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित कर रही है। स्थानान्तरण दो या दो से अधिक विदेशी लोगों और संस्कृतियों के संपर्क के बाद एक नई पर्यावरण व्यवस्था बनाकर परिवर्तन लाता है जिसके साथ कई नई समस्याएं आती हैं। प्रवासन संवर्धन, सांस्कृतिक प्रसार और / या सामाजिक संघर्ष की प्रक्रियाओं को भी प्रभावित कर सकता है।

13.8.2 भौगोलिक कारक

भौगोलिक परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन के महत्वपूर्ण कारक रहे हैं। ऐसे कई उदाहरण हैं जहां भौगोलिक कारकों से सामाजिक परिवर्तन लाए गए हैं। प्राकृतिक आपदाएं जैसे भूकंप

और बाढ़ पर्यावरण और सामाजिक दोनों परिवर्तनों का कारण बन सकती हैं। अक्सर जब इस तरह के दुर्घटनाओं में भूमि और संसाधन खो जाते हैं तो सामाजिक असमानताओं में गहराई होती है क्योंकि अधिकांश बोझ हाशिए वाले लोगों पर पड़ता है। आधुनिक समय में पारिस्थितिक परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन का एक प्रमुख स्रोत भी है। मनुष्यों द्वारा कई पारिस्थितिकीय परिवर्तन प्रेरित किए गए हैं। एक क्षेत्र की आबादी से अधिक, सामाजिक और राजनीतिक संघर्ष, वनों की कटाई, बड़े बांधों के निर्माण, दूसरों के बीच, एक कारण या किसी अन्य कारण के लिए क्षेत्र/सीमा क्षेत्र के अतिवृद्धि ने समकालीन दुनिया में भारी सामाजिक और पारिस्थितिकीय समस्याओं का कारण बना दिया है स्थानांतरण और आपदाओं की तुलना में सामाजिक परिवर्तन के भी बड़े कारक बनें।

13.8.3 तकनीकी कारक

प्रौद्योगिकी को सामाजिक परिवर्तन के महत्वपूर्ण कारकों में से एक माना जाता है। यह विशेष रूप से समकालीन दुनिया के संदर्भ में काफी सच है। यह इस तथ्य के लिए है कि प्रौद्योगिकी में बदलाव एक महत्वपूर्ण तरीके से सामाजिक संगठन और/या समाज की संरचना को प्रभावित करता है। मास मीडिया का उपयोग और इंटरनेट के माध्यम से सूचना के तेजी से हस्तांतरण और संचार प्रौद्योगिकी में क्रांति ने दुनिया का चेहरा बदल दिया है। हालांकि इसने अक्सर अमेरिकी संस्कृति जैसे प्रमुख संस्कृतियों को दुनिया भर में अपना प्रभाव बना दिया है। लोगों ने पश्चिमी कपड़े पहनना शुरू कर दिया है और पूरी दुनिया में लोकप्रिय जंक फूड खाया जाता है। साथ ही, प्रौद्योगिकी की उपलब्धता और उपयोग के आधार पर परिवर्तन की परिमाण और परिवर्तन एक अवधि और स्थिति से भिन्न हो सकता है। जबकि आधुनिक तकनीक मनुष्य के लिए एक महान वरदान रहा है, इसके अलावा अन्य अंधेरे पक्ष भी हैं। यह मुख्य रूप से जीवन और प्रणालियों के पुराने तरीकों, विनाशकारी अंत के लिए प्रौद्योगिकियों के डिजाइन या दुरुपयोग की जा रही प्रौद्योगिकियों की विनाशकारी प्रकृति के परिवर्तन के कारण है।

13.8.4 सामाजिक-सांस्कृतिक कारक

सामाजिक परिवर्तन के सामाजिक-सांस्कृतिक कारक सबसे महत्वपूर्ण कारण रहे हैं। मानव सामाजिक परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण अदाकार हैं। चूंकि समाज एक मानव सृजन है, इसलिए इंसान भी मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं ताकि वे अपनी सृष्टि को बदल सकें। खोज, आविष्कार, प्रसार, सामाजिक आंदोलनों, आदि के रूप में विभिन्न मानव गतिविधियों के कारण सामाजिक परिवर्तन हुआ है। समाज में नवाचार की ओर लोगों के दृष्टिकोण और मूल्यों के कारण परिवर्तन भी होता है। कुछ लोग अधिक रूढ़िवादी और बदलने के लिए प्रतिरोधी हैं जबकि अन्य परिवर्तन के लिए अधिक खुले हैं। परिवर्तन ज्यादातर लोगों द्वारा अपरिहार्य और प्राकृतिक के रूप में देखा जाता है।

सांस्कृतिक संपर्क के क्षेत्रों में स्थित समाज हमेशा परिवर्तन के केंद्र रहे हैं और अपने आपको विश्व के चौराहे की स्थिति की तरह पाते हैं। दूसरी ओर, अलग-अलग क्षेत्र आमतौर पर स्थिरता, रूढ़िवाद, और परिवर्तन के प्रतिरोध के केंद्र होते हैं। नृजाति वर्णना साक्ष्य दर्शाते हैं कि सबसे आदिम जनजातियों को सबसे अलग समुदायों में पाया गया है। खोज और आविष्कारों ने सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में बहुत योगदान दिया है। आधुनिक तकनीकी ज्ञान के परिचय के बाद आधुनिक समय में यह सत्य तेजी से महसूस किया जा रहा है।

विघटन, समूह से समूह तक संस्कृति के फैलाव की प्रक्रिया को सामाजिक परिवर्तन के मुख्य कारणों में से एक माना जाता है। संपर्क के माध्यम से समाजों और समाजों के बीच अंतर होता है। यही कारण है कि अलगाव की स्थिति में प्रसार की प्रक्रिया में प्रवेश करना मुश्किल हो जाता है। जाज, जो न्यू ऑरलियन्स के काले संगीतकारों के बीच पैदा हुआ था, समाज के अन्य समूहों के लिए फैल गया, और फिर बाद में अन्य समाजों के साथ-साथ दुनिया के विभिन्न हिस्सों में फैल गया।

सामाजिक आंदोलन निश्चित रूप से सामाजिक परिवर्तन के सबसे महत्वपूर्ण कारकों में से एक है। हम सामाजिक आंदोलन को दो अलग-अलग रूपों में समझ सकते हैं- एक, उन आंदोलनों का आयोजन कुछ नए सामाजिक रूपों को बनाने के लिए किया जाता है जो आम तौर पर प्रकृति में उग्र और उदार होते हैं; और दो, वे आंदोलन जो पुराने सामाजिक रूपों को बनाए रखने या पुनर्जीवित करने से संबंधित हैं जो आम तौर पर रूढ़िवादी या प्रतिक्रियात्मक होते हैं। हालांकि, इन दोनों मामलों में, सामाजिक परिवर्तन आंदोलनों की सफलता और समाज के कारण होने वाले प्रभाव पर निर्भर करेगा।

फिर, नए सामाजिक रूपों को बनाने के उद्देश्य से सामाजिक आंदोलन की सफलता की मात्रा कई अंतर-संबंधित कारकों पर निर्भर करेगी, जैसे लक्ष्य के असर और प्रासंगिकता और संबंधित लोगों को आंदोलन के उद्देश्य, नेतृत्व की गुणवत्ता प्रदान करता है , रणनीति की कला, प्रभावशाली व्यक्तियों और समाज के वर्गों को शामिल करने की क्षमता, और किस हद तक निहित हितों, काउंटर बलों और बाधाओं को सफलतापूर्वक निपटाया जाता है।

क्रांतिकारी आंदोलन को सामाजिक आंदोलन के रूप में माना जा सकता है। क्रांतिकारी आंदोलन भी सामाजिक परिवर्तन का कारण बनता है। 1789 की फ्रांसीसी क्रांति ने फ्रेंच लोकतंत्र के उदय, आधुनिक नागरिक सेना का उदय देखा और दुनिया के विभिन्न हिस्सों में कई लोगों के लिए एक महान आंख खोलने वाला एक नमूना था जो मुक्ति और न्याय के लिए संघर्ष कर रहे हैं। रूसी क्रांति क्रांतिकारी परिवर्तन का एक और उदाहरण है जो रूस में राजशाही सरकार और वर्ग स्तरीकरण का अंत लाया।

13.9 सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव

मानव समाज पर सामाजिक परिवर्तन का असर सामाजिक वैज्ञानिकों, विशेष रूप से, समाजशास्त्रियों के लिए एक प्रमुख चिंता का विषय रहा है। समाजशास्त्री व्यक्ति के मुकाबले समूह के प्रभाव से चिंतित हैं। सामाजिक परिवर्तन के बारे में समाजशास्त्री की राय विभिन्न विचार धारा के अनुसार अलग-अलग होती है।

ऐसे कई समाजशास्त्री हैं जो मानते हैं कि औद्योगिक समाज काम की प्रकृति के कारण व्यक्तियों को एक-दूसरे से अलग करता है। कार्ल मार्क्स विचारकों में से एक थे जो मानते थे कि कृषि से औद्योगिक समाजों के कदम से लोगों को उनके श्रम से अलग कर दिया जाएगा और इसलिए उनके असली सेवकों से अलग हो जाएगा। यह, उन्होंने महसूस किया, अपरिहार्य था क्योंकि उत्पादित माल का स्वामित्व कारखाने के मालिक के पास होगा, न कि कामगार के पास। ऐसे अन्य समाजशास्त्री भी हैं जो सोचते हैं कि औद्योगिक समाज मानव समाज को प्रभावित करेगा। फर्डिनेंड टॉनीज और मैक्स वेबर, दूसरों के बीच, उन समाजशास्त्रियों के रूप में उद्धृत किए जा सकते हैं जिन्होंने इस विचार की सदस्यता ली है कि औद्योगिक समाज मानवीय संबंधों को प्रभावित करेगा, हालांकि विभिन्न तरीकों से। जबकि पूर्व का मानना था कि औद्योगिकीकरण और शहरीकरण ने लोगों को अलग किया है और सामाजिक संबंधों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है, बाद में उनका मानना था कि लोग अधिक तर्कसंगत और व्यावहारिक बन जाएंगे।

कुछ समाजशास्त्री हैं, जैसे कि एमाइल दुर्खीम, जिन्होंने महसूस किया कि जटिल औद्योगिक समाजों के पास श्रम विभाजन के आधार पर श्रम विभाजन के आधार पर मानव संबंधों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जो कि अन्य विशेषताओं के बीच विशेषज्ञता के बाद है जो समाज पर निर्भरता और एकीकरण को बढ़ावा देता है। लेकिन उन्होंने विसंगति के बारे में भी बात की और सामाजिक संबंधों को तोड़ दिया।

समाजशास्त्रियों ने आज महसूस किया कि औद्योगिक समाज ने पारंपरिक परिवार और सामुदायिक प्रणालियों को विघटित कर दिया है और टूटे हुए परिवारों और तलाक के मामलों में वृद्धि हुई है। व्यक्तित्व का उदय और अधिक उदार विचारों को भी एक उदार और मानवीय समाज में लाने के रूप में देखा गया है। समाजशास्त्रियों को यह भी पता है कि आधुनिक समाजीकरण और जीवन शैली व्यक्तियों को इस तरह से व्यवहार करने के लिए प्रोत्साहित करती है जो औद्योगिक जीवन और विशेष व्यवसायों के अनुकूल होगी। मीडिया मध्यम वर्ग के जीवन शैली को अनुकरण और अनुकूलित करने के लिए व्यक्तियों को प्रभावित करने में अत्यधिक भूमिका निभाता है।

आधुनिक ज्ञान और प्रौद्योगिकी के परिचय ने मानव जीवन और पर्यावरण के लिए बड़ी समस्याएं और चिंता भी पैदा की हैं। ऑटोमोबाइल और ईंधन का भारी उपयोग भारी प्रदूषण और खतरनाक उत्सर्जन का कारण बनता है। यह शारीरिक वातावरण को भी प्रदूषित और नुकसान पहुंचाता है जो मनुष्य के अस्तित्व के लिए निर्भर करता है। ईंधन की मांग और मांग को पूरा करने के साधनों ने अक्सर युद्ध की सीमा तक समुदायों और राज्यों के बीच संघर्ष का कारण बना दिया है। परमाणु हथियार और सामूहिक विनाश के अन्य हथियारों के आविष्कार और उपयोग ने मानवता को बहुत चिंता का कारण बना दिया है। साथ ही मनुष्य दुनिया भर में बंधन बना रहे हैं और अब हमारे पास वैश्विक गांव की अवधारणा है। इस प्रकार परिवर्तन दोनों तरीकों से काम करता है और भविष्य हमेशा अप्रत्याशित होता है।

बोध प्रश्न

1) सामाजिक परिवर्तन को समझने के लिए विभिन्न दृष्टिकोणों पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) सामाजिक परिवर्तन के कारकों की व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) मानव समाज पर सामाजिक परिवर्तन के प्रभाव पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

13.10 सारांश

इस इकाई में, हमने सामाजिक नियंत्रण और सामाजिक परिवर्तन के अर्थ और अवधारणा को समझाया है। हमने चर्चा की है कि सामाजिक तंत्र विभिन्न तंत्रों के माध्यम से समाज में व्यक्तियों के बीच संबंध बनाए रखने के लिए सामाजिक आदेश का एक आवश्यक घटक है। हमने विकासवादी सिद्धांतों, चक्रीय सिद्धांतों, संरचनात्मक-कार्यात्मक और संघर्ष सिद्धांतों के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन को समझने के लिए विभिन्न पहलुओं और दृष्टिकोणों को भी समझाया है। सामाजिक परिवर्तन के लिए विभिन्न कारकों और समाज और व्यक्ति पर उनके प्रभाव पर भी चर्चा की गई है।

13.11 सन्दर्भ

चिल्ड,वी गॉर्डन(1942).व्हाट हैपेंड इन हिस्टरी. मिडल्सेक्स. पैंगविन

कॉम्ट,ऑगस्त(1974). द पॉज़िटिव फिलोसोफी. न्यू यॉर्क.एएमएस प्रेस

दुर्खाइम, 1947 (1893). द डिवीजन ऑफ लेबर इन सोसायटी. न्यू यॉर्कः द फ्री प्रेस

क्रोबर,ए. एल (1958). स्टाइल एंड सिविलाइजेशन. न्यू यॉर्कः कोर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस

मार्क्स,कार्ल 1946 (1867). कैपिटल. सं फ़्रेडरिक एंजेल्स. लंदनः जॉर्ज एलन अंड अनवीन

मॉर्गन,लेविस हेनरी. 1963(1877). एनसिएंट सोसायटी. क्लीवलैंड एंड न्यू यॉर्कः द वर्ल्ड पब्लिशिंग कंपनी

परेटों,विल्फ़्रेदों(1935). द माइंड एंड सोसायटी. न्यू यॉर्कः हारकोर्ट ब्रास

शाहलिन्स, मार्शल डी एंड एलमन आर सर्विस (1960) (सं). इवोलुशन एंड कल्चर. एन आर्बरःयूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन प्रेस

सोरोकिन पितिरिम(1957). सोसल एंड कल्चरल डाइनामिक्सः ए स्टडी ऑफ चेंज इन मेजर सिस्टम्स ऑफ आर्ट,ट्रुथ एथिक्स लॉ एंड सोसल रिलेशनशिप. बोस्टनः पोर्टर सर्जेंट

स्पेन्सर, हर्बर्ट(1898). द प्रिंसिपल्स ऑफ सोसिओलोजी. खंड 3. न्यू यॉर्कः डी. अपलेटन एंड कंपनी

स्पेंगलर,ओसवल. 1962(1918). द डेक्लाइन ऑफ द वेस्ट. न्यू यॉर्कः नोफ़

स्टीवर्ड, जूलियन.एच (1963). थियरी ऑफ कल्चर चेंजः द मेथडोलोजी ऑफ मल्टीलिनियर इवोलुशन. अरबानाःयूनिवर्सिटी ऑफ इलिनोय प्रेस

टोनबी, अर्नोल्ड 1946 (1934). स्टडी ऑफ हिस्टरी. न्यू यॉर्कः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

टाईलर, एडवर्ड बी(1871). प्रीमिटिव कल्चरः रिसर्चेस इंटु द डेवलपमेंट ऑफ माईथोलोजी, फिलोसोफी,रेलीजन,लंगवेज़, आर्ट एंड कस्टम्स.लंदनः जे. मुरे

वेबर , मैक्स(1958). द प्रोटेस्टेंट एथिक एंड स्पिरिट ऑफ कैपिटलिज्म. ट्रांस. टेलकोट पारसंस. न्यू यॉर्कः स्क्रिबनर्स

व्हाइट, लेसली. ए(1959). द इवोलुशन ऑफ कल्चर,न्यू यॉर्कः मैकग्रा हिल्स

सहायक पुस्तकें

इकाई 1 समाजशास्त्र और समाजिक मानव विज्ञान का उद्‌भव

बोट्‌मोरे, टी बी (1962), सोशिओलोजी ए गाइड टू प्रोब्लमस एंड लिटरेचर, लंडनः जॉर्ज एलन एंड अनविन लिमिटेड।

एरिक्सन, थॉमस हाईलैंड एंड फिन सिवर्टनेल्सन (2001), ए हिस्ट्री ऑफ़ अन्थ्रोपोलोजी (सेकिंड एडिशन), न्यू योकः प्लूटो प्रेस।

हैरिस, मर्विन 1979 (1969), दा राइज़ ऑफ अन्थ्रोपोलोजीकल थ्योरी, लंडन एंड हेनलीः रूटलेज एंड केगन पॉल।

रिट्‌ज़र, जी (2016), क्लासिकल सोसियोलोजिक्ल थ्योरी, न्यू दिल्लीः मैकग्रो हिल एजुकेशन (इंडिया)।

वोगेट, फ्रेड डब्लू (1975), ए हिस्ट्री ऑफ एथ्नोलोजी, यू एस एः होल्ट, राइनहार्ट एंड विंस्टन।

इकाई 2 समाजशास्त्र का मानव विज्ञान के साथ संबंध

बी टी, जॉन, 1980 (1964), अदर कल्चर्स, लंदन एवं हेनलीः रूटलेज एंड कीगेन पॉल

बीटेल, अंद्रे, 2004 (2002) सोशियोलॉजीः एस्से ऑन अप्रोच एंड मेथड (तृतीय संस्करण), नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, प्रेस।

धंगारे, डी.एन. 1993, थीम्स एंड पर्सपेक्टिव्स इन सोशियोलॉजी, जयपुर एवं नई दिल्लीः रावत प्रकाशन।

मेलीनोंस्की, ब्रोनीसलॉ, 1922, आर्गोनॉट्स ऑफ द वेस्टर्न पेसिफिकः एन एकाउंट ऑफ नेटिव एंटरप्राइजेज एंड एडवेंचर इन द आर्किपेलेगोज ऑफ मेलेनेशियन न्यू ग्यूना, लंदनः जार्ज रूटलेज एंड संस लिमिटेड।

रेडक्लिफ–ब्राउन, ए.आर. 1983 (1958) मेथड इन सोशल अंथ्रापॉलॉजी, शिकागो, इलियोनॉइसः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।

सरना, गोपाला (1983) सोशियोलॉजी एंड एंथ्रापोलॉजी एंड अदर एस्सेज, कलकत्ताः इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल रिसर्च एंड एप्लाइड एंथ्रापोलॉजी।

इकाई 3ः समाजशास्त्र का मनोविज्ञान से संबंध

बैरन,आर.ए एंड बयर्ने, डी. (1997). सोशल साइकोलॉजी.(8जीएडिशन). बोस्टन, एम.एःआलिन एंड बेकन.

डलमटेर, जे. (2006). हैंडबुक ऑफ़ सोशल साइकोलॉजी. यु ऐस एः स्प्रिंगर.

मैक डॉगल, डब्लू. (2001). ऐन इंट्रोडक्शन टू सोशल साइकोलॉजी. (14जी एडिशन). ओंटारियोःबातोचे बुक्स.

इन्कलेस, ए. (1964). व्हाट इस सोशियोलॉजी? ऐन इंट्रोडक्शन टू द डिसिप्लिन एंड प्रोफेशन. न्यू जर्सीः प्रेन्टिस हॉल.

डलेंटी, जी. एंड इषन इंजिन एफ़. (2003) हैंडबुक ऑफ़ हिस्टोरिकल सोशियोलॉजी, न्यू दिल्लीः सेज।

लाचमैन, आर. (2014) वॉट इज़ हिस्टोरिकल सोशियोलॉजी, कैम्ब्रिजः पोलिटि प्रैस।

टिली, सी (1981) एज़ सोशियोलॉजी मीट्स हिस्ट्री, न्यू यार्कः अकैडमिक प्रैस।

निसबैट, आर. (1969) सोशीयल चेंज एंड हिस्ट्री, ऑक्सफोर्ड, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस।

इकाई 5: समाजशास्त्र का अर्थशास्त्र से संबंध

बोर्दियू, पिएर्रे .1984 डिस्टिंक्शन सोशल क्रिटिक ऑफ द जजमेंट ऑफ टेस्टहार्वर्डः यूनिवर्सिटी प्रेस हार्वर्ड।

स्वेडबर्ग , नील जे एंड रिचर्ड. 2005 द हैंडबुक ऑफ इकोनॉमिक्स सोशियोलॉजी प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयॉर्क।

ओंकार नाथ, जी. 2012 इकोनॉमिक्स, प्राइमर फॉर इंडिया, ओरियंट ब्लैकस्वान।

स्मेल्सर, ए मार्टिनेली.इकोनामी एंड सोसाइटीज, ओवरव्यू इन इकोनामिक सोशियोलॉजी,लंदनः सेज।

इकाई 6 समाजशास्त्र का राजनीति विज्ञान से संबंध

जानोस्की, थॉमस एट अल (2005)। द हैंडबुक ऑफ पॉलिटिकल सोशियोलॉजीः स्टेट, सिविल सोसाइटीज एंड ग्लोबलाइजेशन, कैम्ब्रिज, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

मैकौली, डब्ल्यू, जेम्स (2003)। एन इनट्रोडकशन तो पॉलिटिक्स , स्टेट एंड सोसाइटी , नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन।

नैश, केट (2010)। कोंटेम्पोरेरी पॉलिटिकल सोशियोलॉजी : ग्लोबललिजेशन , पॉलिटिक्स एंड पावर , माल्डेन, विली–ब्लैकवेल।

इकाई 7 – संस्कृति और समाज

दूबे, एस. सी.(1990) इंडियन सोसाइटी. नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्टद्य

अप्पादुरई, ए(1996). मॉडर्निटी एट लार्जः कल्चरल डायमेंशन ऑफ़ ग्लोबलीसेशन. लंदनः यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिनेसोता प्रेस।

लिंटन, आर (1955).द ट्री ऑफ़ कल्चर. नई यॉर्कः अल्फ्रेड ए. क्नोप्फ़।

सेन, एस.(2007). ग्लोबलाइजेशन एंड डेवलपमेंट.नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट।

इकाई 8 सामाजिक समूह और समुदाय

हौर्टन,पॉल बी एंड हंट,चेस्टर एल. 2004. सोसिओलोजी. न्यू यॉर्क : टाटा मैगरा–हिल

टोनीज़,एफ. 1955. कोंयूनीति एंड असोसियेशन. लंदनः रुतलेज एंड किगा पॉल

यंग के. 1949. सोसिओलोजीः ए स्टडी ऑफ सोसिओलोजी एंड कल्चर. न्यू यॉर्क. अमेरिकन बुक कंपनी

यूनिट 9 संगठन और संस्थाएँ

ब्ला, पी.एम. एवं स्काट, डब्ल्यू.आर, (1963) फार्मल आर्गेनाइजेंसः ए कंपेरेटिव एप्रोच, रूटलेज एंड केगेन पॉल

ऍटिजियोनी, ए. (1964) मॉडर्न आर्गेनाइजेशंस, इंग्लेवुड क्लिफ्स, एन.जे. प्रेंटिस–हॉल

गिडेंस, एंथोनी, 1984, द कंस्टीटयूशन ऑफ़ सोसायटीः आउटलाइन ऑफ़ द थ्योरी ऑफ स्ट्रक्चरेशन, कैम्ब्रिजः पॉलिसी प्रेस

नाइट, जे. (1992) इंस्टीटयूशंस एंड सोशल कॉनफ्लिक्ट, कैम्ब्रिज, एनवाईः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस

टर्नर, जोनाथन, 1997, द इंस्टीटयूशनल ऑर्डर, न्यू यॉर्क, लोंगमेन

वेबेर, एम, (1964) द थ्योरी ऑफ सोशल एंड इकोनॉमिक आर्गेनाइजेशन, न्यू यॉर्क द फ्री प्रेस

इकाई 10 प्रस्थिति और भूमिका

बैंटन, एम. (1965). रोल्सः एन इंटरोडकषण टू द स्टडी ऑफ सोसल रिलेशन्स .लंदनः टैविस्टॉक

गिडेंस, ए और सटन, पीडब्ल्यू (2014). एसेंशिययल्स कोन्सेप्ट्स इन सोसिओलोजी . कैम्ब्रिजः पोलिटि

गोफमैन, ई. (1990).द प्रजेंटेशन ऑफ सेलफ़िन एवरीडे लाइफ.लंदनः पेंगुइन।

इकाई–11 सामाजीकरण

अब्राहम, एम्. फ़. (2014). कंटेम्पररी सोशियोलॉजीः एन इंट्रोडक्शन टू कॉन्सेप्ट्स एंड थेओरीज़, सेकंड एडिशन. ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

गिड्डेन्स, ए. एट अल. (2014). इंट्रोडक्शन टू सोशियोलॉजी, नाइनथ एडिशन. न्यू यॉर्कः डब्लू. डब्लू. नॉर्टन एंड कंपनी.

जॉनसन, एच.एम्. (1960). सोशियोलॉजीः ए सिस्टेमेटिक इंट्रोडक्शन. न्यू यॉर्कः हरकोर्ट, ब्रेस एंड वर्ल्ड.

इकाई 12 संरचना और प्रकार्य

बर्नार्ड, एलन–2000 हिस्टरी एंड थोयरी इन एन्थ्रोपोलॉजी,(कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी–प्रैस)।

गाइल्डनर, झूलिविन डब्लयू (1973) फॉर सोषियोलॉजी, लंदन ऐलेन लेन टर्नर, जोनॉथन, एच (1987) स्ट्रक्चर ऑफ सोषियोलॉजिकल थ्योरी (जयपुर, रावत पब्लिकेशन)।

इकाई 13 सामाजिक नियंत्रण और परिवर्तन

होरटन,पॉल बी एंड चेस्टर एल हंट 1987(1984),सोसिओलोजी. लंदन एतालः मैक ग्रा हिल बुक कं

मुरे, विलबर्ट ई (1987). सोसल चेंज. न्यू दिल्लीः प्रेंटिस हाल ऑफ इंडिया लि.

ओगबर्न विलिअम एफ. 1950(1922). सोसल चेंज. न्यू यॉर्कःविकिंग

ओरेन्स्टिन, डेविड माइकल(1985). द सोसिओलोजिकल क्वेस्टः प्रिंसिपल्स ऑफ सोसिओलोजी. सेंट पॉल, न्यू यॉर्क एटालःवेस्ट पब्लिशिंग कं

टोनीज़, फेर्डिनेंद. 1963(1887). कम्यूनिटी एन सोसायटी. ट्रांस सी पी लुमिस. न्यू यॉर्कः हार्पर एंड रो

शब्दकोष

पूंजीपति– उत्पादन की औद्योगिक प्रणाली में, उत्पादन के साधनों के मालिकों का वर्ग (जैसे पूंजी, यानी धन, संपत्ति, उपकरण इत्यादि) को पूंजीपति कहा जाता है।

सांस्कृतिक सापेक्षता– संस्कृति एक समूह के लिए विषिश्ट है, प्रत्येक समूह को अपनी संस्कृति के अनुसार अध्ययन किया जाना चाहिए।

सांस्कृतिक उत्तरजीविता– सांस्कृतिक तथ्य परिस्थितियों के समूह में अधिक समय तक जीवित रहती है जिनके तहत ये विकसित होती है।

ज्ञानोदय– यह यूरोपीय इतिहास में उस अवधि से सम्बंधित है, जिसमें अट्ठारहवीं शताब्दी के फ्रांसीसी दार्षनिकों के विचारों को चेतना दी। इस अवधि के दौरान एक विश्वास विकसित हुआ की प्रकृति और समाज दोनों का वैज्ञानिक रूप से अद्ययन किया जा सकता है। मानवीय करण और विकास के विचार विकसित हुए।

संपत्ति– 17 वीं–18 वीं शताब्दी के मध्ययुगीन यूरोपीय समाज में स्तरीकरण की व्यवस्था का पालन किया गया, जिसमें समाज को अलग–अलग सामाजिक समूहों में विभाजित किया गया था जिसमें प्रत्येक के लिए कानूनों और सामाजिक स्थिति का एक अलग समूह था।

सामंती–कृषि क्षेत्रों में कार्यकाल की एक अवधि जिसमें एक दास या कृशक मजदूर भूमिपति के लिए कार्य करता है जिसके पास ज़मीन होती है। बदले में भूमिपति मज़दूर की इजाज़त देता है की वो उसकी ज़मीन पर काम करे और रहे।

मानव जाति की मानसिक एकता– एक अवधारणा जो यह मान्यता रखती है कि सभी मनुष्य, विभिन्न संस्कृति या जाति के बावजूद, समान बुनियादी मनोवैज्ञानिक और संज्ञानात्मक सोच रखते।

समूह प्रक्रियाः समाजशास्त्रीय मनोविज्ञान की वह विधि जिससे ये पता लगाया जाता है कि आधारभूत सामाजिक पद्धति सामाजिक संदर्भ में किस प्रकार कार्य करती हैद्य

मनोविज्ञानः मानव व्यवहार के अध्ययन का विज्ञान।

सामाजिक तथ्यः वे सभी नियम, नैतिकताएं, मूल्य, धार्मिक विश्वास, रीति–रिवाज, रस्में, परंपराएं तथा सभी संबंधिक सांस्कृतिक मूल्य जो सामाजिक जीवन को नियंत्रित करते हैंद्य

सामाजिक अंतःक्रियाः एक सैद्धांतिक अवधारणा जिसके द्वारा अध्ययनकर्ता समाज में व्यक्तियों के पारस्परिक संबंधों को उनसे प्राप्त जानकारी (संकेत व भाषा) के आधार पर यथासंभव जान लेता है।

समाजशास्त्रीय कल्पनाः वह योग्यता जिससे यह पता लगता है कि तुम्हारा अतीत अन्य लोगों के अतीत से किस प्रकार सम्बंधित है

सामाजिक मनोविज्ञानः लोगों के विचारों, भावनाओं तथा व्यवहारों का सामाजिक संदर्भ में सिलसिलेवार अध्ययन।

समाजशास्त्रः समाज का सिलसिलेवार अध्ययन।

वेरस्टेहनः जर्मन भाषा का शब्द जिसका अर्थ है गहराई तक समझ जाना।

ऐतिहासिक समाजशास्त्रः यह एक उप–क्षेत्र है जो समाजशास्त्र और इतिहास के बीच प्रतिच्छेदन के परिणामस्वरूप उभरा है। अध्ययन के लिए यह रूचिकर रहा है कि कैसे लोग, समुदाय और समाज समय–समय पर बदलते रहते हैं, कैसे उन्होंने स्वयं को समकालीन आधुनिक समाजों में परिवर्तित किया। इस तरह के अध्ययन के लिए यह ऐतिहासिक तथ्यों पर निर्भर करता है।

इतिहासः आम तौर पर, इतिहास को अतीत के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जाता है। यह लोगों और अतीत की घटनाओं का अध्ययन करता है। यह मानव समाज की पिछली घटनाओं, विकास और वृद्धि का एक कालानुक्रमिक लेखा प्रस्तुत करता है।

सामाजिक इतिहासः सामाजिक इतिहास समाजशास्त्र और इतिहास को करीब लाने वाला एक उप–क्षेत्र है। यह मुख्य रूप से सामाजिक–सांस्कृतिक पहलुओं को परिभाषित करने वाली विशेषताओं के रूप में शामिल करता है। पारिभाषिक शब्द सामाजिक इतिहास, अक्सर ऐतिहासिक समाजशास्त्र शब्द के साथ परस्पर विनिमयशीलता से उपयोग किया जाता है।

राजनीति विज्ञानः इसे आमतौर पर राजनीति के वैज्ञानिक अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जाता है। इस विषय में राजनीति और इसके विभिन्न संस्थानों से संबंधित सरकार, राज्य और राजनीतिक व्यवहार का अध्ययन शामिल है।

राजनीतिक समाजशास्त्रः यह समाजशास्त्र का एक उप–क्षेत्र है जो मुख्य रूप से समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच सकारात्मक संबंधों के परिणामस्वरूप उभरा है। दूसरे शब्दों में, यह समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के बीच का अंतरक्षेत्र है।

राजनीतिक पूंजीः राजनीतिक पूंजी, सद्भावना, विश्वास और प्रतिष्ठा के रूप में, एक प्रतीकात्मक पूंजी है जो मुख्य रूप से राजनीतिक क्षेत्र के भीतर निर्णय लेने, मूल्य और प्रतिष्ठा से संबंधित है। राजनीतिक पूंजी एक उपकरण के रूप में कार्य करती है जो लोगों को राजनीतिक क्षेत्र में अपेक्षित परिणाम प्राप्त करने में मदद करती है। दूसरे शब्दों में, राजनीतिक क्षेत्र जितना बेहतर होगा, राजनीतिक क्षेत्र में प्रभावशाली या प्रतिष्ठा बेहतर हो सकती है।

राजनीतिक समाजीकरणः शब्द एक सामाजिक प्रक्रिया को संदर्भित करते हैं जिससे लोग या समूह राजनीति या राजनीतिक व्यवहार सीखते हैं। यह समाजीकरण वैचारिक रूप से निर्देशित हो भी सकता है और नहीं भी। उदाहरण के लिए, कुछ राजनीतिक दल अपने वैचारिक तर्ज पर अपने कैडरों को या आबादी को प्रशिक्षित करते हैं। हालाँकि, दूसरी ओर नागरिक/मानवाधिकार समूह केवल लोगों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करने का प्रयास करते हैं।

राजनीतिक भूमिकाः सामाजिक रूप से, भूमिका एक सामाजिक रूप से अपेक्षित व्यवहार है। राजनीतिक भूमिका शब्द एक प्रक्रिया को संदर्भित करता है जब किसी व्यक्ति को राजनीतिक क्षेत्र के भीतर प्रदर्शन करने के लिए स्थिति और जिम्मेदारियों के सेट के साथ जोड़ा जाता है। समाज उनसे अपेक्षा करता है कि वे राजनीतिक सीमाओं के निर्धारित दायरे में ही प्रदर्शन करें।

राजनीतिक संस्कृतिः यह शब्द नियमों, परंपराओं, विश्वास प्रणालियों और मूल्यों के एक समूह को संदर्भित करता है जो अनिवार्य रूप से राजनीतिक प्रणाली की ओर उन्मुख होते हैं। प्रत्येक राष्ट्र की अपनी अलग राजनीतिक संस्कृति होती है। शब्द का आधुनिक मूल 1950 के दशक में वापस चला जाता है जब यह लोकप्रिय रूप से इस्तेमाल किया गया था और विषय का हिस्सा बन गया था। इस शब्द का उपयोग हेरडर, टोकेविले और मोंटेस्क्यू के काम में किया जाता है।

ऐनोमी – सामान्य सामाजिक व्यवस्था ढह जाने की स्थिति।

आर्टिफैक्ट्स – मानव निर्मित वस्तुएं जिनकी अपनी सांस्कृतिक पहचान होती है।

सांस्कृतिक अंतराल – वह स्थिति जब संस्कृति के कुछ अवयव दूसरों की तुलना में अधिक तेजी से बदलने लगते हैं।

प्रमुख विचारधारा – वे विचार, विश्वास तथा मूल्य जिन्हें बहुसंख्यक समाज अन्य संस्कृतियों वाले लोगों पर अपनी सामाजिक को पकड़ बनाए रखने के लिए इस्तेमाल करता है।

मेंटिफेक्ट्स– वह तरकीब जिससे कोई संस्कृति अपने विश्वासों व विचारों को पीढ़ी दर पीढ़ी बनाए रखती है।

बहुसंस्कृतिवाद – विभिन्न संस्कृतियों वाले लोगों के एक साथ मिलकर रहने तथा एक दूसरे के सांस्कृतिक मूल्यों के साथ समझदारी व सामंजस्य बनाए रखने की स्थिति।

सलाद बाउल – सलाद से भरा कटोराः विभिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले लोगों का एक साथ मिलकर रहना तथा एक दूसरे के साथ वैसे ही सहज ढंग से व्यवहार करना जिस प्रकार सलाद के विभिन्न घटक करते हैं।

संघः एक विशिष्ट उद्देश्य या सीमित संख्या में उद्देश्यों के लिए एकजुट लोगों का एक समूह; जैसे– सेना, स्कूलआदि।

समुदायः एक स्थायी सामाजिक समूह, जिसका लक्ष्य या उद्देश्य पूर्णता को समाविष्ट करता है।

संस्कृतिः व्यवहार, रीति–रिवाजों, विनियमों आदि की प्रणाली जिसे सामाजिक और सामाजिक रूप से अधिगृहीत किया जाता है।

भूमिकाः सामाजिक जीवन में मानव विभिन्न जिम्मेदारियों को निभाता है, उदाहरण के लिए पति, पत्नी, माता, पुत्र आदि वे विभिन्न भूमिकाएँ हैं।

स्थानीयताः किसी समुदाय का भौतिक आधार।

समूहः दो या दो से अधिक लोगों की गणना करता है जिनके पास एक सार्थक अन्तःक्रिया और सामान्य लक्ष्य हैं।

जेमिनशाफ्टः एक सामान्य परंपरा के भीतर भावना और रिश्तेदारी के मजबूत पारस्परिक बंधन।

जेसल्शाफ्ट : अवैयक्तिक रूप से व्यक्तियों के बीच संपर्क संघ ।

वर्गीकरणः सामाजिक डेटा को विभिन्न श्रेणियों और समूहों में रखने का एक तरीका।

संदर्भ समूहः किसी भी समूह को हमारे निर्णयों और कार्यों के लिए मॉडल या मार्गदर्शक के रूप में स्वीकार किया जाता है।

प्राथमिक और गौण समूहः निकट संबंधों और व्यवहारों वाला एक छोटा समूह प्राथमिक समूह है; जैसे परिवार। शिथिल संबंधों के साथ एक बड़ा समूह, लेकिन सामान्य लक्ष्य द्वितीयक समूह है; जैसे कार्यालय के कर्मचारी।

समूहः कुछ संख्या मे व्यक्ति सदस्यता की साझेदारी और अन्तःक्रिया करते हों।

संस्थाः सामाजिक संबंधो की संगठित व्यवस्था जो कुछ निश्चित सामान्य मूल्य और प्रक्रिया

अपनाए रहती है और समाज की मूल आवश्यकता की प्राप्ति करती है।

स्वैच्छिक संघः कुछ निश्चित प्रकार्य की ओर निर्दिष्ट औपचारिक संगठन जो स्वैच्छिक रूप से प्रवेश करते हैं न कि आरोपित रूप से ।

प्रसारः समूह से समूह तक संस्कृति लक्षणों का प्रसार।

औद्योगिक समाजः एक समाज जिसमें सामान मुख्य रूप से उत्पादन के मशीन–फैक्ट्री विधियों के माध्यम से उत्पादित होते हैं।

खोजः एक नया संयोजन या मौजूदा ज्ञान का एक नया उपयोग।

प्रवासनः लोगों के क्षेत्र में या बाहर स्थानान्तरण।

जनसंख्या परिवर्तनः समाज में लोगों की संख्या में परिवर्तन, या आबादी की विशेषताओं जैसे आयु या लिंग।

प्रगतिः मूल्यों के कुछ सेट के अनुसार सामाजिक या सांस्कृतिक परिवर्तन जिसे वांछनीय माना जाता है।

सामाजिक आंदोलनः परिवर्तन को बढ़ावा देने या विरोध करने के लिए एक सामूहिक कार्य।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY